MAPSY 01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

Psychological Research Methods

मनोवैज्ञानिक शोध विधियाँ

MAPSY 01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

संरक्षक	**अध्यक्ष**
प्रो. अशोक शर्मा	**प्रो. एल.आर. गुर्जर**
कुलपति	निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

संयोजक एवं सदस्य

** **संयोजक**	* **संयोजक**
डॉ. अनिल कुमार जैन	**डॉ. रजनी रंजन सिंह**
सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ	सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

प्रो. (डॉ) एल.आर. गुर्जर	**प्रो. एच. बी. नंदवाना**
निदेशक (अकादमिक)	निदेशक, सतत शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
प्रो. विजयलक्ष्मी चौहान (सेवानिवृत्त)	**प्रो.आशा हिंगर (सेवानिवृत्त)**
मनोविज्ञान विभाग	मनोविज्ञान विभाग
मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर	राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
प्रो. दामीना चौधरी (सेवानिवृत्त)	**डॉ. रजनी रंजन सिंह**
शिक्षा विद्यापीठ	सह आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
डॉ. अनिल कुमार जैन	**डॉ. कीर्ति सिंह**
सह आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा
डॉ. पतंजलि मिश्र	**डॉ. अखिलेश कुमार**
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

*डॉ. रजनी रंजन सिंह ,सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ 13.06.2015 तक
** डॉ. अनिल कुमार जैन, सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ 14.06.2015 से निरन्तर

समन्वयक एवं सम्पादक

समन्वयक
डॉ. अनिल कुमार जैन
सह आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

विषय वस्तु एवं भाषा संबंधीसम्पादन
डॉ. पतंजलि मिश्र
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

इकाई लेखन

1 **डॉ. अखिलेश कुमार (इकाई** 1,2,3)
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

2 **डॉ. अनिल कुमार जैन (इकाई** 4,5,6,10,11,12)
सह आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

3 **डॉ. पतंजलि मिश्र (इकाई** 7,8,9, 16,17,18,19,20)
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

4 **डॉ. रजनी रंजन सिंह**
(इकाई सं. 13,14,15)
सह आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

आभार

प्रो. विनय कुमार पाठक
पूर्व कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. अशोक शर्मा
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

प्रो .एल.आर .गुर्जर
निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

प्रो. करण सिंह
निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

डॉ. सुबोध कुमार
अतिरिक्त निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

उत्पादन 2015, ISBN : 978-81-8496-505-6

इस सामग्री के किसी भी अंश को व.म.खु.वि.वि., कोटा, की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। व.म.खु.वि.वि. , कोटा के लिए कुलसचिव, व.म.खु.वि.वि., कोटा (राजस्थान) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

MAPSY 01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अनुक्रमणिका

इकाई सं.	इकाई का नाम	पेज नं.
1	मनोवैज्ञानिक शोध : अर्थ, परिभाषा एवं विशेषताएं	1
2	मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति एवं उसका क्षेत्र	13
3	मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य	27
4	मौलिक एवं प्रयुक्त अनुसंधान	43
5	प्रयोगात्मक एवं सहसम्बन्धात्मक अनुसंधान	53
6	कार्योत्तर अनुसंधान	75
7	शोध समस्या की परिभाषा एवं शोध समस्या चुनने का आधार	85
8	परिकल्पना का अर्थ एवं प्रकार	97
9	परिकल्पनाओं के स्रोत एवं अच्छी परिकल्पनाओं की विशेषताएँ	110
10	न्यादर्श का अर्थ, अच्छे न्यादर्श की विशेषताएँ, न्यादर्श का आकार, न्यादर्श की विश्वसनीयता	121
11	सम्भाव्य न्यादर्शन	142
12	असम्भाव्य न्यादर्शन	153
13	चर का अर्थ एवं उसके प्रकार	167
14	चरों का नियंत्रण	180
15	मनोवैज्ञानिक परीक्षण का स्वरूप एवं प्रकार	193
16	शोध अभिकल्प का अर्थ एवं उद्देश्य	211
17	अभिकल्प के प्रकार – समूह अन्तर्गत , समूहांतर एवं कारकीय अभिकल्प	225
18	आंकड़ा संग्रहण की तकनीक	236
19	शोध प्रस्ताव तैयार करना	253
20	शोध प्रतिवेदन लेखन	261

इकाई - 1

मनोवैज्ञानिक शोध : अर्थ, परिभाषा एवं विशेषताएं

Psychological Research: Meaning, Definition and Characteristics

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 ज्ञान प्राप्ति की विधियाँ
1.4 वैज्ञानिक विधि
1.5 मनोवैज्ञानिक शोध की परिभाषा एवं अर्थ
1.6 मनोवैज्ञानिक शोध की विशेषताएं
1.7 मनोवैज्ञानिक शोध के सामान्य प्रकार
1.8 इकाई सारांश
1.9 महत्वपूर्ण शब्द एवं पद
1.10 अभ्यास प्रश्न
1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ / अन्य अध्ययन

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

जिज्ञासा का अस्तित्व मानव के अस्तित्व के साथ है। मनुष्य ने जबसे होश संभाला है तभी से उसके मन में स्वयं को तथा उसके चारों ओर प्राकृतिक एवं सामाजिक वातावरण में जो कुछ भी घटित होता है उसको जानने और समझने की प्रबल इच्छा रही है। वह इसके लिये अपने ढंग से कुछ जाँच पड़ताल, एवं किसी वस्तु / घटना की जाँच करने सम्बन्धी चेष्टायें करता रहा है और उसके इन्हीं प्रयासों ने सुव्यवस्थित एवं संगठित ज्ञान के रूप में एक ऐसा भंडार उसके सामने रखा है जिसमें उसे अपने आप से तथा वातावरण से अच्छी तरह समायोजित होकर प्रगतिशील मानव के रूप में जीवन मिला है। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों एवं आयामों में हमें ज्ञान का जो एक काफी बड़ा सुव्यवस्थित एवं संगठित भंडार म्ला है वह उत्तरोत्तर किये गए अनुसंधानों का परिणाम है। मनोविज्ञान के क्षेत्र में जो भी ज्ञान का अथाह भंडार आज हमारे पास है वह हमारे पूर्ववर्ती मनोविज्ञान विशेषज्ञों के द्वारा लगन और मेहनत से किये गए कार्य का परिणाम है। आपके मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि

अनुसंधान वास्तव में है क्या? वर्तमान इकाई में हम मनोवैज्ञानिक अनुसंधान क्या है, उसकी विशेषताएं क्या हैं इसके बारे में जानेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- ज्ञान प्राप्ति की विभिन्न विधियों की चर्चा कर सकेंगे।
- वैज्ञानिक विधि की व्याख्या कर सकेंगे एवं उसकी विशेषताएं बता सकेंगे।
- मनोवैज्ञानिक शोध की परिभाषा एवं अर्थ बता सकेंगे।
- मनोवैज्ञानिक शोध की विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- मनोवैज्ञानिक शोध के सामान्य प्रकारों को बता सकेंगे।
- मनोवैज्ञानिक शोध के चरणों को संक्षेप में बता सकेंगे ।

1.3 ज्ञान प्राप्त करने की विधियाँ

ज्ञान प्राप्त करने की विधियाँ: आप बहुत सारी चीजों के बारे में जानते होंगे। जरा सोचिये कि जिन चीजों/तथ्यों /घटनाओं आदि के बारे में जानते हैं, आपने उन्हें कैसे जाना ? आपको यह कैसे पता चला कि धरती गोल है? आपको यह कैसे पता चला कि यह जून का महीना है? आपको यह कैसे पता चला कि भारत की प्रमुख समस्याओं में एक बेरोजगारी है? कुछ परिस्थितियों में आपका उत्तर होगा पुराने अनुभवों एवं अंतर्ज्ञान से। उदाहरण के लिये इससे पहले जहां आप रहते थे वहां जून के महीने में तापमान ज्यादा होने की वजह से गर्मी अधिक लगती थी। आज की तारीख में आपको याद है कि आप यहीं पर हैं जहां पिछले साल थे। तब आपने निगमानात्मक तर्क (Deductive Reasoning) का प्रयोग करते हुए अपने पिछले अनुभवों से जाना कि यह जून का महीना है।

धरती गोल है , के संदर्भ में संभव है कि आपने सर्वप्रथम यह किसी प्राधिकार/अनुभवी व्यक्ति (Authority) जैसे:माता पिता/शिक्षक आदि से जाना कि धरती गोल है। हो सकता है कि किसी उपग्रह के लिये गये चित्रों अथवा ग्लोब के मॉडल को देखकर (Observation) सर्वप्रथम आपने जाना है कि पृथ्वी गोल है। भारत की प्रमुख वर्तमान समस्याओं में बेरोजगारी एक है इसके बारे में भी आपने किसी विशेषज्ञ से सुनकर, किसी पत्रिका में पढ़कर, टेलिविजन आदि देखकर जाना हो। ये सभी नवीन तथ्यों को जानने के प्राथमिक तरीके हैं: अंतर्ज्ञान (Intuition), निगमन (Deduction), प्राधिकार (Authority) और प्रेक्षण (Observation)।

अब कल्पना कीजिए कि किसी प्राधिकार से आपने यह जाना कि भारत की प्रमुख समस्या बेरोजगारी है परन्तु अपने अनुभवों से आपको लगा कि नहीं यह सूचना पूर्णत: सत्य नहीं है। अब सत्यता की खोज आप कैसे करेंगे? आप एक ऐसी स्थिति की कल्पना भी कर सकते हैं जिनके बारे में

आपको पूर्वानुभव नहीं है। ऐसी परिस्थिति में आपके पास सत्य जानने का क्या सबसे उपयुक्त तरीका हो सकता है? आपका उत्तर होगा 'प्रेक्षण'। आप स्वयं प्रेक्षण करके घटना की सत्यता पता कर सकते हैं। किसी घटना के पीछे की इसी 'सत्यता' को जानने के लिये मनोवैज्ञानिक शोध करते हैं। मनोवैज्ञानिक एक व्यवस्थित ध्यानपूर्वक प्रेक्षण करके यह जानने का प्रयास करते हैं कि प्राप्त ज्ञान अधिकतम स्तर तक सत्य है। वास्तव में यह प्रेक्षण ही है जो विज्ञान को ज्ञान प्राप्ति के अनय तरीको से अलग करता है और यही मनोवैज्ञानिक शोध का आधार है।

1.4 वैज्ञानिक विधि (Scientific Method)

वैज्ञानिक विधि (Scientific Method)

विज्ञान कभी भी कही सुनी अथवा काल्पनिक बातों पर विश्वास करता है। वैज्ञानिक साक्ष्यों के आधार पर ही सत्य तथा असत्य के बीच विभेद करता है। विज्ञान के अनुसार जो सप्रमाण ढंग से सिद्ध किया जा सकता है, जो अनुभवजन्य है, जो तर्क संगत है अथवा जिसका अस्तित्व है वही सत्य है शेष सब कुछ असत्य है। वस्तुत: विज्ञान की पांच प्रमुख विशेषताएं होती है। ये पांच विशेषताएं – वस्तुनिष्ठता (Objectivity), निश्चयात्मकता(Definiteness), सत्यापनयोग्यता (Verifiability), सार्वभौमिकता (Generalizability) तथा पूर्वकथन क्षमता (Predictability) हैं। अनुसंधान प्रक्रिया में जिज्ञासाओं का उत्तर अवलोकन परिकल्पना तथा परीक्षण पर आधारित होना ही है। मनोविज्ञान में शोध अध्ययनों का आरंभिक स्तर है विज्ञान एवं वैज्ञानिक विधि की विभिन्न मान्यताओं को समझना। वैज्ञानिक विधि की प्रारंभिक विशेषता है कि इसमें प्रेक्षण आवश्यक है। मुख्यतः वैज्ञानिक विधि की चार प्रमुख विशेषतायें है:

- अनुभववाद (Empiricism)
- निर्धारणवाद (Determinism)
- सूक्ष्मता एवं सरलता (Parsimony)
- परीक्षणशीलता (Verifiability)

अनुभववाद (Empiricism)

विज्ञान की पहली विशेषता है अनुभववाद। गैलीलियो (1564-1642) से पहले, ज्ञान प्राप्ति के साधनों में मुख्यत: प्राधिकार (Authority) का प्रयोग होता था। अरस्तु एवं प्लेटो सरीखे प्राधिकर (Authority) व्यक्तियों द्वारा विश्व और विश्व के प्रति उनका दृष्टिकोण सत्य मान लिया जाता था। गैलीलियो और उनके समकालीन व्यक्तियों न्यूटन, कोपरनिकस आदि ने बताया कि विश्व के बारे में जानने का सर्वोत्तम तरीका है 'प्रेक्षण'। गैलीलियो ने जब सौर परिवार (Solar System) के बारे में विश्व को बताया वह उनके अपने प्रेक्षण पर आधारित था।

निर्धारणवाद (Determinism) विज्ञान का दूसरा महत्वूर्ण पहलू है। इसकी मान्यता है कि वैश्विक घटनायें प्राकृतिक होती है और उनके स्तरों की पहचान की जा सकती हैं। मनोविज्ञान के संदर्भ में विभिन्न व्यवहारों का अध्ययन करके हम उन कारकों की पहचान कर सकते हैं जिनके कारण से व्यवहार घटित होते हैं। उदाहरण के लिये किसी अवसाद ग्रस्त व्यक्ति के व्यवहारों का प्रेक्षण करके हम जान सकते हैं कि अवसाद के कारण क्या है?

सूक्ष्मता एवं सरलता (Parsimony)

विज्ञान का तीसरा प्रमुख पहलू है। घटनाओं की सरल व्याख्या। प्राय: सरल व्याख्या की सत्यता की संभावना ज्यादा होती है। जटिल व्याख्या तभी दी जानी चाहिए, जब शोध अध्ययनों के द्वारा सरल व्याख्या संभव न हो।

परीक्षणशीलता (Verifiability) वैज्ञानिक विधि सिर्फ उन्हीं घटनाओं /तथ्यों को मानता है कि जिनका प्रेक्षण किया जा सके। यदि किसी अध्ययन द्वारा प्राप्त निष्कर्षों में प्ररीक्षण शीलता न हो तो वह वैज्ञानिक नहीं माना जा सकता। हो सकता है कि परीक्षण के दौरान प्राप्त निष्कर्ष सही पायें जायें या हो सकता है कि गलत पाये जायें।

1.5 मनोवैज्ञानिक अनुसंधानका अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Psychological Research)

मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का अर्थ: अंग्रेजी के शब्द 'Research' की उत्पत्ति आधुनिक फ्रेंच के शब्द 'Recherche' से हुई है जिसका तात्पर्य है 'गहराई से खोजना'। 'Research' का विश्लेषण करें तो पाते हैं कि यह शब्द दो अलग अलग शब्दों 're' तथा 'search' से मिलकर बना है जिसका अर्थ होता है पुन: खोज या कुछ नया जानने का प्रयास अर्थात 'Research' से तात्पर्य उस चेष्टा अथवा प्रक्रिया से है जिसके माध्यम से नवीन ज्ञान की खोज होती है और नवीन जिज्ञासा की तृप्ति होती है। हिंदी भाषा में शोध, अनुसंधान, अन्वेषण आदि शब्द शोध के पर्याय के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। शोध शब्द की उत्पत्ति 'शुध' धातु से हुई है जिसका अर्थ शुद्ध करना, बनाना या रूप देना, त्रुटियों को दूर करना, रहस्य पूर्ण बातों की खोज करना एवं अज्ञात तथ्यों का पता लगाना आदि है। शोध शब्द शुद्धिकरण का सूचक है जो अत्यन्त शुद्धता व यथार्थता के साथ किसी कार्य को करने का भाव प्रतिध्वनित करता है। अपने विस्तृत अर्थ में शोध का अर्थ है किसी भी पदार्थ अथवा तत्त्व की परिशुद्धि करना है। शोध के लिए 'अन्वेषण' शब्द भी प्रयोग किया जाता है जो 'अनु' और 'एषण' शब्द का समन्वय है। 'अनु' का अर्थ है 'अनुगमन या पीछा करना' या 'निरंतरता' और 'एषण' का अर्थ है 'अभिलाषा करना' इस प्रकार अन्वेषण का अर्थ है 'अभिलषित वास्तु का अनुगमन करना' या 'इच्छित वस्तु की प्राप्ति हेतु प्रयत्न करना'। अन्वेषण किसी नवीन वस्तु (जैसे कम्प्यूटर, मुद्रण, कला, शतरंज आदि) को पहली बार प्रस्तुत करने का सूचक होता है। अनुसंधान शब्द के लिए प्राय: गवेषणा जैसे शब्दों का प्रयोग भी किया जाता है। गवेषणा शब्द प्राचीन काल में जंगल से लौटती

गायों के भटक जाने पर उनके खुरों के निशान देख कर खोजने के कार्य के लिए प्रयुक्त किया जाता था एवं कालान्तर में इस शब्द का प्रयोग सप्रमाण व व्यवस्थित ढंग से खोज करने के प्रयास के रूप में होने लगा है। खोज शब्द से अभिप्राय पूर्व में विद्यमान परन्तु मानव जाति या उसके एक अंग के लिए अज्ञात किसी वस्तु अथवा नियम जैसे नये ग्रह या नये सिद्धान्त को प्रस्तुत करने से है । नए अनुसंधानकर्ताओं को इन विभिन्न शब्दों में विभेद के बावजूद इनके अर्थों को इन्हें 'अनुसंधान' के समनार्थक शब्द के रूप में स्वीकार करना उचित होगा । वर्तमान में इन सभी शब्दों का प्रयोग वैज्ञानिक विधि का अनुसरण करके सामान्यीकरण व निष्कर्ष प्राप्त करने की प्रक्रिया के रूप में किया जाता है।

अनुसंधानकी परिभाषा

गंभीरता, गहनता एवं विश्लेषणात्मक ढंग से किसी एक समस्या का आलोचनात्मक अध्ययन करके उसका समाधान खोजना ही अनुसंधान है । यही कारण है कि सुनियोजित ढंग से सूचनाओं को संकलित करने तथा उनका विश्लेषण करके नवीन तथ्यों अथवा सिद्धान्तों की खोज करने का कार्य ही अनुसंधान प्रक्रिया के अन्तर्गत आता है । शोध विशेषज्ञ **पी.वी.यंग (1966)** के अनुसार "अनुसंधान एक ऐसी व्यवस्थित विधि है जिसके द्वारा नवीन तथ्यों को खोजने अथवा पुराने तथ्यों की विषयवस्तु, उनकी क्रमबद्धता, अन्त:सम्बन्ध, कार्य-कारण व्याख्या और उनके निहित नैसर्गिक नियमों के पुष्टिकरण का कार्य किया जाता है"।

(Research may be defined as the systematic method of discovering new facts or verifying the old facts, their sequences, interrelationships, casual explanations and the natural laws which govern them.—Young, 1966)

ब्रूस डब्ल्यू. टकमैन अनुसंधान को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि अनुसंधान से तात्पर्य प्रश्नों का उत्तर प्रदान करने हेतु किये जाने वाले हमारे सुव्यवस्थित प्रयत्नों से है । इसके द्वारा अमूर्त एवं सामान्य उत्तर भी प्राप्त हो सकते हैं जैसा कि आधारभूत अनुसंधान में होता है अथवा इसके द्वारा बहुत ही ठोस और विशिष्ट उत्तर प्राप्त हो सकते हैं जैसा कि प्राय: प्रदर्शनात्मक या अनुप्रयुक्त अनुसंधान में होता है। दोनों ही प्रकार के अनुसंधानों में शोधकर्ता तथ्यों की खोज करता है और इन तथ्यों की व्याख्या करके किसी सामान्यीकरण की सृष्टि करता है।

(Research is a systematic attempt to provide answers to questions. It may yield abstract and general answers, as basic research often does, or it may give extremely concrete and specific answers, as demonstration or applied research often does. In both kinds of research, the investigation uncovers facts and then formulates a generalization based on an interpretation of these facts. – Tuckman, Bruce W., 1999)

जान डब्लू बैस्ट ने अनुसंधान के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा है कि अनुसंधान को नियंत्रित अवलोकनों के ऐसे व्यवस्थित व वस्तुनिष्ठ विश्लेषण एवं प्रलेखन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो सामान्यीकरणों, नियमों अथवा सिद्धान्तों के विकास में सहायक हो।

Research may be defined as the systematic and objective analysis and recording of controlled that may lead to the development of generalizations, principle or theories.

- John W. Best

पी.एम. कुक ने अनुसंधान की विशेषताओं के आधार पर स्पष्ट किया है कि किसी दी गई समस्या के संदर्भ में ईमानदारी, व्यापकता, समझदारी से तथ्यों की खोज करना तथा उनके अर्थ या निहितार्थों को प्रस्तुत करना अनुसंधान है। किसी दिये गये अनुसंधान कार्य के परिणामों व निष्कर्षों को उस अध्ययन के क्षेत्र में ज्ञान में वृद्धि करने वाले प्रमाणिक पुष्टि योग्य योगदान करने वाले होने चाहिए।

Research is an honest, exhaustive, intelligent searching for facts and their meanings or implication with reference to given piece of research should be authentic, verifiable contribution knowledge in the field studied.

- P.M. Cook

एल. वी. रैडमैन तथा ए.वी.एच. मोरी के अनुसार, ''नवीन ज्ञान की प्राप्ति के लिए किये जाने वाले व्यवस्थित प्रयास को हम अनुसंधान कहते हैं।''

'Research is systematic effort to gain new knowledge. – L.V. Redam & A.V.H. Mory

फ्रेड एन. कर्लिंगर के शब्दों में कह सकते हैं कि ''प्राकृतिक घटनाक्रमों के मध्य संभावित संबंधों के बारे में परिकल्पित तर्कवाक्यों की व्यवस्थित, नियंत्रित, अनुभाविक तथा समालोचात्मक जाँच वैज्ञानिक अनुसंधान है"।

Scientific research is a systematic, controlled, empirical, and critical investigation of hypothetical proposition about the presumed relations among natural phenomena.

-FredN. Kerlinger

1.6 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की विशेषताएं (Characteristics of Psychological Research)

अनुसंधान की उपरोक्त परिभाषाओं के सम्यक् अवलोकन से स्पष्ट है कि अनुसंधान किसी अर्थपूर्ण व मौलिक समस्या का समाधान खोजने का एक ऐसा व्यवस्थित, वस्तुनिष्ठ, सोद्देश्य, तर्कसंगत तथा इन्द्रियानुभविक प्रयास है जिसमें वैज्ञानिक विधि का प्रयोग किया जाता है। नि:संदेह यह प्रक्रिया पुनरावृत्ति- योग्य तथा सार्वभौमिक प्रकृति की होती है एवं इससे प्राप्त परिणाम संचरण योग्य होते हैं। वस्तुत: अनुसंधान एक बौद्धिक तथा सृजनात्मक प्रक्रिया का सूचक होता है जिसका संबंध सदैव ही ज्ञान सृजन से रहता है। अनुसंधान की प्रकृति को प्रतिबिम्बित करने वाली इसकी कुछ विशेषतायें निम्नलिखित हैं :

- मनोवैज्ञानिक अनुसंधान सदैव या तो किसी अनुभूत समस्या का समाधान करता है अथवा समाधान करने की ओर प्रवृत्त होता है।
- अनुसंधान में दो या दो से अधिक चरों के बीच विद्यमान संबंध को ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है।
- अनुसंधान का उद्देश्य होता है विश्वसनीय सूचना या नवीन ज्ञान की प्राप्ति अथवा उपलब्ध वर्तमान ज्ञान में बढ़ोतरी करना अथवा उसकी पुष्टि करना।
- अनुसंधान के द्वारा किसी नवीन सामान्यीकृत तथ्य अथवा सिद्धान्त अथवा अनुप्रयोग का विकास करने का प्रयास किया जाता है।
- सामान्यत: यह विशिष्ट वस्तु, घटना या समूह के प्रत्यक्ष अध्ययन से अधिक विस्तृत होता है तथा भावी घटनाक्रम के पूर्वकथन में सहायक होता है।
- अनुसंधान के परिणाम अवलोकित अनुभवों अथवा आनुभविक प्रमाणों पर आधारित होते हैं।
- अनुसंधान कार्य में परिमार्जित मापन के द्वारा प्रदत्त प्राप्त करने की आवश्यकता होती है।
- अनुसंधान कार्य में प्राथमिक स्रोतों से नवीन प्रदत्तों का संकलन तथा विश्लेषण किया जाता है।
- अनुसंधान कार्य सुनियोजित ढंग से सम्पन्न किया जाता है।
- अनुसंधान कार्य को करने में विशेषज्ञता की जरूरत होती है।
- अनुसंधान सदैव वस्तुनिष्ठ तथा तर्कसंगत होता है।
- अनुसंधान धैर्य से युक्त प्रक्रिया है जिसके लिये कई बार अनुसंधानकर्ता में कल्पनाशीलता की भी आवश्यकता होती है।
- अनुसंधान औपचारिक क्रिया होती है।

- अनुसंधान में गहन अध्ययन किया जाता है।
- अनुसंधान कार्य को सावधानी से लिखा तथा प्रस्तुत किया जाता है।
- अनुसंधान कार्य में कभी कभी साहस की आवश्यकता होती है।
- अनुसंधान कार्य की पुनरावृत्ति की जा सकती है।
- विषय विशेष के सैद्धान्तिक ज्ञान में वृद्धि करना।
- इस अनुसंधान से उपलब्ध नवीन ज्ञान का शोधकर्ता अथवा अन्य व्यक्तियों के द्वारा उचित उपयोग करना।

1.7 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के प्रकार (Types of Psychological Research)

मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों को कुछ प्रकारों में बांटकर अध्ययन करना एक कठिन कार्य है। अनुसंधानों को विभिन्न मानदंडों के आधारों पर कई प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है। विभिन्न विद्वानों ने मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के विभिन्न वर्गीकरण सुझाये हैं परन्तु इन सभी वर्गीकरणों के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का कोई सर्वमान्य वर्गीकरण प्रस्तुत करना एक कठिन कार्य है। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के कुछ प्रमुख वर्गीकरण निम्नांकित हैं-

- मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का उपयोगिता के आधार पर वर्गीकरण
- मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का प्रयुक्त उपागमों के आधार पर वर्गीकरण
- नियंत्रण एवं चरों में परिवर्तन के आधार पर वर्गीकरण
- अध्ययन की प्रकृति के आधार पर वर्गीकरण

अनुसंधान कार्य के उद्देश्यों के आधार पर अनुसंधान को निम्नांकित तीन प्रमुख प्रकारों से बांटा जा सकता है:

1. **मौलिक अनुसंधान (Fundamental Research)**
2. **अनुप्रयुक्त अनुसंधान (Applied Research)**
3. **क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research)**

1. **मौलिक अनुसंधान (Fundamental Research)** इन्हें मूल अनुसंधान अथवा विशुद्ध अनुसंधान भी कहा जाता है तथा इस प्रकार के अनुसंधान कार्यों के द्वारा नवीन ज्ञान अर्थात नवीन सिद्धान्तों, नवीन तथ्यों अथवा नवीन सत्यों को प्रतिपादित किया जाता है।

2. **अनुप्रयुक्त अनुसंधान (Applied Research)** इस प्रकार के अनुसंधान कार्यों के द्वारा पूर्व में ज्ञान सिद्धान्तों, तथ्यों अथवा सत्यों का प्रयोग करके किसी उपयोगी वस्तु या उपयोगी प्रक्रिया का विकास किया जाता है। प्रयुक्त अनुसंधान को वस्तुत: मौलिक अनुसंधान के परिणामों का व्यावहारिक परिस्थितियों में अनुप्रयोग कहा जा सकता है।
3. **क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research)** इस प्रकार के अनुसंधान कार्यों में तात्कालिक व स्थानीय प्रकृति की समस्याओं का समाधान वैज्ञानिक ढंग से खोजने का प्रयास किया जाता है। कुछ विद्वानों क्रियात्मक अनुसंधान को वास्तविक अनुसंधान के रूप में स्वीकार नहीं करते हैं।

प्रयुक्त अनुसंधान उपागमों के आधार पर मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों का वर्गीकरण (Classification according to Research Approach) :- अनुंसधान कार्यों में प्रयुक्त की जा रही उपागम के आधार पर अनुसंधानों को अंग्राकित तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है:

1. **गुणात्मक अनुसंधान(Qualitative Research)**
2. **मात्रात्मक अनुसंधान(Quantitative Research**
3. **मिश्रित विधि अनुसंधान(Mixed Methods Research)**

1. **गुणात्मक अनुसंधान(Qualitative Research)** - गुणात्मक अनुसंधान के क्रिया-कलाप गुणात्मक घटनाक्रमों (Qualitative Phenomenon) पर केन्द्रित रहते हैं।
2. **मात्रात्मक अनुसंधान(Quantitative Research)** - मात्रात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत मात्रात्मक प्रकार से मापित हो सकने वाली घटनाओं का अध्ययन किया जाता है।
3. **मिश्रित विधि अनुसंधान (Mixed Methods Research)** मिश्रित विधि अनुसंधान **(Mixed** Methods Research) गुणात्मक एवं मात्रात्मक विधियों का उपयुक्त समावेश कर अनुसंधान किया जाता है। यह विधि आज कल बहुत लोकप्रिय है क्योंकि यह विधि मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों विधियों को एक दूसरे के पूरक के रूप में प्रयोग कर्ता है।

नियंत्रण एवं चरों में परिवर्तन के आधार पर वर्गीकरण

1. प्रयोगात्मक अनुसंधान (Experimental Research)
2. अप्रयोगात्मक अनुसंधान (Non-Experimental Research)
3. एक्स पोस्ट फैक्टो अनुसंधान (Ex-Post Facto Research)

1. **प्रयोगात्मक अनुसंधान (Experimental Research)**: इस प्रकार के अनुसंधानों में प्रयोगात्मक विधि का प्रयोग किया जाता है। प्रयोगात्मक अनुसंधान में अध्ययन के अंतर्गत न आने वाले चरों को नियंत्रित रख कर कुछ चरों में

परिवर्तन करके उसका प्रभाव अन्य चरों पर देखा जाता है। जिस चर में परिवर्तन किया जाता है उसे स्वतंत्र चर कहते हैं और जिस चर पर प्रभाव देखा जाता है उसे आश्रित चर कहते हैं।

2. **अप्रयोगात्मक अनुसंधान (Non-Experimental Research)**: वे अनुसंधान जिसका उद्देश्य कारण एवं प्रभाव नहीं हो तथा जिसमें हम चरों में कोई परिवर्तन नहीं कर रहे हों वैसे अनुसंधान को अप्रयोगात्मक अनुसंधान कहते हैं।
3. **एक्स पोस्ट फैक्टो अनुसंधान (Ex-Post Facto Research):** एक्स पोस्ट फैक्टो अनुसंधान का अर्थ है किसी घटना के घटित होने के बाद उसका अध्ययन करना। इसमें नियंत्रण का आभाव होता है तथा इसमें चरों में परिवर्तन नहीं कर सकते हैं।

अध्ययन की प्रकृति के आधार पर वर्गीकरण:- प्रकृति के आधार पर मनोवैज्ञानिक अनुसंधान को तीन भागों में बांटा जा सकता है :

1. वर्णनात्मक अनुसंधान (Descriptive Research)
2. व्याख्यात्मक अनुसंधान (Explanatory Research)
3. अन्वेषणात्मक / खोजी अनुसंधान (Exploratory Research)

1. **वर्णनात्मक अनुसंधान (Descriptive Research)** - वर्णात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत किसी घटना की वास्तविक स्थिति का यथावत वर्णन करना अपेक्षित होता है । सर्वेक्षण घटनोत्तर, अध्ययन तथा एकल अध्ययन इस प्रकार के अनुसंधान के कुछ उदाहरण है।
2. **व्याख्यात्मक अनुसंधान (Explanatory Research)** व्याख्यात्मक अनुसंधान का उद्देश्य उपलब्ध तथ्यों, सूचनाओं या साक्ष्यों आदि का विश्लेषण करके उनका आलोचनात्मक मूल्यांकन करना होता है। इस प्रकार के अनुसंधान कार्य प्राय: वर्णनात्मक अनुसंधान से अधिक गहन सारर्भित तथा विस्तारित होते है।
3. **अन्वेषणात्मक / खोजी अनुसंधान (Exploratory Research)** अन्वेषणात्मक अनुसंधान का उद्देश्य किसी नए सत्य की खोज /उदघाटन करना है। अनुसंधान के प्रकारों का यहाँ संक्षिप्त विवरण दिया गया है जिनका विस्तृत अध्ययन आप आगे की इकाई में करेंगे।

1.8 इकाई सारांश

नवीन तथ्यों को जानने के प्राथमिक तरीके हैं: अंतर्ज्ञान (Intuition), निगमन (Deduction), प्राधिकार (Authority) और प्रेक्षण (Observation)। विज्ञान की पांच प्रमुख विशेषताएं होती है:ये हैं वस्तुनिष्ठता, निश्चयात्मकता, सत्यापन शीलता, सार्वभौमिकता तथा पूर्वानुमान है । गंभीरता, गहनता एवं विश्लेषणात्मक ढंग से किसी एक समस्या का आलोचनात्मक अध्ययन करके उसका समाधान खोजना ही अनुसंधान है। अनुसंधान सदैव वस्तुनिष्ठ तथा तर्कसंगत होता है। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान एक धैर्य से युक्त प्रक्रिया है जिसके लिये कई बार अनुसंधान कर्ता में कल्पनाशीलता की भी आवश्यकता होती है । यह एक औपचारिक क्रिया होती है जिसमें किसी विषय का गहन अध्ययन किया जाता है और इसे अनुसंधान सावधानी से लिखा तथा प्रस्तुत किया जाता है । अनुसंधान कार्य की पुनरावृत्ति की जा सकती है । मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य है मनोविज्ञान के ज्ञान कोष में वृद्धि करना, विश्वसनीय सूचना या नवीन ज्ञान की प्राप्ति अथवा उपलब्ध वर्तमान ज्ञान में बढ़ोतरी करना अथवा उसकी पुष्टि करना। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान सदैव या तो किसी अनुभूत समस्या का समाधान करता है अथवा समाधान करने की ओर प्रवृत्त होता है ।मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में दो या दो से अधिक चरों के बीच विद्यमान संबंध को भी ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है। सामान्यत: मनोवैज्ञानिक अनुसंधान विशिष्ट वस्तु, घटना या समूह के प्रत्यक्ष अध्ययन से अधिक विस्तृत होता है तथा भावी घटनाक्रम के पूर्वकथन में सहायक होता है एवं इसके परिणाम अवलोकित अनुभवों अथवा आनुभविक प्रमाणों पर आधारित होते हैं । मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में सामान्यतः प्राथमिक स्रोतों से नवीन प्रदत्तों का संकलन तथा विश्लेषण किया जाता है, सुनियोजित ढंग से सम्पन्न किया जाता है एवं उसे करने में विशेषज्ञता की जरूरत होती है। अनुसंधान कार्य के उद्देश्यों के आधार पर अनुसंधान को मौलिक अनुसंधान (Fundamental Research), अनुप्रयुक्त अनुसंधान (Applied Research) एवं क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research) नाम के तीन प्रमुख प्रकारों से बांटा जा सकता है जबकि प्रयुक्त अनुसंधान उपगामों के आधार पर अनुसंधानों को गुणात्मक अनुसंधान (Qualitative Research), मात्रात्मक अनुसंधान (Quantitative Research) एवं मिश्रित विधि अनुसंधान (Mixed Methods Research) में विभक्त किया जा सकता है। नियंत्रण एवं चरों में परिवर्तन के आधार पर अनुसंधान को प्रयोगात्मक अनुसंधान (Experimental Research), अप्रयोगात्मक अनुसंधान (Non-Experimental Research) एवं एक्स पोस्ट फैक्टो अनुसंधान (Ex-Post Facto Research) में विभक्त किया जा सकता है जबकि अध्ययन की प्रकृति के आधार मनोवैज्ञानिक अनुसंधान को वर्णनात्मक अनुसंधान (Descriptive Research), व्याख्यात्मक अनुसंधान (Explanatory Research) एवं अन्वेषणात्मक / खोजी अनुसंधान (Exploratory Research) में विभक्त किया जा सकता है।

1.9 अभ्यास प्रश्न

1. मनोवैज्ञानिक अनुसंधान क्या है? मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की विशेषताओं का वर्णन करें।
2. वैज्ञानिक विधि की विशेषताएं क्या क्या हैं ?
3. ज्ञान प्राप्ति की विभिन्न विधियों की सोदाहरण चर्चा करें।
4. अनुसंधान के विभिन्न प्रकारों को बताएं।

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ / अन्य अध्ययन

- Aahuja, R. (2006). Research Methodology, Rawat Publishers, New Delhi.
- Best, J.W. & Kahn, J.V., (2008) Research Methodology in Education, Prentice Hall of India, New Delhi.
- Garret H.E., (2005). Statistics in Psychology & Education, Paragon International Publisher, New Delhi.
- Gupta, S.P., (2013). अनुसंधान दिग्दर्शिका, Sharda Prakashan, Allahabad.
- Kaul, L. (2009) Methodology of Educational Research, Vikas Publications, New Delhi.
- Kerlinger, F.N., (2012). 'Foundations of Behavioural Research', Surjeet Publications, New Delhi.
- Kothari, C.R., (2008).Research Methodology: Methods and Techniques, New Age International, New Delhi.
- Kumar, A., (2006) Measurement and Evaluation in Research and Statistics, Bharti Bhawan, Patna, Bihar.
- Ranjit, K. (2011). Research Methodology: A Step by Step Guide for Beginners, Sage Publications.

इकाई - 2

मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति एवं उसका क्षेत्र

Nature and Scope of Psychological Research

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति

2.4 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का क्षेत्र

2.5 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के आधुनिक क्षेत्र

2.6 इकाई सारांश

2.7 अभ्यास प्रश्न

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ / अन्य अध्ययन

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

आपने पिछली इकाई में मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की परिभाषाओं एवं उसकी विभिन्न विशेषताओं के बारे में पढ़ा। आपने जाना कि गंभीरता, गहनता एवं विश्लेषणात्मक ढंग से किसी एक समस्या का आलोचनात्मक अध्ययन करके उसका समाधान खोजना ही अनुसंधान है जो सदैव वस्तुनिष्ठ तथा तर्कसंगत होता है। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान एक धैर्य युक्त प्रक्रिया है जिसके लिये कई बार अनुसंधानकर्ता में कल्पनाशीलता की भी आवश्यकता होती है। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य है मनोविज्ञान के ज्ञान कोष में वृद्धि करना, विश्वसनीय सूचना या नवीन ज्ञान की प्राप्ति अथवा उपलब्ध वर्तमान ज्ञान में बढ़ोतरी करना अथवा उसकी पुष्टि करना। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान सदैव या तो किसी अनुभूत समस्या का समाधान करता है अथवा समाधान करने की ओर प्रवृत्त होता है। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में दो या दो से अधिक चरों के बीच विद्यमान संबंध को भी ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है। सामान्यत: मनोवैज्ञानिक अनुसंधान विशिष्ट वस्तु, घटना या समूह के प्रत्यक्ष अध्ययन से अधिक विस्तृत होता है तथा भावी घटनाक्रम के पूर्वकथन में सहायक होता है एवं इसके परिणाम अवलोकित अनुभवों अथवा आनुभविक प्रमाणों पर आधारित होते हैं। इस इकाई में हम मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति एवं उसके विस्तार क्षेत्र के बारे में जानने का प्रयास करेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे |
- मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्रों के बारे में बता सकेंगे |
- मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के आधुनिक क्षेत्रों की व्याख्या कर सकेंगे |

2.3 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति (Nature of Psychological Research)

मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति(Nature of Psychological Research):निम्नांकित आरेख मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति को प्रदर्शित करता है जिनका विस्तृत विवरण आगे के पृष्ठों में दिया गया है।

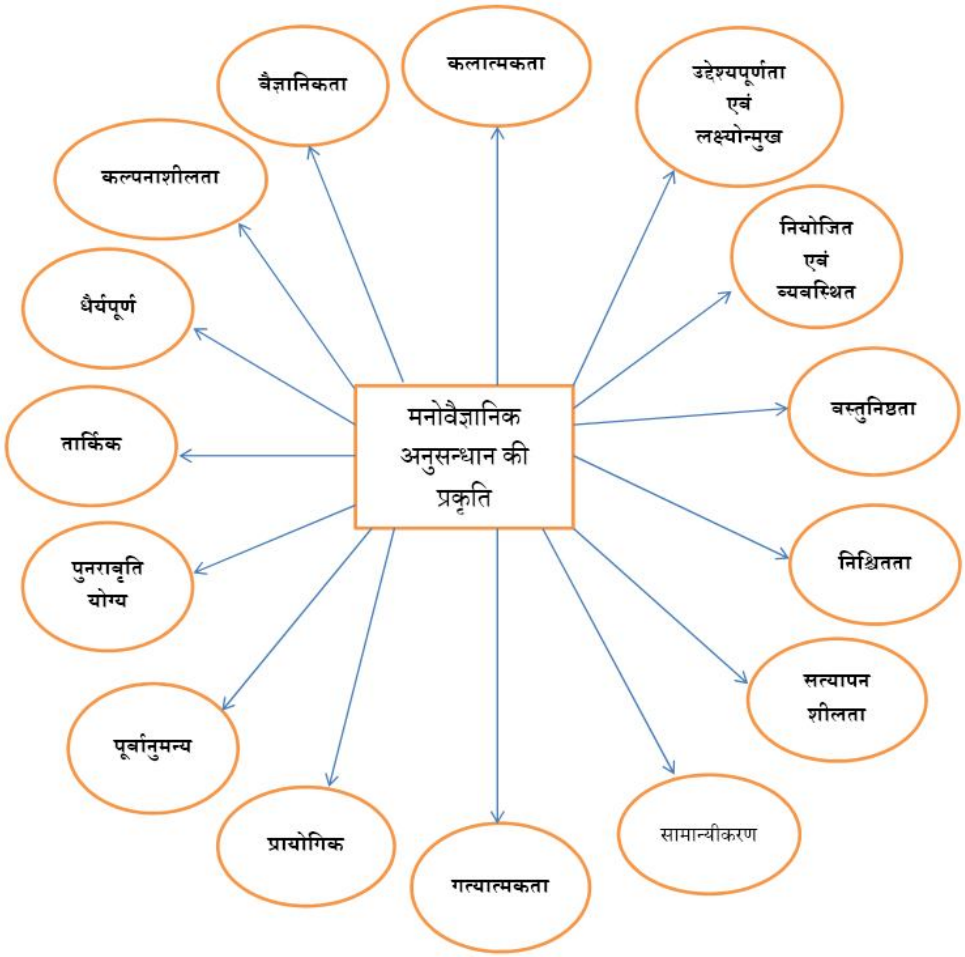

वैज्ञानिकता (Scientific): जैसा कि आपने पिछली इकाई में देखा कि मनोवैज्ञानिक अनुसंधान किसी मानक विज्ञान की तरह वस्तुनिष्ठ विधिओं का प्रयोग करके तार्किक आधार पर उपयुक्त नियंत्रण के साथ अपने निष्कर्षों तक पहुँचता है । वस्तुनिष्ठता, तार्किकता एवं अपनी

सार्वभौमिकता के कारण यह कहा जा सकता है कि मनोवैज्ञानिक अध्ययन की प्रकृति में वैज्ञानिकता समाहित हैं ।

- **कलात्मकता (Artistic);** जिस प्रकार एक कलाकार अपनी कला के प्रदर्शन से पूर्व उसकी विस्तृत योजना बनाता है, उसके प्रत्येक चरण का एक खाका तैयार करता है, कला प्रदर्शन के लिए आवश्यक विशेष प्रत्येक उपकरण को एकत्र करता है और उसका पूर्वाभ्यास करता है; ठीक उसी प्रकार एक मनोवैज्ञानिक अनुसंधानकर्ता अनुसंधान के पूर्व उसके प्रत्येक चरण की एक विस्तृत योजना बनाता है, सूचना संग्रहण हेतु सभी उपकरणों को एकत्र करता है और अनुसंधान के पूर्व उसका पूर्वाभ्यास (Pilot Study) भी करता है। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की ये विशेषताएं उसकी कलात्मक प्रकृति की और संकेत करती हैं।
- **उद्देश्यपूर्णता एवं लक्ष्योन्मुखता (Purposefulness & Goal Directedness):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान उद्देश्य विहीन नहीं होती बल्कि उसका स्पष्ट लक्ष्य होता है जो उसके उद्देश्य कथन में परिलक्षित होता है। अनुसंधान कर्ता उन उदेश्यों की प्राप्ति को ध्यान में रखकर ही आगे की योजना बनाता है अर्थात अनुसंधानकर्ता की सारी अनुसंधान क्रियाएं निर्धारित उदेश्यों के इर्द-गिर्द उनकी प्राप्ति के लिए उन्मुख होती है । एक अनुसंधानकर्ता अपनी न्यादर्शन योजना, अपने अनुसंधान की विधियाँ, अनुसंधान के उपकरण आदि अपने निर्धारित उद्देश्यों को ध्यान में रख कर ही बनाता है जो इस बात का द्योतक है कि उद्देश्यपूर्णता एवं लक्ष्योन्मुखता मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति है।
- **नियोजित एवं व्यवस्थित (Organized & Systematic):** आकस्मिक रूप से संग्रहित आधार सामग्री आम तौर पर अपूर्ण होती है जिस से अविश्वसनीय निर्णय एवं निष्कर्ष निकलते हैं । मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में आधार सामग्री संकलन की प्रक्रिया आकस्मिक न होकर नियोजित एवं व्यवस्थित होती है। तात्पर्य यह है कि मनोवैज्ञानिक अनुसंधान आरम्भ करने के पूर्व अनुसंधान कर्ता उसकी पूरी विस्तृत योजना बनाता है कि उसके अनुसंधान के उद्देश्य क्या हैं उसकी विधि क्या होगी, उस अनुसंधान का विस्तार कहाँ तक होगा उसमे न्यादर्श (Sample) क्या होगा आदि इसके साथ ही अनुसंधान से पूर्व अनुसंधान कर्ता यह भी तय करता है कि उसके अनुसंधान हेतु सूचना संग्रहण के लिए कौन कौन से उपकरण प्रयोग किये जायेंगे ताकि निकाले गए निष्कर्ष विश्वसनीय हो।
- **वस्तुनिष्ठता(Objectivity):** वस्तुनिष्ठता का सामान्य अर्थ है सभी पूर्वाग्रहों और निहित स्वार्थों से मुक्ति। इसका अर्थ है कि अनुसंधान, अनुसंधानकर्ता के मूल्यों, विश्वासों और वरीयताओं से हर संभव अप्रभावित है और वह तथ्यों को वैसे ही देखें और वर्णन करें जैसे वे हैं या जैसा वे देखने में समर्थ हैं न कि जैसे अनुसंधानकर्ता उन्हें देखना चाहे। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का प्रथम शर्त अनुसंधानकर्ता का अपनी भावनाओं, पूर्वाग्रहों और आवश्यकताओं से असंलग्न रहता है। अपनी इच्छाओं, हितों व मूल्यों के कारण तथ्यों को एक विशिष्ट दृष्टिकोण से देखने की अचेतन प्रवृत्ति को पूर्वाग्रह कहते हैं । उदाहरणार्थ,

विद्यालय स्तर पर बच्चों में बढती आक्रामकता के लिए कुछ लोग दूरदर्शन को एक कारण मान सकते हैं तो वहीं कुछ अन्य घर के वातावरण एवं माता पिता के बच्चों के प्रति व्यवहार को इसके लिए जिम्मेदार मान सकते हैं। कुछ लोग आज की तीव्र भौतिकवादी प्रवृति को भी इसका एक कारण मान सकते हैं। एक अनुसंधानकर्ता जो इसे वस्तुपरक दृष्टि से देखना चाहता है , वह छात्रों, अभिभावकों, प्रशासकों आदि के सभी विचार और तथ्य प्रस्तुत करेगा और उनका पक्षपात रहित विश्लेषण करके एक संतुलित निष्कर्ष पर पहुंचेगा। श्रीमदभगवत गीता के श्लोक 'कर्मण्येवाधिकारस्ते माँ फलेषु कदाचन / माँ कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सन्गोअस्तविकर्मणि' का अनुसरण करते हुए अनुसंधान के प्रति पूर्वाग्रह ग्रस्त न होते हुए न तो वह जानबूझकर कुछ तथ्यों की अनदेखी करने का प्रयत्न करेगा और न ही उसका विवरण उसके पूर्वाग्रहों पर आधारित होगा बल्कि वह प्राप्त तथ्यों पर जोर देगा और उनके विश्लेषण के आधार पर निर्णय लेगा। वह जो सूचना एकत्र करेगा वह एक वस्तुपरक अनुसंधानकर्ता होने के नाते संग्रहित तथ्यों के विश्लेषण पर आधारित होगा न कि उसके निहित स्वार्थों एवं पूर्वाग्रहों पर।

- **निश्चितता (Definiteness):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का एक निश्चित लक्ष्य होता है, जिसे प्राप्त करने के लिए अनुसंधान कर्ता एक निश्चित समय सीमा में , एक निश्चित दिशा में, पूर्व निर्धारित उपकरणों का प्रयोग करते हुए पूरा करता है यह कोई अनिश्चित अथवा अनंत काल तक चलने वाली प्रक्रिया नहीं है।
- **सत्यापनशीलता (Verifiability):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान साक्ष्यों एवं तथ्यात्मक अवलोकन पर निर्भर है जिन्हें अन्य अवलोकनार्थी देख सकें व परीक्षण कर सकें। यदि मनोवैज्ञानिक अनुसंधान परीक्षण योग्य न हो तो वह वास्तव में मनोवैज्ञानिक अनुसंधान नहीं है।
- **सामान्यीकरण (Generalization):** सामान्यीकरण का सामान्य अर्थ है **'एक छोटे समूह पर किये गए अध्ययन के आधार पर वैश्विक निष्कर्ष निकालना'** । एक मनोवैज्ञानिक एक अपेक्षाकृत छोटे समूह पर अपना अनुसंधान करता है और उसके निष्कर्षों के आधार पर सामान गुणों वाली एक बड़ी जनसंख्या पर निष्कर्षों का समन्यिकारने का प्रयास कर्ता है। सामान्यीकरण का गुण ही किसी मनोवैज्ञानिक अनुसंधान को महत्त्वपूर्ण बनाता है।
- **पूर्वानुमन्य (Predictability):**एक मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में पूर्वानुमान की प्रवृति होती है विगत शोधों और एक छोटे सैम्पल पर संकलित आंकड़ों के आधार पर अनुसंधानकर्ता एक बड़ी जनसँख्या के गुणों का पूर्वानुमान करता है ।
- **गत्यात्मकता (Dynamism);** एक मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में प्रयुक्त विधियों पर यदि दृष्टिपात करें तो हमें प्राप्त होता है किसमय के साथ साथ मनोवैज्ञानिक अध्ययन की विधियाँ भी परिवर्त्तित होती रही हैं। अंतर्दर्शन से लेकर प्रायोगिक अध्ययन तक। कहने का तात्पर्य यह है कि मनोवैज्ञानिक अनुसंधान एक गतिशील विज्ञान है क्योंकि इसकी प्रक्रिया एवं अध्ययन विधियों में समयानुकूल परिवर्तन होते रहे हैं।

- **प्रायोगिक (Empirical):**एक मनोवैज्ञानिक अनुसंधान प्रायोगिक प्रकृति का होता है क्योंकि इसमें अन्य विज्ञान विषयों की तरह ही एक अनुसंधानकर्ता दो चरों के बीच के संबंधों का अध्ययन करता है और अपने अध्ययन के क्रम में उन सभी अन्य चरों को नियंत्रित रखने का अधिकतम प्रयास करता है जो उसके अध्ययन का भाग नहीं हैं परन्तु उसे प्रभावित कर सकते हैं। इस प्रकार नियंत्रण रखते हुए एक मनोवैज्ञानिक क्लिष्ट संखियिकीय विधियों का प्रयोग करते हुए अपने निष्कर्ष तक पहुँचता है। नियंत्रित अध्ययन का यह गुण मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों की प्रायोगिक प्रकृति की ओर इंगित करता है ।
- **पुनरावृति योग्य (Replicable):** एक मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पुनरावृति योग्य होता है अर्थात यदि कोई अन्य अनुसंधानकर्ता पूर्व में किये गए किसी मनोवैज्ञानिक अनुसंधान को समान परिस्थतियों एवं समान सैंपल पर सामान विधियों का प्रयोग करके पूरा करता है तो उसे सामान परिणाम प्राप्त होंगे जैसा कि मानक विज्ञान में होता है। किसी भी अनुसंधान की सत्यापनशीलता इस बात का द्योतक है कि वह पुनरावृति योग्य है ।
- **तार्किक (Logical):** एक मनोवैज्ञानिक अनुसंधानकर्ता अनुसंधान उपकरणों द्वारा प्राप्त सूचनाओं एवं तथ्यों के आधार पर तर्कपूर्ण तरीके से तथ्यों की कड़ियाँ जोड़कर आपना निष्कर्ष निकलता है। वह कोई भी निष्कर्ष क्रमिक तर्कों के आधार पर ही निकलता है जैसे हिंसात्मक फिल्मों के कारण बच्चों में आक्रामकता के अध्ययन में एक मनोवैज्ञानिक आक्रामकता के मापन के स्केल पर बच्चों का परीक्षण करके उसपर प्राप्त अंकों के आधार पर यह तथ्य प्रस्तुत करेगा कि बच्चों में हिंसा बढ़ी है अथवा नहीं कोई भी ऐसा निष्कर्ष तथ्यपरक एवं तर्कपूर्ण होने पर ही मनोवैज्ञानिक अनुसंधान को स्वीकार्य है जो उसका सौंदर्य है।
- **धैर्यपूर्ण (Require patience):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान कोई क्षणिक प्रक्रिया नहीं बल्कि यह एक सतत प्रक्रिया है जिसमें कई बार असीम धैर्य की आवश्यकता होती है। वह असीम धैर्य अनुसंधान के प्रत्येक चरण पर आवश्यक है चाहे वह अनुसंधान के उदेश्यों का निर्धारण हो,सम्बंधित साहित्य का अध्ययन हो, अनुसंधान विधि का विकास हो अथवा सूचना संकलन प्रत्येक चरण पर एक अनुसंधानकर्ता को धैर्य एवं निरंतर प्रयास की आवश्यकता पड़ती है और यदि एक मनोवैज्ञानिक अनुसंधान धैर्य पूर्वक न किया गया हो तो बहुत संभव है कि प्राप्त निष्कर्ष संदिग्ध हो। उदाहरण के लिए सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक ने अपनी दोनों पुत्रियों का वर्षों तक अध्ययन करने के बाद संज्ञानात्मक विकास के सिद्धांतों का प्रतिपादन कर पाए जो वर्तमान में संज्ञानात्मक मनोविज्ञान का आधार है।
- **कल्पनाशीलता (Imagination & Insight):** मनोवैज्ञानिक अनुसन्धानों में कई बार कल्पनाशीलता एवं अंतर्ज्ञान/अंतर्दृष्टि की आवश्यकता भी होती है। अनुसंधान का उद्देश्य होता है सम्बंधित विषय के ज्ञानकोष में वृद्धि और यह वृद्धि और यह तभी हो सकती है जब अनुसंधानकर्ता उसमे कुछ नया ज्ञान जोड़े। निस्संदेह इस नए ज्ञान के लिए कल्पनाशीलता एवं अंतर्दृष्टि का होना अत्यंत आवश्यक है जिसके बिना नवीन ज्ञान का सृजन संभव नहीं है।

- **आनुभविक (Experiential):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान सजीवों (मानव अथवा जीव जंतुओं) पर किये जाते हैं अतः कई बार पूर्वानुभवों पर आधारित होते हैं और पूर्वानुभवों के आधार पर नवीन चरों के बीच के संबंधों की कल्पना की जाती है और तदनुसार अनुसंधान की योजना बनायी जाती है। इवान पावलोव का शास्त्रीय अनुबंधन का सिद्धांत इसका अच्छा उदाहरण है। रूसी वैज्ञानिक इवान पावलोव वस्तुतः लार का पाचन तंत्र पर प्रभाव का अध्ययन कर रहे थे जिसके क्रम में प्राप्त अनुभवों के आधार पर उन्होंने क्लासिकल अनुबंधन का सिद्धांत प्रतिपादित किया जो मनोविज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत है।

2.4 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का कार्य क्षेत्र (Scope of Psychological Research)

21वीं शताब्दी मनोविज्ञान की शताब्दी है यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है। मानव की समस्त क्रियाएं उसके मानस से प्रभावित होती हैं और इस कारण मानव की प्रत्येक क्रियाएं मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का क्षेत्र हो सकती हैं। मनोविज्ञान के क्षेत्र मे नित्य नयी नयी संभावनाएं उभर रही हैं वास्तव में मनोविज्ञान एक युवा मनोविज्ञान है जिसमें अनुसंधान की असीम संभावनाएं हैं मनोविज्ञान के प्रत्येक कार्य क्षेत्र में अनुसंधान की व्यापक आवश्यकता है। यहाँ पर हम कुछ प्रमुख कार्य क्षेत्रों की संक्षिप्त चर्चा करेंगे।

मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के प्रमुख कार्यक्षेत्र निम्नांकित हैं:

- शिक्षा मनोविज्ञान (Educational Psychology)
- परामर्श मनोविज्ञान (Counselling Psychology)
- मनोस्नायु विज्ञान (Neuro-Psychology)
- मानव संसाधन प्रबंध(Human Resource Management)
- संज्ञात्मक मनोविज्ञान (Cognitive Psychology)
- व्यक्तित्व मनोविज्ञान (Personality Psychology)
- अपराध मनोविज्ञान (Criminal Psychology)
- मनोचिकित्सा (Psychiatry)
- विकासात्मक मनोविज्ञान (Developmental Psychology)
- मानव प्रयोगात्मक मनोविज्ञान (Experimental Psychology)
- शरीर क्रियात्मक मनोविज्ञान(Physiological Psychology)
- समाज मनोविज्ञान (Social Psychology)
- असामान्य मनोविज्ञान (Abnormal Psychology)

- पशु मनोविज्ञान (Animal Psychology)
- समूह मनोविज्ञान (Group Psychology)

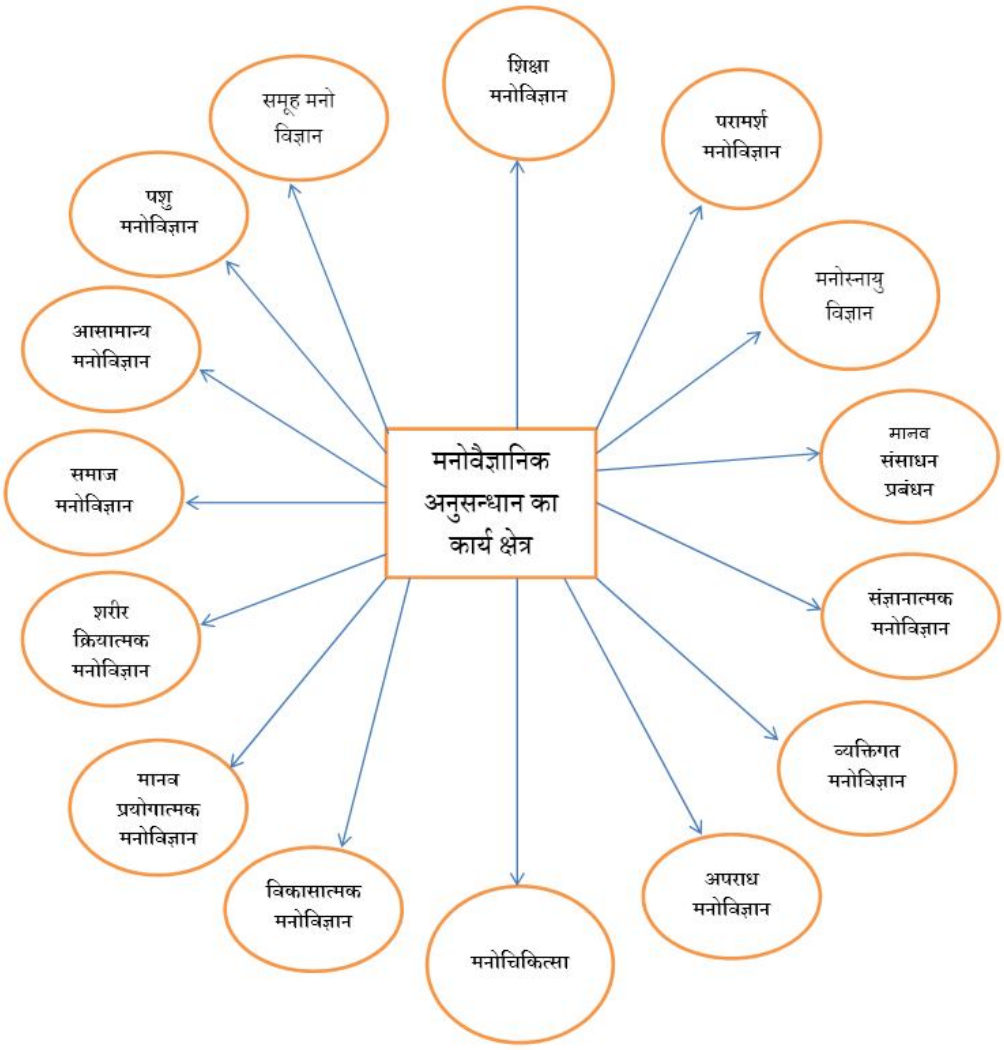

- **शिक्षा मनोविज्ञान (Educational Psychology):** शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान की असीम संभावनाएं हैं। यथा शिक्षार्थी की अभिप्रेरणा, पुनर्बलन, शिक्षण की विधियाँ, शिक्षण सामग्री, व्यक्तित्व, बुद्धिमत्ता, अभिवृति, अभिक्षमता आदि क्षेत्रों में अनुसंधान की व्यापक सम्भावना है। उदाहरण के लिए शिक्षण के क्रम में शिक्षण सामग्रियों का बढता प्रयोग, प्रोग्रामड निर्देशन, कंप्यूटर आधारित निर्देशन आदि नवीन अनुसंधानों का ही परिणाम है।

- **परामर्श मनोविज्ञान (Counselling Psychology):** परामर्श मनोविज्ञान मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का दूसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं जिन्दगी में बढती भाग दौड़ और उसकी वजह से बड़ते तनाव के कारण परामर्श सेवाओं का प्रचालन काफी बढ़ा है और तदनुसार विभिन्न प्रकार के तनावों एवं उनके हानिकारक प्रभावों, उनके निवरण की तकनीकों पर भी अनुसंधान की वृहत सम्भावना है।
- **मनोस्नायु विज्ञान (Neuro-Psychology):** मानव का स्नायविक तंत्र और उसके संज्ञान एवं व्यवहारों का अध्ययन अपने शैशवावस्था में है जिसमें अनुसंधान की असीम संभावनाएं सन्निहितहैं।
- **मानव संसाधन प्रबंध (Human Resource Management):** प्रबंधन की बढ़ती लोकप्रियता और लगभग प्रत्येक क्षेत्र में उसकी आवश्यकता मानव संसाधन प्रबंध के क्षेत्र में मनोवैज्ञानिक अनुसंधान को अत्यंत महत्वपूर्ण बनाती हैं।
- **संज्ञानात्मक मनोविज्ञान (Cognitive Psychology):** व्यवहारवादी विचारधारा के प्रार्दुभाव के बाद संज्ञानात्मक मनोविज्ञान मनोविज्ञान का एक नवीन क्षेत्र है जिसमें मानव के विचार, तर्क क्षमता, समस्या समाधान आदि विषयों में अनुसंधान की महती आवश्यकता है।
- **व्यक्तित्व मनोविज्ञान (Personality Psychology):**व्यक्तित्व का अध्ययन मनोविज्ञान के उद्भव काल से ही उसके प्रमुख विषयों में से एक रहा है। व्यक्तित्व मनोविज्ञान में अनुसंधान की अनंत संभावनाएं हैंजिसमें व्यक्तित्व, उसका आंकलन, व्यक्तिगत भिन्नताएं आदि सभी समाहित हैं।
- **अपराध मनोविज्ञान (Criminal Psychology):** वर्तमान समय में बढ़ते अपराध ने अपराध मनोविज्ञान जैसे नए क्षेत्रों को जन्म दिया है जिसमें अनुसंधान की अनंत संभावनाएं समाहित है व्यक्ति अपराध क्यूँ करता है, अपराध करते वक्त उसकी मानसिकता क्या होती है,वे कौन से करक हैं जो व्यक्ति को अपराधी बनाते हैं, इन सभी क्षेत्रों में अनुसंधान की वृहत आवश्यकता है।
- **मनोचिकित्सा (Psychiatry):**मनोचिकित्सा यद्यपि एक प्राचीन विषय है तथापि मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की संभावनाओं के अनंत द्वार हैं | विभिन्न प्रकार की मानसिक बीमारियों एवं उनके इलाज में अनुसंधान का क्षेत्र काफी बड़ा है।
- **विकासात्मक मनोविज्ञान (Developmental Psychology):** विकासात्मक मनोविज्ञान मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का एक अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र है जिसमें अनुसंधान की संभावनाएं हैं जिसमें किशोरावस्था, वयस्कावस्था तथा वृद्धावस्था आदि के

अध्ययन का समावेश है। विकासात्मक मनोविज्ञान में मनोविज्ञानी मानव के लगभग प्रत्येक क्षेत्र जैसे बुद्धि, पेशीय विकास, सांवेगिक विकास, सामाजिक विकास, खेल, भाषा विकास का अध्ययन विकासात्मक दृष्टिकोण से करते हैं। इसमें कुछ विशेष कारक जैसे आनुवंशिकता, परिपक्वता, पारिवारिक पर्यावरण, सामाजिक आर्थिक अन्तर का व्यवहार के विकास पर पड़ने वाले प्रभावों का आदि के अध्ययन में भी अनुसंधान की असीम संभावनाएं हैं।

- **मानव प्रयोगात्मक मनोविज्ञान (Human Experimental Psychology):** मानव प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का एक ऐसा क्षेत्र है जहां मानव के उन सभी व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है जिस पर प्रयोग किया जा सकता है। यह मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का एक अत्यंत व्यापक क्षेत्र है जिसमें दृष्टि, श्रवण, चिन्तन, सीखना आदि जैसे व्यवहारों का प्रयोगात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
- **शरीर क्रियात्मक मनोविज्ञान(Physiological Psychology):** शरीर क्रियात्मक मनोविज्ञान मे मनोविज्ञानियों का कार्यक्षेत्र प्राणी के व्यवहार के दैहिक निर्धारकों तथा उनके प्रभावों का अध्ययन करना है। शरीर क्रियात्मक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक ऐसी शाखा है जो जैविक विज्ञान से जुड़ा हुआ है। आजकल मस्तिष्कीय कार्य तथा व्यवहार के संबंधोंके अध्ययन में मनोविज्ञानिकों की रूचि बढ़ी है जिसने इस क्षेत्र में अनुसंधान के नए द्वार खोले हैं।
- **समाज मनोविज्ञान (Social Psychology):** मनुष्य एक सामाजिक पशु है, सामाजिक मनोविज्ञान एक सामाजिक पशु के रूप में मानव का अध्ययन करता है जिसमें अनुसंधान की व्यापक संभावनाएं हैं। सामाजिक पशु आपस में अन्त क्रिया करते हैं और एक परिवार या समाज बनाकर रहते हैं। समाज मनोविज्ञानियों के अनुसंधान क्षेत्र में समूह का व्यक्ति पर पड़ने वाले प्रभाव तथा व्यक्ति का समूह पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन, व्यक्तिगत अन्त:क्रियाओं का अध्ययन आदि में अनुसंधान की संभावनाएं हैं। इसके अतिरिक्त अंतर-वैयक्तिक संबध, अंतर्सामाजिक सम्बन्ध और उनको निर्धारित करने वाले कारक, पूर्वाग्रह तथा विभेद को सम्प्रेषित एवं विकसित करने वाले कारक, मनोवृत्ति परिवर्तन तथा विकास को प्रमाणित करने वाले कारक, समस्या समाधान पर समूह के पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, सामाजिक रूप मे विचलित व्यवहार आदि के अध्ययन में भी अनुसंधान की महती आवश्यकता है।

- **असामान्य मनोविज्ञान (Abnormal Psychology):** मानव का आसामान्य व्यवहार मनोवैज्ञानिक अध्ययनों के लिए एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। विभिन्न मानसिक असामान्यताओं, उनके कारण, उनके लक्षण एवं उनका निवारण मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का एक अनंत क्षेत्र है।
- **पशु मनोविज्ञान (Animal Psychology):** मनोविज्ञान का इस क्षेत्र में प्रयोग पशुओं जैसे चूहों, बिल्लीयों, कुत्तों, बन्दरों, वनमानुषों आदि पर किया जाता है। पशु मनोविज्ञान में अधिकतर शोध सीखने की प्रक्रिया तथा व्यवहार के जैविक पहलुओं के अध्ययन में किये गए हैं और आगे किये जाने की संभावनाएं हैं। वस्तुतः सीखने के आधुनिक सिद्धान्त तथा मानव व्यवहार के पहलू के बारे में हम आज जो कुछ भी जानते हैं, उसका आधार पशु मनोविज्ञान ही है। इस मनोविज्ञान में पशुओं के व्यवहार जैसे सीखना, चिन्तन, स्मरण आदि का अध्ययन करके मनुष्यों के ऐसे ही व्यवहारों को समझने की कोशिश की जाती है।
- **समूह मनोविज्ञान (Group Psychology):** मानव के सामूहिक व्यवहारों के अध्ययन का यह क्षेत्र अनुसंधान की दृष्टी से अत्यंत महत्त्वपूर्ण एवं नवीन है जिसमें अनुसंधान की असीम संभावनाएं हैं।

2.5 मनोवैज्ञानिक मनोवैज्ञानिक अनुसंधानके आधुनिक एवं उदीयमान कार्य क्षेत्र (Scope of Psychological Research)

नित्य नए - नए अनुसंधानों के फलस्वरूप मनोविज्ञान लगातार विकसित हो रहा है वर्तमान समय में मनोविज्ञान का क्षेत्र अत्यंत व्यापक हो गया है फलत: मनोविज्ञान में नयी नयी शाखाओं का प्रादुर्भाव हो रहा है जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नांकित है:

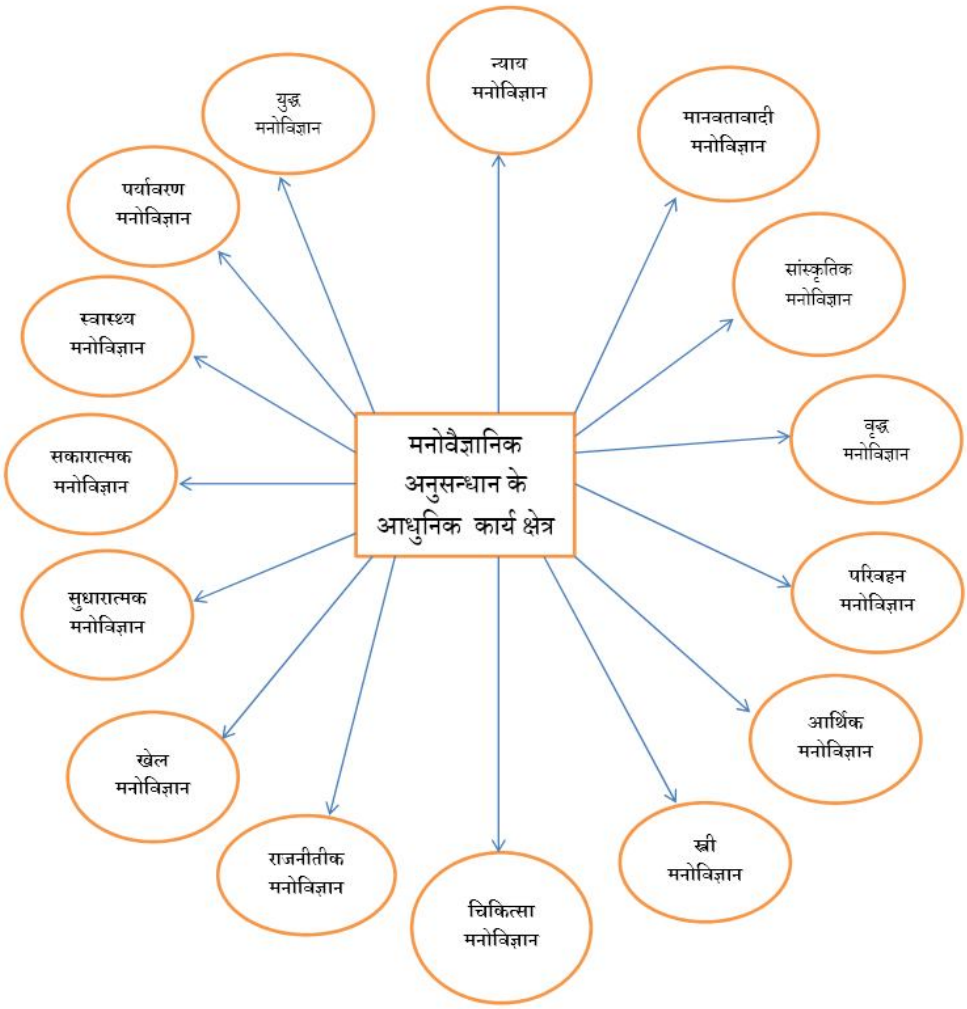

- **न्याय मनोविज्ञान (Judicial Psychology):** मनोवैज्ञानिक अध्ययन का यह क्षेत्र न्यायिक एवं कानूनी परिस्थितियों के अध्ययन से सम्बंधित है और इस क्षेत्र में अनुसंधान की असीम सम्भावनाएँ हैं।
- **मानवतावादी मनोविज्ञान (Humanistic Psychology):**मानवतावादी मनोविज्ञान मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं का अध्ययन, मानव की अभिप्रेरणा एवं उसकी आवश्यकताओं के सन्दर्भ में करता है।
- **सांस्कृतिक मनोविज्ञान (Cultural Psychology):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का यह क्षेत्र विभिन्न संस्कृतियों के सन्दर्भ में करता है।
- **वृद्ध मनोविज्ञान (Geriatric Psychology):** वृद्धावस्था के मनोविज्ञान के अध्ययन का यह क्षेत्र अनुसंधान की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

- **परिवहन मनोविज्ञान (Traffic Psychology):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का यह क्षेत्र व्यक्तियों के यातायात सम्बन्धी व्यवहार का अध्ययन करता है।
- **आर्थिक मनोविज्ञान (Economic Psychology):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का यह क्षेत्र उपभोक्ताओं के निवेश एवं खर्च सम्बन्धी व्यवहार का अध्ययन करता है जो उपभोक्ताओं के आकर्षित करने के लिए प्रयोग किये जाते हैं।
- **स्त्री मनोविज्ञान (Women Psychology):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का यह दिलचस्प क्षेत्र स्त्री मनोविज्ञान का अध्ययन करता है जिसमें अनुसंधान की असीम संभावनाएं हैं।
- **चिकित्सा मनोविज्ञान (Medical Psychology):**मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का यह क्षेत्र चिकत्सा शास्त्र एवं मनोविज्ञान के समन्वित अध्ययन से सम्बंधित है।
- **राजनीतिक मनोविज्ञान (Political Psychology):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का यह क्षेत्र राजनीति के सन्दर्भ में मनोविज्ञान का अध्ययन करता है।
- **खेल मनोविज्ञान (Sports Psychology):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का यह क्षेत्र खेलों एवं खिलाडियों के मनोविज्ञान का अध्ययन करता है।
- **सुधारात्मक मनोविज्ञान (Correctional Psychology):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का यह क्षेत्र अपराध के रोकथाम एवं अपराधियों के पुनर्वास के अध्ययन से सम्बंधित है।
- **सकारात्मक मनोविज्ञान (Positive Psychology):** मनोविज्ञान का यह सबसे व्यापक आधुनिकतम क्षेत्र है जो व्यक्ति के कल्याण एवं सकारात्मक जीवन शैली से जुड़ा है और अनुसंधान की व्यापक संभावनाएं प्रस्तुत करता है।
- **स्वास्थ्य मनोविज्ञान (Health Psychology):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का यह क्षेत्र मानव के स्वास्थ्य कल्याण से जुड़ा है।
- **पर्यावरण मनोविज्ञान (Environmental Psychology):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का यह क्षेत्र पर्यावरण के प्रति मानव व्यवहार से सम्बंधित है।

- **युद्ध मनोविज्ञान (War Psychology):** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का यह क्षेत्र युद्ध और शांति एवं द्वंद्व निवारण से सम्बंधित है।

2.6 सारांश

मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य है मनोविज्ञान के ज्ञान कोष में वृद्धि करना, विश्वसनीय सूचना या नवीन ज्ञान की प्राप्ति अथवा उपलब्ध वर्तमान ज्ञान में बढ़ोतरी करना अथवा उसकी पुष्टि करना। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान सदैव या तो किसी अनुभूत समस्या का समाधान करता है अथवा समाधान करने की ओर प्रवृत्त होता है। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति में वैज्ञानिकता, कलात्मकता, उद्देश्यपूर्णता एवं लक्ष्योन्मुखता, नियोजित एवं व्यवस्थित, वस्तुनिष्ठता, निश्चितता, सत्यापनशीलता, सामान्यीकरण, पूर्वानुमन्य, गत्यात्मकता, प्रायोगिक, पुनरावृति योग्य, तार्किक, धैर्यपूर्ण, कल्पनाशीलता एवं आनुभविकता आदि प्रमुख हैं। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के प्रमुख पारंपरिक क्षेत्रों में शिक्षा मनोविज्ञान, परामर्श मनोविज्ञान,मनोस्नायु विज्ञान,मानव संसाधन प्रबंध, संज्ञात्मक मनोविज्ञान, व्यक्तित्व मनोविज्ञान, अपराध मनोविज्ञान, मनोचिकित्सा, विकासात्मक मनोविज्ञान, मानव प्रयोगात्मक मनोविज्ञान, शरीर क्रियात्मक मनोविज्ञान, समाज मनोविज्ञान, असामान्य मनोविज्ञान, पशु मनोविज्ञान एवं समूह मनोविज्ञान आदि हैं।मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के अन्य उभरते क्षेत्रों में न्याय मनोविज्ञान,मानवतावादी मनोविज्ञान,सांस्कृतिक मनोविज्ञान, वृद्ध मनोविज्ञान,,परिवहन मनोविज्ञान, आर्थिक मनोविज्ञान, स्त्री मनोविज्ञान, चिकित्सा मनोविज्ञान, राजनीतिक मनोविज्ञान, खेल मनोविज्ञान, सुधारात्मक मनोविज्ञान, सकारात्मक मनोविज्ञान, स्वास्थ्य मनोविज्ञान, पर्यावरण मनोविज्ञान एवं युद्ध मनोविज्ञान अत्यंत प्रमुख हैं।

2.7 अभ्यास प्रश्न

1. मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति का विस्तार से वर्णन करें।
2. मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के कार्य क्षेत्रों का वर्णन करें।
3. मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के उदीयमान नवीन कार्य क्षेत्रों का उल्लेख करें।
4. मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति एवं उसके कार्य क्षेत्रों का वर्णन करें।

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- Aahuja, R. (2006). Research Methodology, Rawat Publishers, New Delhi.
- Best, J.W. & Kahn, J.V., (2008) Research Methodology in Education, Prentice Hall of India, New Delhi.
- Garret H.E., (2005). Statistics in Psychology & Education, Paragon International Publisher, New Delhi.

- Gupta, S.P., (2013). अनुसंधान दिग्दर्शिका, Sharda Prakashan, Allahabad.
- Kaul, L. (2009) Methodology of Educational Research, Vikas Publications, New Delhi.
- Kerlinger, F.N., (2012). 'Foundations of Behavioural Research', Surjeet Publications, New Delhi.
- Kothari, C.R., (2008).Research Methodology: Methods and Techniques, New Age International, New Delhi.
- Kumar, A., (2006) Measurement and Evaluation in Research and Statistics, Bharti Bhawan, Patna, Bihar.
- Ranjit, K. (2011). Research Methodology: A Step by Step Guide for Beginners, Sage Publications.
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) शिक्षा मनोविज्ञान, पटना, भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, वाराणसी, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) उच्चतर मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) नैदानिक मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) आसामान्य मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

इकाई - 3

मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

Historical perspective of psychological research

इकाई की रूपरेखा

3.1 उद्देश्य
3.2 प्रस्तावना
3.3 आरंभिक मनोविज्ञान एवं संरचनावाद (Structuralism)
3.4 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान का संक्षिप्त विकासक्रम
3.5 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान एवं प्रकार्यवाद (Functionalism)
3.6 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान एवं मनोविश्लेषणवाद (Psychoanalysis)
3.7 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान एवं व्यवहारवाद (Behaviourism)
3.8 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान एवं गेस्टाल्टवाद (Gestaltism) एवं संज्ञानवाद (Cognitivism)
3.9 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान पर सांख्यिकी एवं अन्य सामाजिक विषयों का योगदान
3.10 इकाई सारांश
3.11 सन्दर्भ ग्रन्थ
3.12 अभ्यास प्रश्न

3.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के प्राचीन परिप्रेक्ष्य को समझ सकेंगे
- मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के क्रमिक विकास में संरचनावाद के योगदान की व्याख्या कर सकेंगे
- मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के क्रमिक विकास में प्रकार्यवाद के योगदान की व्याख्या करेंगे कर सकेंगे
- मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के क्रमिक विकास में व्यवहारवाद के योगदान की व्याख्या कर सकेंगे
- मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के क्रमिक विकास में गेस्टाल्टवाद एवं संज्ञानवाद के योगदान की व्याख्या कर सकेंगे

- मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के क्रमिक विकास में सांख्यिकी एवं अन्य सामाजिक विषयों के योगदान की व्याख्या कर सकेंगे

3.2 प्रस्तावना (Introduction)

आपने पिछली इकाइयों में जाना कि गंभीरता, गहनता एवं विश्लेषणात्मक ढंग से किसी एक समस्या का आलोचनात्मक अध्ययन करके उसका समाधान खोजना ही अनुसंधान है। अनुसंधान सदैव वस्तुनिष्ठ तथा तर्कसंगत होता है। मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान का मुख्य उद्देश्य है मनोविज्ञान के ज्ञान कोष में वृद्धि करना, विश्वसनीय सूचना या नवीन ज्ञान की प्राप्ति अथवा उपलब्ध वर्तमान ज्ञान में बढ़ोतरी करना अथवा उसकी पुष्टि करना। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान सदैव या तो किसी अनुभूत समस्या का समाधान करता है अथवा समाधान करने की ओर प्रवृत्त होता है । सामान्यत: मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान विशिष्ट वस्तु, घटना या समूह के प्रत्यक्ष अध्ययन से अधिक विस्तृत होता है तथा भावी घटनाक्रम के पूर्वकथन में सहायक होता है एवं इसके परिणाम अवलोकित अनुभवों अथवा आनुभविक प्रमाणों पर आधारित होते हैं। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में सामान्यतः प्राथमिक स्रोतों से नवीन प्रदत्तों का संकलन किया जाता है जिसे करने में विशेषज्ञता की जरूरत होती है। आज मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान बहुत आगे बढ़ चुका है, मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान की बहुत सी वैज्ञानिक विधियाँ विकसित हो चुकी हैं और हो रही हैं। प्रश्न यह उठता है कि क्या मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान आरम्भ से ही इतना व्यापक था? इसका उत्तर है नहीं । मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के वर्तमान व्यापक आयाम विगत दो शताब्दियों में विश्व भर के मनोवैज्ञानिकों एवं विशेषज्ञों द्वारा किये गए अनवरत एवं अथक परिश्रम का परिणाम हैं । आइये जानें कि मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान अपने वर्तमान स्वरुप तक कैसे पहुंचा ।

3.3 आरंभिक मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान एवं संरचनावाद (Structuralism)

मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान का इतिहास उतनी ही पुराना है जितना मनोविज्ञान का इतिहास है। यदि मनोविज्ञान के इतिहास पर नजर डाला जाय तो यह एक अलग विषय के रूप में अन्य विषयों से अपेक्षाकृत युवा है। 19वीं शताब्दी से पूर्व मनोविज्ञान का अलग अस्तित्व नहीं था, बल्कि इसका अध्ययन दर्शनशास्त्र की एक शाखा के रूप में किया जाता था। वस्तुत: मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के क्रमिक विकास का इतिहास मनोविज्ञान के विभिन्न सम्प्रदायों (Schools of Psychology) के विकास में समाहित है।

आरंभिक मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान एवं संरचनावाद (Structuralism)

एक वैज्ञानिक एवं वस्तुनिष्ठ विषय के रूप में मनोविज्ञान का उद्भव 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ जिसका श्रेय जर्मन मनोवैज्ञानिक विलियम वुण्ट (Wilholm Wandt) को जाता है। वुण्ट (1832-

1920) ने मनोविज्ञान के वैज्ञानिक अध्ययन हेतु पहली मनोविज्ञान प्रयोगशाला (Psychology Laboratory) की स्थापना सन् 1879 ई. में लिपजिग जर्मनी में स्थित लिपजिग विश्वविद्यालय (जो अब कार्ल मार्क्स विश्वविद्यालय के रूप में जाना जाता है) में की। वुण्ट का रुझान सचेतन अनुभवों के अध्ययन मे था वे वस्तुतः मन के अवयवों अर्थात मन के निर्माण की इकाइयों का विश्लेषण करना चाहते थे। वुण्ट एवं उनके शिष्य अंतर्निरीक्षण (introspection) के द्वारा मन की संरचना का विश्लेषण कर रहे थे इसलिए उन्हें संरचनावादी कहा गया। अंतर्निरीक्षण एक प्रक्रिया थी जिसमें प्रयोज्यों से प्रयोग के दौरान उनकी मानसिक प्रक्रियाओं अथवा अनुभवों का वर्णन करने के लिए कहा जाता था। यद्यपि, अंतर्निरीक्षण एक अध्ययन विधि के रूप में स्वीकार्य नहीं हो सका सका । सन् 1873-74 में विलियम वुण्ट की पुस्तक 'प्रिंसिपल ऑफ फिजियोलॉजिकल साइकालजी (Principles of Physiological Psychology) प्रकाशित की जिसमें उन्होंने मनोविज्ञान को एक स्वतंत्र प्रयोगात्मक विषय के रूप में स्थापित करने का पर्याप्त दावा प्रस्तुत किया। विलियम वुण्ट द्वारा स्थापित मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला, मनोवैज्ञानिक अनुसंधान की नींव मानी जा सकती है। इस मनोविज्ञान की प्रयोगशाला की स्थापना ने मनोविज्ञान में वैज्ञानिक अनुसंधान के प्रति वैश्विक ध्यान आकर्षित किया और कई प्रसिद्ध मनोवज्ञानिकों ने वुण्ट के निर्देशन में मनोविज्ञान का अध्ययन किया जिसमें क्रेपलिन (Kraeplin), कुल्पे (Kulpe), ई.बी. टिचनर (E.B. Tichner) जे. एम. कैटल (J.M. Cattle), जी.एस. हल (G.S. Hall), चार्ल्स स्पीयरमैन आदि प्रमुख थे। वुण्ट के शिष्यों में से टिचनर ने मनोविज्ञान के आरंभिक संप्रदाय संरचनावाद (Structuralism) की नीव जो कि बाद में अमेरिका के कार्नेल विश्वविद्यालय में कार्यरत थे।) की नीव रखी। संरचनावाद को वुण्ट के विचारों का संशोधित रूप माना जा सकता है। सन् 1886 में वुण्ट ने मनोविज्ञान के वैज्ञानिक अध्ययन को प्रोत्साहित करने के लिए एक पुस्तक आउटलाइन ऑफ साइकोलॉजी (Outline of Psychology) लिखी। वुण्ट को उसके कार्यों की वजह से आधुनिक प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का जनक माना जाता है। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के उद्भव को और गहराई से समझने के लिये वुण्ट के द्वारा दिये गये 'क्रमबद्ध मनोविज्ञान' पर एक नजर डालना उपयुक्त होगा।

वुण्ट का क्रमबद्ध मनोविज्ञान: वुण्ट के क्रमबद्ध मनोविज्ञान की जानकारी उनके द्वारा लिखित पुस्तक, आउटलाईन ऑफ साइकोलॉजी' से प्राप्त होती है, जिसमें उन्होंने क्रमबद्ध मनोविज्ञान को मूलत: पांच अवयवों में विभाजित किया -

- मनोविज्ञान की परिभाषा एवं विषयवस्तु (Definitions and subject matter of Psychology)
- संबंधनका सिद्धान्त (Principle of Connection)
- मनोविज्ञान की विधि (Methods of Psychology)
- संप्रत्यक्षण या आत्मबोध (Appreciation)

- मन शरीर समस्याएं (Mind Body Problem)

मनोविज्ञान की परिभाषा एवं विषयवस्तु में वुण्ट ने बताया कि मनोविज्ञान को अनुभव आधारित होना चाहिए जो तात्कालिक या मध्यवर्ती हो सकती है। वुण्ट ने यह भी स्पष्ट किया कि मनोविज्ञान वस्तुस्थिति के प्रमुख अनुभव पर आधारित होना चाहिए। वुण्ट ने संबंधन के अपने सिद्धान्त में यह स्पष्ट किया कि संबंधन के सिद्धान्त चेतना के तत्वों एवं अनुभूति के संयोजन सिद्धान्तों पर निर्भर करते है। वुण्ट द्वारा दिये गये 'मनोविज्ञान के विधियों' की विवेचना मनो वैज्ञानिक अनुसन्धान के आरंभिक रूप को स्पष्ट करती है। वुण्ट ने अंतर्निरीक्षण (Introspection) को अनुभूति के अध्ययन की एक महत्वपूर्ण विधि माना। हालांकि अंतदर्शन आज की तारीख मे एक वैज्ञानिक विधि नहीं माना जाता तथापि वुण्ट ने यह स्पष्ट कर दिया था कि अंतर्निरीक्षण से उनका तात्पर्य मात्र स्व -निरीक्षण (Self-observation) नहीं बल्कि ऐसे नियंत्रित प्रेषण (Controlled observation) से है जो प्रयोगों में विशेष सहायक होते है। वुण्ट ने यह भी बताया कि अंतर्निरीक्षण हेतु प्रशिक्षित अंतर्निरीक्षक (Trained Introspections) की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त उन्होंने अंतनिरीक्षण हेतु कुछ नियमों का प्रतिपादन भी किया। अंतदर्शन हेतु वुण्ट द्वारा प्रतिपादित कुछ नियम निम्नांकित है :

- अंतदर्शन के दौरान प्रेक्षण का स्वरूप पुनरावृत्ति योग्य होना चाहिए।
- निरीक्षण के दौरान परिस्थितियां ऐसी हो कि उद्दीपको के गुणों को परिवर्तित किया जा सके
- अंतनिरीक्षक को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि प्रक्रिया कहां से प्रारंभ होती है।

वुण्ट के द्वारा दिये गये मनोविज्ञान के अध्ययन की विधि पर एक आलोचनात्मक दृष्टि डालें तो पता चलता है कि भले ही आज की तारीख में अंतर्दर्शन, एक वैज्ञानिक विधि नहीं माना जाता हो, परन्तु वुण्ट ने अंतर्दर्शन में भी, वैज्ञानिक अनुसंधान को समाहित करने का प्रस्ताव किया था यथा अंतर्दर्शन नियंत्रण (Control), प्रेक्षण की पुनरावृत्ति (Replicable) होना और अंतदर्शन की प्रक्रिया का व्यवस्थित होना जो वैज्ञानिक अनुसंधानों का एक महत्वपूर्ण पक्ष है।

मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के विकास में संरचनवादियों का योगदान:

- संरचनावाद वस्तुतः मनोविज्ञान की आरंभिक विचारधारा थी जो बाद के विचारों एवं सिद्धांतों के आगे टिक नहीं पाई परन्तु संरचनावाद का योगदान मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान की दृष्टी से अत्यंत महत्वपूर्ण है।
- संरचनावाद ने मनोविज्ञान को दर्शन शास्त्र से अलग एक विषय के रूप मे स्थापित किया।
- मनोविज्ञान के अध्ययन के लिए एक अलग प्रयोगशाला की स्थापना संराचानावादियों ने की जिसने मनोविज्ञान में प्रायोगिक अध्ययनों को बढ़ावा दिया एवं मनोविज्ञान को वैज्ञानिक बनाने का प्रयास किया।

- संरचनावाद ने मनोविज्ञान के क्षेत्र में कार्यरत व्यक्तियों को मनोवैज्ञानिक अध्ययन हेतु नवीन वस्तुनिष्ठ, वैज्ञानिक विधियों के बारे में सोचने एवं उनका विकास करने के लिए अभिप्रेरित किया।
- हालाँकि आरम्भ में संरचना वाद द्वारा प्रतिपादित अंतर्दर्शन की विधि आलोचना का शिकार हुयी परन्तु वस्तुतः आज भी अंतर्दर्शन मानव व्यवहार के अध्ययन की एक महत्वपूर्ण विधि है जिसके परिमार्जित स्वरूप सूचित प्रश्नावली एवं रेटिंग स्केल आदि हैं जिन्हें प्रतिभागियों को देकर उनके द्वारा उनके बारे में दी गयी सूचनाओं को सत्य मानते हुए विश्लेषण किया जाता है और निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

3.4 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान का संक्षिप्त विकासक्रम

मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान का विकास क्रम	
1879	विलहम वुण्ट (Wilhelm Wundt) ने लिपजिग , जर्मनीमें प्रथम मनोविज्ञान प्रयोगशाला स्थापित किया।
1883	स्टेनले हॉल द्वारा प्रथम अमेरिकी मनोविज्ञान प्रयोगशाला जॉन होपकिंस विश्वविद्यालय में स्थापित
1886	स्टेनले हॉल के छात्र जोसेफ जैस्त्रो को मनोविज्ञान की पहली पी एच डी की उपाधि जॉन होपकिंस विश्वविद्यालय में प्रदान की गयी जोसेफ जैस्त्रो बाद में विस्कांसिन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बने और 1900 इस्वी में अमेरिकी मनोवैज्ञानिक संघ के अध्यक्ष बने
1888	विलहम वुण्ट (Wilhelm Wundt) के शिष्य जे एम कैटल मनोविज्ञान के प्रथम प्रोफेसर बनाये गए
1890	विलियम जेम्स (William James) ने 'प्रिंसिपल ऑफ साइकोलॉजी' प्रकाशित की जिसने प्रकार्यवाद की नीव रखी।
1892	स्टेनले हॉल ने अमेरिकी मनोवैज्ञानिक संघ (American Psychological Association or APA) की स्थापना की और उसके संस्थापक अध्यक्ष बने
1895	मनोविज्ञान की एक व्यवस्था के रूप में प्रकार्यवाद की स्थापना।

1900	सिगमंड फ्रायड (Sigmund Freud) ने मनोविश्लेषणवादका विकास किया।
1904	इवान पावलव (Ivan Pavlov) को नोबल पुरस्कारपाचन व्यवस्था के कार्य के लिए मिला जिससे अनुक्रियाओं के विकास के सिद्धांत को समझा जा सका।
1905	बीने (Binet) एवं साइमन (Simon) द्वारा बुद्धिपरीक्षण का विकास।
1908	गोस्सेट (Gosset) के द्वारा t-परीक्षण विकसित
1912	विलियम स्टर्न ने बुद्धि लब्धि की संकल्पना बताई
1912	कुर्ट कोफ्का का सुप्रसिद्ध फाई फेनोमेना का अध्ययन और गेस्टाल्टवाद की नीव
1913	मनोवैज्ञानिक जे बी वाटसन का सुप्रसिद्ध शोध पत्र 'The Behaviorist Manifesto' प्रकाशित, मनोविज्ञान के अध्ययन विषय में एक बड़ा मोड
1916	बिनेट बुद्धि परीक्षण का संशोधित अमेरिकन रूप लुईस टरमैन (Luis Terman) द्वारा प्रकाशित टरमैन द्वारा बुद्धि लब्धि = (मानसिक आयु / शारीरिक आयु) X 100 सूत्र विकसित
1924	जॉन बी. वाट्सन (John B. Watson) ने व्यवहारवाद पुस्तक लिखी जिससे व्यवहारवाद की नींव पड़ी।
1925	आर ए फिशर द्वारा Statistical Method for Research Workers प्रकाशित
1932	रेने लिकर्ट द्वारा लिकर्ट स्केल का विकास
1940	गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों द्वारा अंतर्दृष्टि अधिगम Insightful Learning) सम्बन्धी प्रयोग
1944	कर्ट लेविन द्वारा क्रियात्मक अनुसन्धान विधि की व्याख्या
1946	एस एस स्टेवेंस द्वारा मापन के चार स्तरों की व्याख्या
1951	मानववादी मनोवैज्ञानिक कार्ल रोजर्स (Carl Rogers) ने रोगी-केंद्रित चिकित्सा (Client Centered Therapy) प्रकाशित की।
1953	बी.एफ. स्किनर (B.F. Skinner) ने 'साइंस एंड ह्यूमन बिहेविअर' प्रकाशित की जिससे व्यवहारवाद को मनोविज्ञान के एक प्रमुख उपागम के रूप में बढ़ावा मिला।
1954	मानववादी मनोवैज्ञानिक अब्राहम मैस्लो (AbrahamMaslow) ने 'मोटिवेशन एंड

	पर्सनॉलटी' प्रकाशित की।
1973	कोनराड लारेंश (Konrad Lorenz) तथा निको टिनबर्गेन (Niko Tinbergen) को उनके कार्य पशु व्यवहार की उपजाति विशिष्टता वफी अंतर्निर्मित शैली जो बिना किसी पूर्व अनुभव अथवा अधिगम के होती है, पर नोबल पुरस्कार मिला।
1978	निर्णयन पर किए गए कार्य के लिए हर्बर्ट साइमन (Herbert Simon) को नोबल पुरस्कार प्राप्त।
1981	डेविड ह्यूबल (David Hubel) एवं टार्स्टेन वीसल (Torsten Wiesel) को मस्तिष्क की दृष्टि कोशिकाओं पर शोध के लिए नोबल पुरस्कार प्राप्त।
1981	रोजर स्पेरी (Roger Sperry) को मस्तिष्क विच्छेद अनुसंधान के लिए नोबल पुरस्कार प्राप्त।
2002	अनिश्चितता में मानव निर्णयन के अनुसंधान पर डेनियल क्हनेमन (Daniel Kahneman) को नोबल पुरस्कार मिला।
2005	आर्थिक व्यवहार में सहयोग एवं द्वंद्व की समझ में खेल सिद्धान्त के अनुप्रयोग के लिए थामस शेलिंग (Thomas Schelling) को नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ।

3.5 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान एवं प्रकार्यवाद

अमरीकी मनोवैज्ञानिक, विलियम जेम्स (William James) जिन्होंने कैम्ब्रिज, मसाचुसेट्स में एक प्रयोगशाला की स्थापना लिपजिग की प्रयोगशाला के कुछ ही समय बाद 1883 में की थी, ने मानव मन के अध्ययन के लिए प्रकार्यवादी (functionalist) उपागम का विकास किया। विलियम जेम्स का विश्वास था कि मानस की संरचना पर ध्यान देने के बजाय मनोविज्ञान को इस बात का अध्ययन करना चाहिए कि मन क्या करता है तथा अपने वातावरण से निपटने के लिए किस प्रकार कार्य करता है। उदाहरण के लिए, प्रकार्यवादियों ने इस बात पर ध्यान केंद्रित किया कि व्यवहार, लोगों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने योग्य कैसे बनाता है। विलियम जेम्स के अनुसार वातावरण से अंतःक्रिया करने वाली मानसिक प्रक्रियाओं की एक सतत धारा के रूप में चेतना ही मनोविज्ञान का मूल स्वरूप रूपायित करती है। उस समय के प्रसिद्ध शैक्षिक विचारक जॉन डीवी (John Dewey) ने प्रकार्यवाद का उपयोग यह तर्क करने के लिए किया कि मानव किस प्रकार वातावरण के साथ अनुकूलन स्थापित करते हुए प्रभावोत्पादक ढंग से कार्य करता है। बाद के वर्षों में विलियम

जमस द्वारा दिए गए विचारों को संपोषित एवं आगे बढ़ाने का श्रेय जोन डीवी, जेम्स रोनाल्ड एंजेल, जे एम कैटेल एवं ई एल थोर्नडायक आदि को है।

मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के क्षेत्र में प्रकार्यवादियों का योगदान:

- हालाँकि मनोविज्ञान में प्रकार्यवाद अपनी सीमाओं की वजह से ज्यादा लोकप्रिय नहीं हो पाया परन्तु मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान को आगे बढ़ाने में उनका योगदान महत्त्वपूर्ण है। प्रकार्यवादियों ने मनोविज्ञान में मापन एवं मूल्यांकन को के क्षेत्र को उन्नत बनाया। उन्होंने अनुसंधान से सम्बंधित महत्त्वपूर्ण उपकरण यथा प्रश्नावली, इन्वेंटरी, मानसिक परीक्षण आदि देकर उन्नत बनाया।
- प्रकार्यवादियों ने मनोविज्ञान के सिद्धांतों के अन्य विषयों में प्रयोग पर विशेष बल देकर मनोविज्ञान के अध्ययन क्षेत्र को वृहत बनाया एवं मनोविज्ञान में अनुप्रयुक्त अनुसन्धान को बढ़ावा दिया। जॉन डीवी जो प्रकार्यवाद के प्रबल समर्थक थे, ने अधिगम एवं अभिप्रेरणा आदि मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के शैक्षिक प्रयोग पर महत्त्वपूर्ण काम किया जिसने अधिगम से सम्बंधित प्रयोगों को उत्प्रेरित किया।
- प्रकार्यवादियों ने मनोविज्ञान के उन पहलुओ का अध्ययन करने का प्रयास भी किया जो संरचनावाद में शामिल नहीं था और इस प्रकार मनोविज्ञान के क्षेत्र को विस्तृत करने का प्रयास किया।
- प्रकार्यवाद ने वातारण से समायोजन के पदों में मनोविज्ञान के अध्ययन पर बल दिया जो वास्तव में व्यवहारवाद की आधारशिला थी।

3.6 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान एवं व्यवहारवाद

बीसवीं शताब्दी का आरम्भ मनोविज्ञान के इतिहास में व्यापक परिवर्तनों का दौर था । विभिन्न मनोवैज्ञानिक मनोविज्ञान को दर्शन शास्त्र से अलग एक स्वतंत्र विषय के रूप में जिसका वैज्ञानिक आधार हो, के रूप में विकसित करने में प्रयासरत थे । ऐसे में संरचनावाद की प्रतिक्रिया स्वरूप एक और धारा व्यवहारवाद (behaviorism) के रूप में आई। इस क्रम में सबसे प्रभावी व्यवहारवादी दृष्टिकोण है जिसका जनक सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जे बी वाटसन को माना जाता है । वाटसन एक अमेरिकी मनोवैज्ञानिक थे जिन्होंने १९१३ में एक शोध पत्र ‘ मनोविज्ञान: व्यवहारवादी दृष्टिकोण (Psychology: How a Behaviourist Views it)’ प्रकाशित करवाया जिसके बाद मनोविज्ञान के अध्ययन में क्रांति आ गयी । संरचनावादियों के अंतरदर्शन , फ्रायड के मनोविश्लेषण चेतना का अध्ययन एवं स्वप्न विश्लेषण जैसी अवैज्ञानिक विधियों को दरकिनार करते हुए मनोविज्ञान को मानव के बाह्य क्रियाकलापों और वातावरणीय उद्दीपकों के प्रति उसकी प्रतिक्रिया के

अध्ययन को मनोविज्ञान का क्षेत्र बताते हुए व्यवहारवाद की नीव रखी। यहाँ यह जानना दिलचस्प होगा की **व्यवहारवाद के जनक जे बी वाटसन** ने कहा था " मुझ एक दर्जन स्वस्थ बच्चे दे दीजिए, मै व्यावहारिक तकनीकों का प्रयोग करके उनको एक नेता एक वकील या आप कहें तो चोर लुटेरा बना सकता हूँ"।

व्यवहारवादी उपागम मुख्यतः इस मान्यता पर आधारित है कि वातावरण मानव व्यवहार का निर्धारक होता है। एक व्यक्ति एक परिस्थिति विशेष में क्या अनुक्रिया /व्यवहार करता है यह इस पर निर्भर है कि पिछले सामान परिस्थितियों में उसके व्यवहार का परिणाम क्या रहा है ? व्यवहारवादिओं का मत है कि मानव व्यवहार निरिक्षण योग्य एवं मापनीय होना चाहिए साथ ही उनका यह भी मत है कि व्यावहारिक क्रियायें उद्दीपक, अनुक्रिया और पुनर्बलन की क्रमिक पुनरावृति द्वारा सीखने का परिणाम होती हैं। व्यवहारवादियों की यह मान्यता मनोविश्लेषण वादियों की मान्यता कि **जन्मजात प्रवृतियाँ मानव व्यवहारों का निर्धारक होती हैं** और संज्ञानात्मक मान्यता कि व्यक्ति के व्यवहारों पर उसकी संज्ञानात्मक विशेषताओं यथा सोचना तर्क क्षमता आदि का प्रभाव होता है से बिलकुल अलग है। व्यवहारवादी मानते हैं कि हर व्यवहार अनुबंधानात्मक अधिगम का परिणाम है अतः इस अनुबंधन को समाप्त करके उस व्यावहार विशेष को विलोपित भी किया जा सकता है और नए व्यवहार सिखाए भी जा सकते हैं।

व्यवहारवादियों की प्रमुख मान्यताएं निम्नंकित हैं :

- मानव व्यवहार प्रायः सीखे गए होते हैं।
- अनुबंधन की जिस प्रक्रिया का प्रयोग करके व्यवहार सीखा जाता है उसी प्रक्रिया का प्रयोग करके उस व्यवहार को विलोपित भी किया जा सकता है।
- मानव व्यवहार प्रायः परिस्थितियों एवं वातावरणीय कारकों पर निर्भर करता है।
- अदृश्य व्यवहारों यथा भावनाओं ,विचारों आदि को भी अधिगम सिद्धांतों का प्रयोग करके परिवर्तित किये जा सकता है।
- प्रत्येक व्यक्ति अद्वितीय होता है और तदनुसार सबकी वातावरण के प्रति अनुक्रिया भी अद्वितीय होती है।

व्यवहारवाद के जनक वाटसन का मानना था कि मनोवैज्ञानिक अध्ययनों का केन्द्र बिन्दु प्रत्यक्ष निरीक्षणीय घटनाएँ एवं वातावरण में उद्दीपक और अनुक्रिया संबंध का अध्ययन होना चाहिए। वाटसन इवान पावलोव के क्लासिकल कंडीशनींग के अध्ययन सिद्धान्त से अत्यंत प्रभावित थे। वाटसन की रूचि पावलोव के क्लासिकल अध्ययन सिद्धान्त के संदर्भ में बच्चों के व्यवहार के अध्ययन में थी। अपने ऐतिहासिक प्रयोग में उन्होंने 11 साल के बच्चे लिट्ल अल्बर्ट को एक उदासीन उद्दीपक (सफेद चूहा) से क्लासिकल अनुबंधन सिद्धान्त का प्रयोग करते हुए डरना सिखा दिया। वाटसन ने प्रतिपादित किया कि वातावरण बाल विकास को आकार देने वाली सर्वोच्च शक्ति

है। उन्होंने यह भी प्रतिपादित किया कि वयस्क, बच्चों के व्यवहार को सावधानीपूर्वक नियंत्रित एवं उद्दीपक-अनुक्रिया संबंधन के द्वारा निर्मित किया जा सकता है। वाटसन के मतानुसार विकास एक सतत प्रक्रिया है एवं आयु के साथ साथ शनै: शनै: इस प्रकार के संबंधन की संख्या एव उनकी मजबूती बढ़ती जाती है। वाटसन के द्वारा प्रतिपादित व्यहारवाद ने 20वीं सदी के मनोविज्ञान को सर्वाधिक प्रभावित किया। जॉन वाट्सन (John Watson) ने मन एवं चेतना के विचार को मनोविज्ञान के केंद्रीय विषय के रूप में अस्वीकार कर दिया। वे दैहिकशास्त्री इवान पावलव (Ivan Pavlov) के प्राचीन अनुबंधन वाले कार्य से बहुत प्रभावित थे। उनके लिए मन प्रेक्षणीय नहीं है और अंतर्निरीक्षण व्यक्तिपरक है क्योंकि उसका सत्यापन एक अन्य प्रेक्षक द्वारा नहीं किया जा सकता है। उनके अनुसार एक विज्ञान के रूप में मनोविज्ञान क्या प्रेक्षणीय तथा सत्यापन करने योग्य है, इसी पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। उन्होंने मनोविज्ञान को व्यवहार के अध्ययन अथवा अनुक्रियाओं (उद्दीपकों की) जिनका मापन किया जा सकता है तथा वस्तुपरक ढंग से अध्ययन किया जा सकता है, के रूप में परिभाषित किया। 20वीं सदी के आरंभिक दौर में वाटसन द्वारा मनोविज्ञान के प्रति दिये गये इस दृष्टिकोण 'व्यवहारवाद' ने मनोविज्ञान को एक नवीन दृष्टि प्रदान की।

वाट्सन के व्यवहारवाद को अनेक प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिकों द्वारा आगे बढ़ाया गया जिन्हें हम व्यवहारवादी कहते हैं। इनमें सबसे प्रसिद्ध स्किनर (Skinner) थे जिन्होंने व्यवहारवाद का अनुप्रयोग विविध प्रकार की परिस्थितियों में किया तथा इस उपागम को प्रसिद्धि दिलाई। स्किनर के ऑपरेट संबंधन के सिद्धान्त में व्यवहारवाद का दूसरा रूप दिखाई देता है जिसकी मान्यता के अनुसार किसी वांछनीय व्यवहार की आवृत्ति को उपयुक्त पुनर्बलकों का प्रयोग करके बढ़ाया जा सकता है या दंड के द्वारा अवांछनीय व्यवहार में कमी की जाती है। वाट्सन के बाद यद्यपि व्यवहारवाद मनोविज्ञान में कई दशकों तक छाया रहा परंतु उसी समय मनोविज्ञान के विषय में एवं उसकी विषयवस्तु के विषय में कई अन्य विचार एवं उपागम विकसित हो रहे थे।

- व्यवहारवादियों ने संरचना वाद एवं प्रकार्य वाद से बिलकुल अलग व्यक्ति के मापनीय एवं निरीक्षण योग्य व्यवहारों को मनोविज्ञान के अध्ययन का विषय बताया और मनोविज्ञान को अन्य विज्ञान विषयों की तरह वस्तुनिष्ट प्रेक्षण पर आधारित बनाने की कोशिश की ।
- व्यवहारवादियों ने मनोवज्ञान के अध्ययन का केंद्र व्यवहार को बनाया और मानव व्यवहार को अनुवांशिकता का परिणाम मानने की बजाये उसे वतावारणीय अधिगम का परिणाम माना और तदनुसार वस्तुनिष्ट प्रेक्षण जैसे वैज्ञानिक विधियों को विकसित किया जो मनोविज्ञान में अध्ययन की एक महत्त्वपूर्ण विधि है ।

- व्यवहार वाद ने मनोविज्ञान को मन शरीर समस्या से निजात दिला दिया और उसे उद्दीपक अनुक्रिया, अधिगम पुरस्कार जैसे प्रत्यक्ष निरीक्षणीय, पुनरावृति योग्य घटनाओं पर केंद्रित कर दिया।

3.7 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान एवं मनोविश्लेषणवाद

मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त का प्रतिपादन सिगमण्ड फ्रायड ने किया। मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त मनोविज्ञान के अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धांतों में से एक है। फ्रायड आस्ट्रिया के मनो चिकित्सक थे जिन्होंने अपने अनुभवों, विचारों तथा वर्षों के नैदानिक चिकित्सा अनुभवों के आधार पर इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था। सिंगमण्ड फ्रायड का प्रभाव मनोविज्ञान पर बहुत ज्यादा है फ्रायड ने मानव व्यवहार को अचेतन इच्छाओं एवं द्वंद्वों का गतिशील प्रदर्शन बताया। मनोवैज्ञानिक विकारों को समझने एवं उन्हें ठीक करने के लिए उन्होंने मनोविश्लेषण (psycho-analysis) को एक पद्धति के रूप में स्थापित किया।

फ्रायड के अनुसार मानव प्रकृति एवं उसके व्यवहार मन के तीन स्तरों से नियंत्रित एवं नियमित होते हैं। ये तीन स्तर हैं : चेतन मन (Conscious Mind) जिसका तात्पर्य मन के उस भाग से है जिसका सम्बन्ध वर्तमान से होता है। इसमें वे सारे मानसिक तत्त्व शामिल होते हैं जिनके बारे में एक व्यक्ति एक दिए हुए क्षण में जागरूक होता है। अर्ध चेतन मन (Sub-Conscious Mind) जो चेतन व अचेतन के मध्य का भाग है अर्थात न पूर्णत चेतन है न पूर्णतः अचेतन। इसमें अनुभूति, इच्छाएं, विचार भाव होते है जो वर्तमान में तो चेतन में नही होते है परंतु जरा से प्रयास से हमारे चेतन मन में आ जाते है एवं अचेतन मन (Unconscious Mind) जिसका अर्थ है 'चेतना से परे' अर्थात जो भाव, अनुभूतिया, इच्छाएं, आवश्यकताएं पूरी नहीं हो पाती वे अचेतन मे संग्रहित हो जाती है पर समाप्त नही होती है और कई बार अनचाहे हमारे चेतन में आकार हमारे व्यवहार व अनुभूतियों को प्रभावित करती है। फ्रायड के अनुसार हमारे व्यक्तित्व व व्यवहार पर अचेतन का प्रभाव, चेतन की अनुभूतियों व विचारों की तुलना में बहुत अधिक होता है। इसमें वे सारे तत्त्व होते हैं जो चेतन मन में नहीं आ पाते या कठिनाई से आ पाते हैं। अचेतन मन का सबसे बड़ा हिस्सा होता है जिसमे बाल्यावस्था की इच्छाएं, लैंगिक इच्छाएं, मानसिक संघर्ष से सम्बंधित इच्छाएं जो अप्पोरना रह जाती है अचेतन में संगृहीत रहती हैं।

फ्रायड का यह भी मत था कि व्यक्ति का व्यवहार व्यक्तित्व के तीन महत्त्वपूर्ण उप तंत्रों की पारस्परिक अन्तः क्रिया का परिणाम होते हैं। ये तीन उपतंत्र हैं: पहला इदं (Id) जिसकी प्रवृतियाँ जन्मजात होती है। इदं सिर्फ आत्मसंतुष्टि में विश्वास रखता है। यह अनैतिक, अतार्किक, आक्रामक एवं नियमों को ना मानने वाला होता है।दूसरा अहम (Ego) जो ''वास्तविकता के सिद्धान्त'' पर कार्य करता हैं। यह हमारे सोचने का तार्किक तरीका है जो कि परिस्थितियों द्वारा विकसित होता है। एक स्वस्थ व्यक्तित्व के लिए अहं का मजबूत होना अत्यन्त आवश्यक है एवं तीसरा पराहम् (Super Ego) जो

कि व्यक्तितत्व का नैतिक तंत्र है। यह आदर्शों के अनुरूप कार्य करता है। जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता है, सामाजीकरण की प्रक्रिया में माता-पिता के साथ तादात्मीकरण स्थापित करता है।

इस प्रकार फ्रायड ने अपने सभी समकालीन मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणों से पूर्णतया अलग एक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया जिसकी खासियत यह थी यह फ्रायड के द्वारा विभिन्न मनोरोगियों पर किये गए लंबे प्रयोगों एवं उनके वस्तुनिष्ठ निरीक्षण एवं उनके विश्लेषण पर आधारित था हालाँकि फ्रायड का सिद्धांत फ्रायड की मृत्यु के बाद आगे नहीं बढ़ पाया क्योंकि उनमे वैज्ञानिकता का आभाव था और वे भी प्रकारांतर से अंतर्दर्शन पर ही आधारित थी परन्तु मनोविश्लेशणवाद ने मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों पर गहरी छाप छोड़ी।

- फ्रायड ने तत्कालीन मनोवैज्ञानिकों को वस्तुनिष्ठ प्रेक्षण पर आधारित सिद्धांतों के विकास के लिए प्रेरित किया।
- फ्रायड ने मनोविज्ञान में अनुसन्धान को बढ़ावा दिया।
- फ्रायड ने गुणात्मक अनुसन्धान की एक प्रमुख विधि केस स्टडी की आधारशिला रखी एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार को आंकड़ा संग्रहण की विधि के रूप में प्रयोग किया जो आज भी मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों में अत्यंत लोकप्रिय हैं ।

3.8 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान एवं गेस्टाल्टवादएवं संज्ञानवाद

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में, एक नयी धारा जर्मनी में गेस्टाल्ट मनोविज्ञान (Gestalt psychology) के रूप आई। मैक्स वरदायीमर (Max Werdayimer) , जो कि एक जर्मन मनोवैज्ञानिक थे ने 1912 इस्वी में अपने सुप्रसिद्ध फाई फेनोमेना (ø Phenomenon) के आधार पर बताया कि जब अनेक चमकते बल्बों से प्रकाश हमारे दृष्टिपटल पर पड़ता है तो हम प्रकाश की गति का अनुभव करते हैं। जब हम कोई चलचित्र देखते हैं तो हम स्थिर चित्रों की तेज गति से चलती प्रतिमाओं को अपने दृष्टिपटल पर देखते हैं। इसलिए, हमारा प्रात्यक्षिक अनुभव अपने अवयवों से अधिक होता है। अनुभव समग्रतावादी होता है- यह एक गेस्टाल्ट होता है। गेस्टाल्ट वादियों ने मन के कार्य अथवा मन की संरचना की बजाए प्रात्यक्षिक अनुभवों के एकीकरण को महत्वपूर्ण माना। मन के अवयवों की उपेक्षा करते हुए गेस्टाल्टवादियों ने तर्क दिया कि दुनिया को देखने का हमारा प्रात्यक्षिक अनुभव प्रत्यक्षण के अवयवों के समस्त योग से अधिक होता है। दूसरे शब्दों में,हम जो अनुभव करते हैं वह वातावरण से प्राप्त आगतों से अधिक होता है। 1940 के दशक में कोफ्का, वरदायीमर एवं कोहलर ने अधिगम एवं प्रत्यक्षण पर बहुत से प्रयोग किये और उन प्रयोगों के आधार पर कई सिद्धांतों का विकास किया। इस प्रकार गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों ने व्यवहारवाद की विचारधारा मानव के निरीक्षण योग्य व्यवहार के छोटे छोटे अवयवों का अध्ययन, या मनोविश्लेशणवाद के चेतना के अध्ययन, प्रकार्यवादियों के मन के कार्यों का अध्ययन, अथवा संरचना वादियों के मन की संरचना के अध्ययन से बिलकुल अलग

दृष्टिकोण प्रस्तुत किया हालाँकि गेस्टाल्टवाद ज्यादा लोकप्रिय नहीं हो सका परन्तु गेस्टाल्टवाद की विचारधारा एवं उसके आरंभिक प्रयोगों ने संज्ञानात्मक विचारधारा को जन्म दिया जिसने मनोविज्ञान पर छाए वर्षों से व्यवहारवाद के वर्चस्व को तोड़ा। संज्ञान वादियों की मान्यता के अनुसार एक व्यक्ति का व्यवहार सिर्फ वातावरणीय कारकों पर निर्भर नहीं करता है बल्कि वह व्यक्ति के संज्ञान पर भी निर्भर करता है अतः मानव व्यवहारों का अध्ययन वातावरण एवं उसके संज्ञान दोनों के सन्दर्भों में किया जाना समीचीन है।

मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के विकास में गेस्टाल्टवादियों एवं संज्ञानवाद का योगदान:

- संज्ञानवादी विचारधारा के मनोवैज्ञानिक कर्ट लेविन (Kurt Lewin), जिन्होंने गणित की तरह मनोविज्ञान में जीव और वातावरण के बीच के संबंधों की व्याख्या के लिए सूत्र विकसित करने का प्रयास किया जिसे लेविन का क्षेत्र सिद्धांत (Lewin's Field Theory) के नाम से जाना जाता है, ने 1944 में सर्वप्रथम क्रियात्मक अनुसन्धान की बात कही जो वर्तमान समय में न केवल मनोविज्ञान बल्कि अन्य सामाजिक विषय यथा समाज विज्ञान, प्रबंधन आदि में भी अत्यंत लोकप्रिय हुआ।
- संज्ञानवाद ने मनोविज्ञान को एक नया आयाम दिया और व्यवहारों के साथ साथ मानसिक प्रक्रियाओं को भी बराबर महत्व दिया।
- संज्ञानवादियों ने मनोविज्ञान में परिमाणात्मक अनुसन्धान के साथ साथ गुणात्मक अनुसन्धान पर भी जोर दिया ।

3.9 मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान में सांख्यिकी एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों का योगदान

मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान का विकास न केवल मनोविज्ञान के विकास का परिणाम है बल्कि इसपर अन्य सामाजिक विषयों, विज्ञान विषयों आदि में हो रहे विकास का भी प्रभाव पड़ा है। गणितीय एवं सांख्यिकीय विकास में प्रायिकता के सिद्धांत का विकास और तदनुसार डी मायवर (De-Moivere) द्वारा 1733 इस्वी में सामान्य बंटन mal Distribution) की अवधारणा का विकास तथा गॉस (Gauss) द्वारा सामान्य प्रायिकता वक्र के विकास ने मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों में परिमाणात्मक अनुसन्धान को बढावा दिया। एक मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान कर्ता होने के नाते मनोवैज्ञानिक अध्ययनों एवं अनुसंधानों में सामान्य प्रायिकता वक्र का महत्व छुपा हुआ नहीं है बुद्धि लब्धि की संकल्पना को दर्शाने की बात हो या टाइप-I टाइप-II त्रुटि (Type I and Type II error) की बात हो वह बिना सामान्य प्रायिकता वक्र की सहायता के संभव ही नहीं है। फ्रेडरिक ली प्ले द्वारा 1829 इस्वी में विकसित केस अध्ययन विधि जिसका प्रयोग उन्होंने मूलतः पारिवारिक बजट सम्बन्धी अपने सांख्यिकीय अध्ययनों के लिए किया था, भी मनोविज्ञान में व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता

रहा है। गोस्सेट (Gosset) द्वारा 1908 में विकसित किया गया t- परीक्षण वर्तमान में मनोविज्ञान के प्रायोगिक अनुसन्धान में सार्थक अंतर पता करने के लिए बहुतायत से प्रयुक्त होता है। मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों को उन्नत बनाने में आर ए फिशर द्वारा विकसित प्रसारण विश्लेषण (Analysis of Variance) जो वस्तुतः t टेस्ट का विस्तार एवं संशोधित रूप है, प्रायोगिक अनुसंधानों में दो से अधिक समूहों के बीच सार्थक अंतर पता करने हेतु एक महत्त्वपूर्ण परीक्षण है। आर ए फिशर ने 1925 में अपनी पुस्तक Statistical Methods for Research Workers प्रकाशित किया जिसने सामाजिक एवं व्यवहारिक विज्ञानों में मेटा विश्लेषण (Meta Analysis) एवं पी मान (P-value) को अत्यंत लोकप्रिय बनाया। सर फ्रांसिस गाल्टन (1822-1911) द्वारा दिया गया सहसम्बन्ध की संकल्पना एवं कार्ल पियर्सन (1857-1936) द्वारा दिया गया सहसंबंध का सूत्र मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों में सहसम्बंधात्मक अनुसंधान की आधारशिला है। 1932 ई में रेनिस लिकर्ट ने मनोविज्ञान एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों में बहुतायत से प्रयुक्त लिकर्ट स्केल (Likert Scale) का विकास किया। सामाजिक एवं व्यावहारिक विज्ञानों में अनुसन्धान को उन्नत बनाने के क्रम में एस एस स्टेवेंस (SS Stevens) द्वारा विकसित मापन के स्तर की संकल्पना जो कि 1946 में On the theory of scales of measurement शीर्षक से प्रकाशित हुई ने भी मनोवैज्ञानिक मापन के प्रकृति को समझने, तदनुसार उपयुक्त स्तर का मापन चुनने एवं सूचना संग्रहण के लिए उपकरण विकसित करने में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान को आगे बढ़ाने में ली क्रोंन्बैक द्वारा परीक्षण की विश्वसनीयता(Reliability of Test) के सिद्धांत एवं क्रोंन्बैक अल्फ़ा आदि भी ऐसे महत्त्वपूर्ण कारक हैं जिन्होंने मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान को आगे बढाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

3.10 इकाई सारांश

मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के क्रमिक विकास का इतिहास मनोविज्ञान के विभिन्न सम्प्रदायों (Schools of Psychology) के विकास में समाहित है।वुण्ट (1832-1920) ने मनोविज्ञान के वैज्ञानिक अध्ययन हेतु पहली मनोविज्ञान प्रयोगशाला (Psychology Laboratory) की स्थापना सन् 1879 ई. में लिपजिग जर्मनी में स्थित लिपजिग विश्वविद्यालय (जो अब कार्ल मार्क्स विश्वविद्यालय के रूप में जाना जाता है) में की। संरचनावाद ने मनोविज्ञान को दर्शन शास्त्र से अलग एक विषय के रूप मे स्थापित किया, मनोविज्ञान में प्रायोगिक अध्ययनों को बढ़ावा दिया एवं मनोवैज्ञानिक अध्ययन हेतु नवीन वस्तुनिष्ठ, वैज्ञानिक विधियों के बारे में सोचने एवं उनका विकास करने के लिए अभिप्रेरित किया। प्रकार्यवाद अपनी सीमाओं की वजह से ज्यादा लोकप्रिय नहीं हो पाया परन्तु मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान को आगे बढ़ाने में उनका योगदान महत्त्वपूर्ण है। प्रकार्यवादियों ने मनोविज्ञान में मापन एवं मूल्यांकन को के क्षेत्र को उन्नत बनाया। उन्होंने अनुसंधान से सम्बंधित महत्त्वपूर्ण उपकरण यथा प्रश्नावली, इन्वेंटरी, मानसिक परीक्षण आदि देकर उन्नत बनाया। प्रकार्यवादियों ने मनोविज्ञान के सिद्धांतों के अन्य विषयों में प्रयोग पर विशेष बल देकर मनोविज्ञान के

अध्ययन क्षेत्र को वृहत बनाया एवं मनोविज्ञान में अनुप्रयुक्त अनुसन्धान को बढ़ावा दिया। जॉन डीवी जो प्रकार्यवाद के प्रबल समर्थक थे, ने अधिगम एवं अभिप्रेरणा आदि मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के शैक्षिक प्रयोग पर महत्त्वपूर्ण काम किया जिसने अधिगम से सम्बंधित प्रयोगों को उत्प्रेरित किया।व्यवहारवादियों ने संरचना वाद एवं प्रकार्य वाद से बिलकुल अलग व्यक्ति के मापनीय एवं निरीक्षण योग्य व्यवहारों को मनोविज्ञान के अध्ययन का विषय बताया और मनोविज्ञान को अन्य विज्ञान विषयों की तरह वस्तुनिष्ट प्रेक्षण पर आधारित बनाने की कोशिश की । व्यवहारवादियों ने मनोवज्ञान के अध्ययन का केंद्र व्यवहार को बनाया और मानव व्यवहार को अनुवांशिकता का परिणाम मानने की बजाये उसे वतावारणीय अधिगम का परिणाम माना और तदनुसार वस्तुनिष्ट प्रेक्षण जैसे वैज्ञानिक विधियों को विकसित किया मनोविश्लेशणवाद ने गुणात्मक अनुसन्धान की एक प्रमुख विधि केस स्टडी की आधारशिला रखी एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार को आंकड़ा संग्रहण की विधि के रूप में प्रयोग किया।

संज्ञानवादी विचारधारा के मनोवैज्ञानिक कर्ट लेविन (Kurt Lewin) ने 1944 में सर्वप्रथम क्रियात्मक अनुसन्धान की बात कही जो वर्तमान समय में न केवल मनोविज्ञान बल्कि अन्य सामाजिक विषय यथा समाज विज्ञान, प्रबंधन आदि में भी अत्यंत लोकप्रिय हुआ। मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान की दृष्टि सांख्यिकी एवं अन्य सामाजिक विषयों के विकास का का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है जिनमे प्रमुख हैं : डी मायवर (De-Moivere) द्वारा 1733 इस्वी में सामान्य बंटन mal Distribution) की अवधारणा का विकास तथा गॉस (Gauss) द्वारा सामान्य प्रायिकता वक्र (Normal Probability Curve) का विकास, फ्रेडरिक ली प्ले द्वारा 1829 इस्वी में विकसित केस अध्ययन विधि, गोस्सेट (Gosset) द्वारा 1908 में विकसित किया गया t- परीक्षण, आर ए फिशर द्वारा विकसित प्रसारण विश्लेषण (Analysis of Variance), मेटा विश्लेषण (Meta Analysis) एवं पी मान (P-value) कार्ल पियर्सन (1857-1936) द्वारा दिया गया सहसंबंध का सूत्र , 1932 ई में रेनिस लिकर्ट द्वारा विकसित लिकर्ट स्केल (Likert Scale) एस एस स्टेवेंस (SS Stevens) द्वारा विकसित मापन के स्तर, ली क्रोंन्बैक (Lee Cronbach) द्वारा परीक्षण की विश्वसनीयता(Reliability of Test) के सिद्धांत आदि। उपरोक्त सभी कारकों ने मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान को वर्तमान स्तर तक लाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

3.11 सन्दर्भ ग्रन्थ / अन्य अध्ययन

- Aahuja, R. (2006). Research Methodology, Rawat Publishers, New Delhi
- Best, J.W. & Kahn, J.V., (2008) Research Methodology in Education, Prentice Hall of India, New Delhi

- Garret H.E., (2005). Statistics in Psychology & Education, Paragon International Publisher, New Delhi
- Gupta, S.P., (2013). अनुसन्धान दिग्दर्शिका, Sharda Prakashan, Allahabad
- Kaul, L. (2009) Methodology of Educational Research, Vikas Publications, New Delhi
- Kerlinger, F.N., (2012). 'Foundations of Behavioural Research', Surjeet Publications, New Delhi
- Kothari, C.R., (2008).Research Methodology: Methods and Techniques, New Age International, New Delhi
- Kumar, A., (2006) Measurement and Evaluation in Research and Statistics, Bharti Bhawan, Patna, Bihar
- Ranjit, K. (2011). Research Methodology: A Step by Step Guide for Beginners, Sage Publications

3.12 अभ्यास प्रश्न

1. मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान क्या के विकास का संक्षिप्त इतिहास लिखिए ।
2. मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के विकास में संरचनावाद एवं विलियम वुंट के योगदानों की चर्चा कीजिये।
3. मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के विकास में सांख्यिकीय विकास की भूमिका की चर्चा करें ।
4. व्यवहारवाद एवं गेस्टाल्ट वाद ने मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान को कैसे प्रभावित किया?
5. मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान के विकास में प्रकार्यवाद का क्या योगदान रहा?
6. मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान का संक्षिप्त विकासक्रम लिखिए ।

इकाई - 4

मौलिक एवं प्रयुक्त अनुसंधान

Fundamental and Applied Research

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 अनुसंधान का अर्थ

4.3.1 अनुसंधान की परिभाषाएँ

4.4 अनुसंधान के प्रकार

4.5 शोध उद्देश्य की दृष्टि से अनुसंधान का वर्गीकरण

4.5.1 मूलभूत शोध

4.5.1.1 मूलभूत अनुसंधान की विशेषताएं

4.5.2 व्यावहारिक (प्रयुक्त) अनुसंधान

4.5.2.1 अनुप्रयुक्त अनुसंधान की विशेषताएं

4.6 सारांश

4.7 शब्दावली

4.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

4.9 संदर्भग्रंथसूची

4.1 प्रस्तावना

शिक्षा एवं मनोविज्ञान में अनेक व्यावहारिक समस्याओं के वैज्ञानिक समाधान हेतु शोध किया जाता है | समस्या की प्रकृति उद्देश्य, प्रायोजक, चरों की दृष्टि से उसे विभिन्न भागों में बांटा जा सकता है | प्रस्तुत अध्याय में यही बताने का प्रयास किया गया है कि विभिन्न आयामों की दृष्टि से उसका वर्गीकरण किस तरह से हो सकता है और उनमें से मूलभूत अनुसंधान एवं व्यावहारिक अनुसंधान की प्रकृति, विशेषताएं क्या है और उन्हें कैसे उपयोग में लाया जा सकता है।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन करने के पश्चात आप -

- अनुसंधान का अर्थ समझ सकेंगे |
- अनुसंधान के प्रकारों के बारे में जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- मूलभूत अनुसंधान का अर्थ एवं प्रकार के बारे में जान पायेंगे।
- मूलभूत अनुसंधान के गुण एवं दोषों की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- प्रयुक्त शोध का अर्थ एवं प्रकार के बारे में जान पायेंगे।

4.3 अनुसंधान का अर्थ

मूलत: अनुसंधान शब्द को अंग्रेजी भाषा में 'रिसर्च कहा जाता है। 'Re-search' शब्द का हिन्दी अर्थ, बार बार होता हैं तथा सर्च का अर्थ खोज करना अथवा खोजना होता है। निश्चित ही यह अंग्रेजी का शब्द अनुसंधान की प्रक्रिया को दर्शाता है जिसके द्वारा अनुसंधानकर्ता किसी विषय को बार बार खोजता है, जिसके माध्यम से वह उसके विषय में विभिन्न समंकों को एकत्र करता है तथा उनके विश्लेषण के आधार पर उसके संबंध में आपका निष्कर्ष निकलना, नये सिद्धान्तों की खोज करना तथा उनसे प्राप्त समंकों का विश्लेषण करना ही अनसंधान के अन्तर्गत आता है।

अनुसंधान में किसी समस्या का वैज्ञानिक अन्वेषण भी सम्मिलित होता है। अन्वेषण की क्रिया इस तथ्य की परिचायक है कि समस्या को अति निकटता से ही देखा जाये। उसकी पृच्छा (Inquiry) की जाये तथा उसका ज्ञान (Knowledge) प्राप्त किया जाये।

4.3.1 अनुसंधान की परिभाषाएं

समय समय पर अनेक विद्वानों ने इस विषय पर अपने अपने मत प्रकट किये हैं। इन विद्वानों ने अपने अपने दृष्टिकोण से अनुसंधान के विभिन्न आयामों को परिभाषित करने का प्रयास किया है। इन्हीं में से प्रमुख विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाएं निम्नलिखित हैं -

1- ''अनुसंधान एक प्रक्रिया है, जिसमें खोज प्रविधि का प्रयोग किया जाता है, जिसके निष्कर्षों की उपयोगिता हो, ज्ञान वृद्धि की जाये, प्रगति के लिए प्रोत्साहित किया जाये, समाज के लिए सहायक हो तथा मनुष्य को अधिक प्रभावशाली बना सकें। समाज तथा मनुष्य अपनी समस्याओं को प्रभावशाली ढंग से हल कर सकें।

मेकग्रेथ तथा वाटसन

"Research is a process which has utility to the extent that class of enquiry employed as the research activity which is capable of adding

knowledge of stimulating progress and helping society and man related more efficiently to the problems that society and man perpetuate and create."

2- ''अनुसंधान ऐसी व्यवस्थित प्रक्रिया है, जो नई खोज करती हैं तथा संकलित एवं सुसंगठित ज्ञान का विकास करती है।

जॉन बेस्ट

"Research is a systematic activity directed towards the discovery and the development of an organized body of knowledge."

3- शैक्षिक समस्याओं के समाधान के लिए व्यवस्थित रूप से बौद्धिक ढंग से वैज्ञानिक विधि प्रयोग अर्थापन को अनुसंधान कहते हैं। इसके विपरित किसी व्यवस्थित अध्यापक के द्वारा शिक्षा विकास किया जाये तो उसे शैक्षिक अनुसंधान कहते हैं।''

जार्ज जे.मूले

"The systemic and scholarly application of the scientific method interpreted in its broader sense to the solution of education problems inversely, the systematic study designed to promote the development of education as a science can be considered educational research.

G.J. Mouly

4. ''किसी समस्या के संदर्भ में ईमानदारी, विस्तार तथा बुद्धिमान से तथ्यों, उनके अर्थ तथा उपयोगिता की खोज करना ही अनसंधान है।''

- पी.एम.कुक

"Research is a honest, extension, intelligent searching for facts and their meaning and implication with reference to given problem''.

5 अनुसंधान किसी समस्या के अच्छे समाधान के लिए क्रमबद्ध तथा विशुद्ध चिन्तन एवं विशिष्ट उपकरणों के प्रयोग की विधि है।

"Research is simply as systematic and refined technique of thinking employing specialized tools instruments or procedures in order to obtain a more adequate solution of a problem".

6 ''अनुसंधान उन समस्याओं के अध्ययन की एक विधि है, जिन्हें अपूर्ण तथा पूर्ण समाधान तथ्यों के आधार पर खोजना है। **डब्ल्यू.एस. मुनरो**

"Research may be difined as a method of studying problem whose solution are to be derived partly or wholly from facts. – W.S. Monroe

7 अनुसंधान नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए व्यवस्थित प्रयास है।''

एल.वी. रैडमैन तथा अन्य

"Research is systematized effort to gain new knowledge."

8 अनुसंधान वस्तुओं, प्रत्ययों तथा संकेतों आदि को कुशलतापूर्वक व्यवस्थित करता है, जिसका उद्देश्य सामान्यीकरण द्वारा विज्ञान का विकास, परिमार्जन अथवा सत्यापन होता है, चाहे वह ज्ञान व्यवहार में सहायक हो अथवा कला में।''

- सामाजिक विज्ञान का ज्ञान कोष

4.4 अनुसंधान के प्रकार

किसी भी क्षेत्र में अनुसंधान एक सोद्देश्य क्रिया है जो गवेषणात्मक सत्यापनीय या प्रयोज्य हो सकती है। इसके द्वारा किसी नये का व्यावहारिक उपयोग प्रदर्शित किया जा सकता है। इस शोध के विभिन्न प्रकार हो सकते हैं। यद्यपि इन्हें अलग अलग वर्गों में बांटना जरा कठिन है, तथापि निम्नलिखित आधार पर वर्गीकरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

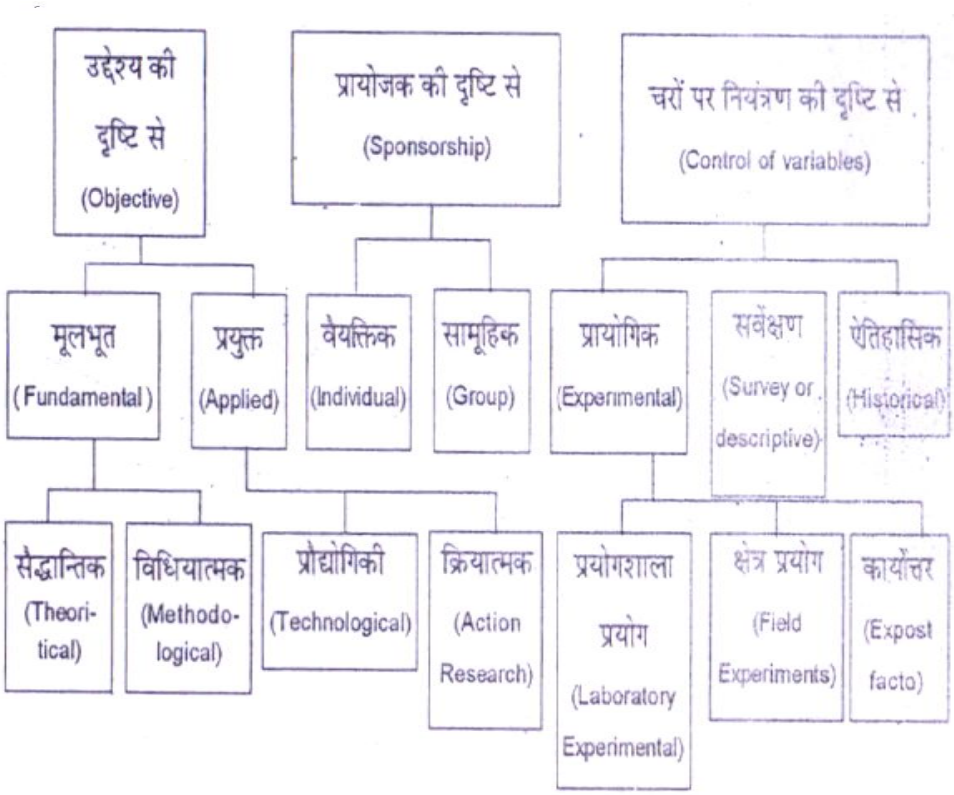

4.5 शोधकार्यों के उद्देश्यों की दृष्टि से अनुसंधान का वर्गीकरण

इस आधार पर शोध को दो वर्गों में बाँटा गया है-

4.5.1 मूलभूतशोध

इस प्रकार के शोध का प्रमुख उद्देश्य व्यापक सामान्यीकरणों का निर्माण करके मौलिक सत्यों की खोज करना है। सामान्यीकरण सिद्धान्तों की व्याख्या, वैज्ञानिक सिद्धान्तों तथा नियमों की जानकारी से ये सत्य प्रतिपादित होते हैं, परन्तु इनका विभिन्न क्षेत्रों में किस प्रकार उपयोग हो या ना हो, इससे शोधकर्ता का कुछ लेना देना नहीं होता। ज्ञान केवल ज्ञान के लिए यही उद्देश्य वह लेकर चलता है। उसकी प्रेरणा का स्त्रोत है उसकी बौद्धिक जिज्ञासा और नये तथ्यों, सिद्धान्तों और संबंधों की जानकारी प्राप्त करने की अदम्य पिपासा। प्राकृतिक एवं सामाजिक दृश्य घटनाआं की वास्तविकता की खोज मानव जाति के लिए लाभदायक या हानिकारक हो सकती हैं परन्तु खोज के परिणामों के प्रयोग को निर्धारित करना मूलभूत शोध का लक्ष्य नहीं है।

तथापि मूल भूत अनुसंधान के परिणामों या जानकारी का व्यापक रूप से प्रयोग होता है। उसकी वैधता और उपयोग किसी एक विशेष स्थान या समय तक सीमित नहीं रहती। उदाहरण के लिए सीखने के नियम और सिद्धान्त जो शिक्षा ओर मनोविज्ञान की देन है। आइन्सटीन का सापेक्षता का सिद्धान्त, माल्थस का जनसंख्या का सिद्धान्त इत्यादि किसी भी स्थान या समय की सीमा से परे हैं। यह शोध शाश्वत सार्वकालिक और सार्वदेशीय होता है।

परन्तु मूल भूत अनुसंधान से प्राप्त ज्ञात (सत्य) अंतिम नहीं होता।शोधकर्ता खुले मस्तिष्क से काम करता है। यदि वह यह देखता है कि वैज्ञानिक तरीके से प्राप्त कोई नया ज्ञान नये ज्ञान के कारण त्याग देता है। इसलिए उसे कोई भी सत्य तब तक स्वीकार है जब तक उसे किसी दिशा में चुनौति नहीं मिली हो या उसे गलत सिद्ध न किया हो।

मूलभूत शोधों को भी दो वर्गों में बांटा जा सकता है।

1- **सैद्धान्तिक शोध (Theoretical Research)**

किसी सिद्धान्त रचना के योगदान देने वाले अनुसंधान को बुनियादी अनुसंधान कहते हैं। इसके अन्तर्गत जीवन के किसी भी क्षेत्र में वैज्ञानिक ज्ञान की प्रगति के लिए किया गया कोई भी अनुसंधान आता है। विज्ञान सम्मत तरीके से प्रकृति के रहस्यों की खोज करना इसका मुख्य उद्देश्य होता है। यह नवीन ऐंद्रिक अनुभवों तथा संबंधों के विचार को जगत के व्यापक सम्पूर्ण भण्डार से संबंधितकरने का प्रयत्न करता है।

इस प्रकार का शोध के फलस्वरूप एक सर्वथा नवीन विचार भण्डार का जन्म होता है जिससे अन्नत: मनुष्य अपने जीवन के उद्देश्यों को समझने और प्राप्त करने में सहायता प्राप्त

कर सकता है। ऐसे शोधों को परिणामों की सार्थकता, भविष्य में रहती है तथा प्राकृतिक दृश्य घटनाओं की भविष्यवाणी करने में काम आती है।

2- विधियात्मक शोध (Methodological Research)

जब कोई शोधकर्ता शोध करने की विधि के सैद्धान्तिक पक्षों की जानकारी प्राप्त करने की कोशिश करता है तो वह विधियात्मक शोध कहलाता है। ऐसे शोध में वह मापन, गणित, सांख्यिकी तथा आंकड़ों तथ्यों को प्राप्त करने से तथा उनके विश्लेषण करने से संबंधितऐसे सार्वदेशिक, सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्षो का विकास करने का प्रयत्न करता है जो उसे वैज्ञानिक शोध की ओर अधिक वस्तुनिष्ठ और उपयोगी बनाने में सहायक हो। 19वीं शताब्दी का सबसे बड़ा अविष्कार, अविष्कार की विधि का आविष्कार करना था - इस विधि के एक तत्व को यह खोज करना है कि परम सत्य और वैज्ञानिक विचारों की वर्तमान खाई को केसे पाटा जाय।

– Whitehead, 1950

विधियात्मक शोध मुख्यत: तीन प्रमुख क्षेत्रों में किया गया है -

अ) मापन

इस क्षेत्र में मापन की वैधता तथा विश्वसनीयता से संबंधित समस्याऐं तथा मापन के उपकरणों के निर्माण में आने वाली व्यावहारिक समस्याऐं जैसे पदों की रचना, पदों का विश्लेषण इत्यादि हो सकती हैं।

ब) गणित और सांख्यिकी में दक्षता

गणित और सांख्यिकी शोध तथ्यों के वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन में सहायक होती है। फिर भी एक मनोरंजक जानकारी यह है कि सांख्यिकी से संबंधित विधियात्मक शोधों में कुछ प्रमुख योगदान उन लोगों का है जो मोलिक आधार भूत शोध करने वाले न होकर व्यावहारिक शोधकर्ता थे जैसे गाल्टन फिशर थर्सटन, स्पीयर मेन इत्यादि।

इस प्रकार शिक्षा मनोविज्ञान तथा अन्य व्यवहारगत विज्ञानों में गणित के उपयोग में काफी रूचि ली जा रही है। सेट सिद्धान्त और संभाव्यता सिद्धान्त का इन विज्ञानों में प्रयोग एक आम बात है । इसी प्रकार आव्यूह बीज गतिणत और अवकलन गणित की अनेक अवधारणायें बहुचर विश्लेषण् कारक विश्लेषण और समाजसमिति में सफलता पूर्वक प्रयोग की गई है तथा अनेक गणितीय विधियों का अब व्यवहार जन्य समस्याओं के समाधान के लिए विकास किया जा रहा है।

स) तथ्य संग्रह तथा विश्लेषण की विधियों में -

विधियात्मक शोध के इस क्षेत्र में कुछ इस प्रकार की समस्याओं के समाधान हो जाता है जैसे साक्षात्कार सूचियों और विधियों, प्रेक्षण तकनीकों तथा तथ्य संग्रह करने की विधियों के परिष्कार जैसी समस्यायें। उदाहरण के लिए एक समसरू समय के समय पक्षपता के कारकों को जानने और उन पर नियंत्रण करने की हो सकती है या विश्लेषण में तथ्यों को मात्रात्मक रूप देने के लिए वस्तुनिष्ठ विधि के निर्माण की हो सकती है।

विधियात्मक शोध के बारे में शिक्षा, मनोविज्ञान तथा समाज शास्त्र के बहुत से व्यावसायिक जनों ने नकारात्मक भावना व्यक्त की है। विधियात्मक क्षेत्र के शोध कर्ताओं को यह लोग विधि वादी मानते हैं तथा विधियात्मक शोध को शेधकर्ता का आवश्यक दायित्व स्वीकार नहीं करते। यह एक बड़ी विचित्र स्थिति है कि शिक्षा, समाज शास्त्र और मनोविज्ञान के कई बड़े ही सक्षम कल्पनाशील तथा सृजनशील व्यक्ति विधि वादी रहे हैं और अब भी हैं। बिना किसी प्रकार का विधिवादी हुए भी एक साधारण मान्य शोध की जा सकती है, परन्तु इसके बिना वास्तव में उच्चकोटि का शोध करना लगभग असंभव है। (Kerliner, 1893 p 704)

4.5.1.1 मौलिक अनुसंधान की विशेषताएं (Characterstics of Fundamental Research)

1- मौलिक अनुसंधान, व्यवस्थित अनुसंधान एवं विशेषज्ञातें का क्षेत्र |
2- विशेष कौशल अनुभव एवं अध्ययन क्रमबद्ध |
3- जटिल तरीका व्यापक सामग्री नवीन उद्भवनाएं |
4- अनवरत अध्ययन प्रेक्षण तथा वैध साक्ष्यों के आधार पर सिद्धान्तों का प्रतिपादन एवं व्याख्या |
5- प्राचीन अधिगम शिक्षण सिद्धान्तों की नवीनतम विवेचना |
6- ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर तत्वों के सिद्धान्तों की नवीन विवेचना |
7- खोजे गये तथ्यों, विवेचनों एवं साक्ष्यों का किसी परिकल्पना के संदर्भ में निरीक्षण एवं परीक्षण |
8- मानक चिन्तन के आधार पर युगानुरूप तथ्यों की व्याख्या |

4.5.2 व्यावहारिक (प्रयुक्त) अनुसंधान(Applied Research)

यह एक ऐसा अनुसंधान है जिसके किसी संभाव्य अथवा वर्तमान की किसी महत्वपूर्ण समस्या के समाधान के लिए भौतिक और व्यवहारगत विज्ञानों के आधारभूत सिद्धान्तों का प्रयोग किया जाता है। वास्तव में मूल भूत प्रयुक्त अनुसंधान के बीच का अन्तर इस बात में

ही है कि शोधकर्ता सिद्धान्त प्रतिपादन पर जोर दे रहा है या सिद्धान्त के व्यवहार या प्रयोग पर। दोनों की शोध प्रक्रिया में उतना खास अन्तर नहीं है।

मनोविज्ञान एवं शिक्षा के क्षेत्र में इस प्रकार के अनुसंधान का संबंध प्राय: व्यावहारिक समस्याओं के वर्तमानकालिक समाधान से रहता है । ऐसे शोध अध्ययन विशिष्ठ क्षेत्र आधारित एवं व्यावहारिक धरातल पर सम्पादित किये जाते हैं । मौलिक अनुसंधान के माध्यम से खोजे गये सिद्धान्तों एवं नियमों की विवेचना वर्तामन के संदर्भ में किसी क्षेत्र व समस्या को केन्द्र बिन्दु मान कर की जाती है तथा वास्तविक परिस्थितियों में इन नियमों एवं सिद्धान्तों की अनेक क्षेत्र बार एवं परिस्थिति बार अध्ययन कर के सिद्धान्तों को पुन: प्रतिपादन के सबल आधार के रूप में अनेक साक्ष्य प्रस्तुत किये जाते हैं उदाहरणार्थ - विभिन्न अधिगम विधियों का किसी वर्ग या स्थान के छात्रों की अधिगम शैली पर प्रभाव।'' परीक्षा प्रणाली में आयोजित सुधारों की उपयुक्तता छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि के सुधार के संदर्भ में । छात्रों की अध्ययन आदतों के सुधार में पुस्तकालय अध्ययन की उपयोगिता। अनप्रयुक्त या व्यावहारिक अनुसंधान की निम्न विशेषताएं प्रस्तुत की जा सकती है।

मूलभूत अनुसंधान की तरह प्रयुक्त शोध के परिणामों का समान परिस्थितियों में किसी भी देश या काल में व्यापक प्रयोग किया जा सकता है।

प्रयुक्त शोध को भी दो वर्गों में बांटा जा सकता है।

प्रौद्योगिकी अनुसंधान(Technologocal Research)

विज्ञान के द्वारा सार्वदेशिक और सार्वकालिक प्रयोज्य व्यापक सामान्य सिद्धान्तों का विकास होता है। जब इन सिद्धान्तों का प्रयोग किसी यंत्र के विकसित करने में, किसी कार्य स्थिति के नियंत्रण करने में या किसी भौतिक या सामाजिक वातावरण की सृष्टि करने में किया जाता है तो प्रौद्योगिकी का जन्म होता है। इस प्रकार भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों तथा अन्य तकनीकी संस्थानों, सैनिक सेवाओं, उद्योगों तथा आर्थिक क्षेत्रों में होने वाले अधिकतर अनुसंधान जिसमें भौतिक विज्ञानों, मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्तों का उपयोग में लाया जाता है, प्रयुक्त अनुसंधान के क्षेत्र में संदर्भ में शैक्षिक प्रोद्योगिकी के क्षेत्र में प्रयुक्त अनुसंधान का विशेष उल्लेख करना उपयुक्त होगा जिसकी जड़ें अब गहराई तक प्रवेश कर चुकी हैं तथा तेजी से इसका विकास हो रहा है।

3 क्रियात्मक शोध (Action Research)

किसी भी क्षेत्र में वहां कार्यरत लोग अपने काम को अच्छा बनाने के लिए स्वयं क्रियात्मक अनुसंधान करते हैं। इस प्रकार अपने क्रियात्मक योजना बनाते हैं जो उनकी पेशेवर समस्या का समाधान करती है या उनके कार्यप्रणाली में सुधार लाती है । इस प्रकार के शोध में शोधकर्ता और उससे लाभ उठाने वाला दोनों एक ही हैं अर्थात जो शोध करता है वही

उसका लाभ उठाता है। इस प्रकार के शोध की उपयोगिता एक स्थान (स्कूल या व्यवसाय) तक सीमित है और केवल तात्कालिक है। यह बात दूसरी है कि अन्य लोगों को भी इस शोध से अपने कार्य में कोई दिशा में मिल जाय परन्तु आवश्यक नहीं कि यह शोध साधारणत: प्रौद्योगिकी शोध की तरह व्यापक प्रभाव या उपयोग वाला हो। इस शोध को करने वाले की रूचि किसी सिद्धान्त या विधि के विकास में नहीं होती जैसा कि मूलभूत शोध में होता है।

4.5.2.1 अनप्रयुक्त अनुसंधान की विशेषताएं (Characterstics of Applied Research)

1- सामान्य नियमों एवं सिद्धान्तों की दैनिक कार्य क्षेत्र की समस्या के समाधान में संभावना|
2- अतीत के अध्ययन से वर्तमान को समझने का प्रयास वर्तमान समस्याओं के संदर्भ में|
3- मौलिक अध्ययन से शिक्षण प्रक्रिया एवं परिस्थिति में सुधार के प्रयास|
4- वर्तमान हेतु ''नीति निर्धारक प्रक्रिया'' में अनप्रयुक्त अनुसंधान की सार्थकता|
5- शिक्षा की विभिन्न क्षेत्रीय आधारभूत समस्याओं के समाधान|
6- अनुसंधान का ध्येय स्पष्टत: उपयोगितावादी एवं सुधारवादी|
7- अनप्रयुक्त अनुसंधान - मौलिक अनुसंधान पर आश्रित एवं पूरक दोनों ही है।
8- अनुप्रयुक्त अनुसंधान का क्षेत्र - अभिप्रेरणात्मक अनुसंधान, औद्योगिक अनुसंधान मनोचिकित्सा अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान आदि।

4.6 सारांश

अनुसंधान के उद्देश्य की दृष्टि से अनुसंधान को मुख्यत: मूलभूत एवं प्रयुक्त दो भागों में बांटा गया है मूलभूत अनुसंधान को भी पुन: सैद्धान्तिक एवं विधियात्मक रूप से बांटा गया है जबकि प्रयुक्त अनुसंधान को प्रोद्योगिकी एवं क्रियात्मक शोध के रूप में बांटा गया है।

4.7 शब्दावली

- **मूलभूत अनुसंधान -** वह अनुसंधान जिसके संचालन से किसी सिद्धान्त या नियम की स्थापना होती है।
- **प्रयुक्त अनुसंधान-** वह अनुसंधान जिसका उद्देश्य किसी व्यावहारिक समस्या के समाधान उस क्षेत्र के सैद्धान्तिक ज्ञान को उपयोग में लाकर करना होता है।

4.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

1 अनुसंधान किसे कहते हैं ?

2 मूलभूत अनुसंधान के कितने प्रकार है ?

3 प्रयुक्त अनुसंधान के कितने प्रकार है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न

1 मूलभूत अनुसंधान का क्या अर्थ है? उसके प्रकारों को परिभाषित कीजिए।

2 प्रयुक्त अनुसंधान का क्या अर्थ है उसके प्रकारों को परिभाषित कीजिए।

3 मूलभूत अनुसंधान की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न

1 विभिन्न दृष्टिकोणों से अनुसंधान का वर्गीकरण कीजिए एवं उद्देश्य की दृष्टि से किए गए वर्गीकरण की सविस्तार व्याख्या कीजिए।

4.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियां, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली |
- बेस्ट, जे. उस्लयू (1963) : रिसर्च इन एजूकेश्न, नई दिल्ली, प्रेटिंय हॉल |
- गुड, सी.वी. एवं स्केट्स डी.ई. (1954): मेथड्स ऑफ रिसर्च, न्यूयार्क एलिशन सेन्चुरी |
- एच.के. कपिल (2001) : अनुसंधान विधियां, (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा |
- एफ.एन. करलिंगर (1964) : फाउन्डेशन ऑफ विवेहरियल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं बिंसटन इंक, न्यूयार्क |
- भट्नगार, आर.पी. (1995) : शिक्षा अनुसंधान : विधि एवं विश्लेषण लायल बुक डिपो, कॉलेज रोड, मेरठ |
- शर्मा, आर.ए. (1995) : शिक्षा अनुसंधान, मरेठ इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ |
- सुखिया एस.पी.महरोत्रा, पी.पी. एवं मेहरोत्रा आर.एन. (1973) : शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा |
- सिद्धु के एस.(1985) : मेथड्स ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, नई दिल्ली, स्टरलिंग पब्लिशर्स|
- रायजादा बी.एस. (1999) : शिक्षा के अनुसंधान के आवश्यक तत्व |
- शर्मा, अरविन्द कुमार (2008) : शोध प्रविधियां एवं सूचना प्रौद्योगिकीएस एस पब्लिकेशनस, नई दिल्ली |
- जैन, एम.के. (2007) : शोध विधियां, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली |

इकाई - 5

प्रयोगात्मक एवं सहसम्बन्धात्मक अनुसंधान

Experimental & Correlational Research

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 प्रयोगात्मक अनुसंधान का अर्थ

5.3.1 प्रयोग क्या है ?

5.3.2 प्रयोग की विशेषताएँ

5.3.3 प्रयोग की मूलभूत अवधारणाएँ

5.4 प्रयोग के प्रकार

5.5 प्रयोगात्मक नियन्त्रण

5.5.1 नियन्त्रण की आवश्यकता

5.5.2 बाहरी चरों के प्रभाव

5.6 प्रायोगिक विधि के विभिन्न सोपान

5.7 प्रयोगात्मक अनुसंधान की सीमाएं

5.8 सहसम्बन्धात्मक अनुसंधान का अर्थ

5.9 सहसम्बन्धात्मक अनुंसधान की विशेषताएँ

5.10 सहसम्बन्धात्मक अनुसंधान के प्रकार

5.11 सहसम्बन्धात्मक अनुसंधान की सीमाएँ

5.12 प्रयोगात्मक तथा सहसम्बन्धात्मक अनुसंधान में अन्तर

5.13 सारांश

5.14 शब्दावली

5.15 स्वमूल्याकंन हेतु प्रश्न

5.16 संदर्भग्रंथसूची

5.1 प्रस्तावना

पिछले अध्याय में अनुसंधान के विभिन्न प्रकारों के अन्तर्गत उद्देश्य आधारित वर्गीकरण में मूलभूत एवं प्रयुक्त शोधों का अर्थ, विशेषताएं एवं इसके विभिन्न प्रकारों के बारे में अध्ययन किया था। अनुसंधानकर्ता के समक्ष कुछ ऐसी जिज्ञासाएं होती है जिसके प्रभाव को देखना महत्ती आवश्यकता होती है । उसे प्रयोग करके इसके प्रभाव को सार्थक रूप से देखना चाहता है ऐसी स्थिति में प्रयोगात्मक अनुसंधान की आवश्यकता होती है । प्रस्तुत अध्याय इसी अनुसंधान की विस्तार से व्याख्या करता है साथ ही अनुसंधान की वह परिस्थिति जिसमें दो चरों के मध्य सम्बन्ध ज्ञात करने की स्थिति आती है जिसे सहसम्बन्धात्मक अनुंसधान कहते है की भी चर्चा इस अध्याय में की गई है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- प्रयोगात्मक अनुसंधान का अर्थ जान पायेगें।
- प्रयोग का अर्थ, विशेषताएं जान जायेगें।
- प्रयोग की मूलभूत धारणाओं की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- प्रयोग के प्रकारों की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- प्रयोग नियन्त्रण एवं नियन्त्रण की आवश्यकता की समझ विकसित हो सकेगी।
- प्रायोगिक विधि के विभिन्न सोपानों की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- सहसम्बन्धात्मक अनुसंधान का अर्थ विशेषताएँ, प्रकार एवं सीमाओं की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- प्रयोगात्मक एवं सहसम्बन्धात्मक अनुसंधान के अन्तर कर सकेंगे।

5.3 प्रयोगात्मक अनुसंधान का अर्थ

प्रयोगात्मक अनुसंधान पूर्ण रूप से वैज्ञानिक विधि मानी जाती है | इस विधि के द्वारा एक अनुसंधानकर्ता किसी सूक्ष्म समस्या का समाधान प्रस्तुत करता है । इस विधि में अध्ययन नियन्त्रित परिस्थितियों में किया जाता है । इस कारण से इस विधि का प्रयोग व्यवहारिक दृष्टि से उचित है ।

जब कोई शैक्षिक अनुसंधानकर्ता प्रयोगात्मक विधि से अनुसंधान करता है तो वह मात्र भूतकालीन घटनाओं अथवा स्थितियों को देखता है और वह न किसी वस्तु के स्तर को निर्धारित करके उसकी यथास्थिति का अध्ययन करता है बल्कि वह पूर्ण नियन्त्रित परिस्थितियों में प्रयोगात्मक चर में परिवर्तन लाकर यह निश्चित करता है कि कोई भी परिस्थिति अथवा घटना कब और क्यों अथवा किस प्रकार घटित होती है? यहां पर प्रयोगात्मक अनुसंधान इस तथ्य का स्पष्टीकरण करता है कि जब सभी प्रकार के सम्बन्धित चरों या परिस्थितियों पर सावधानीपूर्वक नियन्त्रण करके प्रयोगात्मक चर में परिवर्तन किया जाये तो उसका क्या निष्कर्ष प्राप्त होता है।

इस विधि को सामाजिक विज्ञान में प्राकृतिक विज्ञान से ग्रहण किया है, जिसमें एक चर का नियम पूर्णता से लागू होता है। परन्तु इसमें सामाजिक विज्ञानों की प्रकृति की जटिलता के कारण न तो एक अनुसंधानकर्ता इस प्रकार का निश्चय कर सकता हे कि इस घटना का क्या यही परिणाम होगा? न यह सोच सकता है कि सम्बन्धित चरों पर नियन्त्रण सम्भव हैं|

5.3.1 प्रयोग क्या है

निश्चय ही हम जानते हैं कि प्रयोगात्मक विधि एक पूर्ण रूप से वैज्ञानिक विधि है। इस विधि के द्वारा कार्य कारण प्रभाव सम्बन्ध प्रदर्शित होने की संभावना रहती है। इस विधि के माध्यम से किसी वस्तु अथवा उद्देश्य की व्याख्या नहीं की जा सकती | यह विधि इस कारण से विवरणात्मक विधि से विपरीत मानी जाती है। इस विधि के विषय में विभिन्न विद्वानों दी गयी परिभाषाएँ निम्नलिखित है :-

(1) ''प्रयोग परिकल्पना के परीक्षण की एक विधि है।'' **- जहोदा**

"It is a method of testing hypothesis."

(2) ''नियन्त्रित दशाओं में किये गये परीक्षण ही प्रयोग है।'' **- एफ.एस.चैपिन**

"An experiment is an observation under controlled conditions."

इस परिभाषा के अनुसार प्रयोग में नियन्त्रण होना अति आवश्यक है। इन नियन्त्रकों की अनुसंधानकर्ता चर राशियों को हटाने से अथवा बढ़ाकर प्राप्त कर सकता है।

(3) ''प्रयोग प्राप्त सूचनाओं के आधार पर तैयार किया हुआ प्रश्न है, जिसका उतर प्रकृति से प्राप्त किया जाता है, जिससे और अधिक ज्ञान बढ़ सके। इसलिए प्रयोग द्वारा घटना का केवल निरीक्षण ही नहीं होता अपितु उद्देश्यपूर्ण निरीक्षण होता है।'' **ई.बी.विल्सन**

"An experiment is a question framed on the basis of what is known and addressed to nature to elicit further knowledge. It thus transcends mere observation or collection of materials, it is consciously directed, purposeful of all observation."

- E.B. Wilson

Introduction to scientific Research, McGraw Hill book, Co, New York.

(4) ''प्रयोग में बहुधा किसी घटना का ज्ञान दशाओं में कराया जाता है तथा बाहरी प्रयोग को यथासंभव दूर करते हुए निरीक्षण किया जाता है, जिससे प्रंपच के सम्बन्ध को भली प्रकार प्रदर्शित कियाजा सके'' **- बेवरीज**

"An experiment usually consists in making an event occur under are eliminated and close observation is possible, so that relationship between phenomena can be revealed." **-Beveride**

The art of scientific Investigation, W.W. Morton is Co., New York.

(5) ''प्रयोग का मूलाधार स्वतंत्र चर में परिवर्तन का परतंत्र चर पर पढ़ने वाले प्रभाव का अध्ययन है।''

- फटिंस्टजर

"The essence of an experiment may be described as observation the effect on a dependent variable of the manipulation of an independent variable."

-Festinger

(6) ''शिक्षा में प्रयोग उस प्रकार के शैक्षिक अनुसंधान को कहते है, जिसमें अनुसंधानकर्ता उस शिशु अथवा शिशुओं के समूह की शिक्षा से सम्बन्धित तत्वों का नियन्त्रण कर उसकी उपलब्धि पर प्रभाव देखता है।'' **-डब्ल्यू.एम.मुनरो'**

"Experimentation is the name given to the type of educational research in which the investigation controls the educative factors to which a child or group of children is subjected during the period and observes the resulting achievement."

-W.S. Monroe

उपरोक्त परिभाषाओं में निम्नलिखित महत्वपूर्ण शब्दों का प्रयोग हुआ है, जिसका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है -

(1)	व्यवहार	(2)	व्यवहार चर,
(3)	परतंत्र चर	(4)	बाहरी चर,
(5)	नियन्त्रित समूह	(5)	प्रयोगात्मक समूह।

उपरोक्त शब्दों का संक्षिप्त विश्लेषण निम्नलिखित है -

1- **व्यवहार -** व्यवहार से तात्पर्य उस प्रायोगिक स्थिति से है, जो कि प्रायोगात्मक अध्ययन के लिए प्रस्तुत की जाती है।

2- **व्यवहार चर -** जिस चर को अनुसंधानकर्ता परिवर्तित करता है, व्यवहार चर कहलाता है। इसकी प्रकृति स्वतंत्र होती है। वास्तविक रूप से सभी चरों की प्रकृति स्वतंत्र होती है। परन्तु सभी प्रकार के स्वतंत्र चर प्रयोगात्मक व्यवहार की श्रेणी में नहीं आते क्योंकि एक ही अध्ययन में अनेक स्वतंत्र चर होते हैं। अत: यहाँ अनुसंधानकर्ता सभी को परिवर्तित नहीं कर सकता। इस प्रकार से वहीं स्वतंत्र चर व्यवहार कहा जायेगा, जिसका कि परिवर्तन अनुसंधानकर्ता कर सकता है।

3- **परतंत्र चर -** वह चर जो स्वतंत्र चर के परिवर्तन से प्रभावित होता है, उसे परतंत्र चर कहा जाता है।

4- **बाहरी चर -** इस प्रकार के चर के लिए इण्टरवीमिंग तथा कनफाउण्डिंग शब्दों का प्रयोग किया जाता है। यह चर (यह तो विषयी के वातावरण में स्थित होते हैं अथवा उसके व्यक्तित्व के कुछ गुण होते हैं) परतंत्र चर में होने वाले परिवर्तन को प्रभावित करते रहते हैं। जैसे- यदि हम यह ज्ञात करना चाहते हैं कि कक्षा 10 में भौतिक पढ़ाने के लिए विधि (य) अथवा (र) में से कौन-सी प्रभावी हो सकती है ? इस स्थिति के अन्तर्गत दो समूह लेकर एक कोण्य विधि में पढ़ाया, दूसरे कोण्य विधि से यदि विधि में पढ़ाये गये विद्यार्थियों की उपलब्धि (य) विधि वालो से उच्च हुई तो हम विश्वासपूर्ण यह नहीं कह सकते है कि यह विधि का ही प्रभाव है। यहां यह भी संभव हो सकता है कि सीखने की क्षमता पर अभियोग्यता अथवा प्रेरणा। आदि का प्रभूत्व रहा हो। इस प्रकार से क्षमता, प्रेरणा अथवा अभियोगिता आदि चर कहे जायेंगे।

5- **नियंत्रित समूह** –वह समतुल्य समूह जो विशेष व्यवहार से मुक्त रखा जाता है, नियत्रित समूह कहलाता है।

6- **प्रयोगात्मक समूह -** वह समूह जिस पर विशेष व्यवहार किया जाता है, प्राथमिक समूह कहलाते हैं।

इन उपरोक्त चरों का प्रयोगात्मक अनुसंधान में अत्यन्त महत्व रहता है। अत: इनका विस्तृत विवरण अथवा परिचय आगे इस अध्याय में उदाहरणों के साथ किया जायेगा।

5.3.2 प्रयोग की विशेषताएँ –

इस वैज्ञानिक प्रयोग की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन निम्नलिखित है-

1. अनुसंधानकर्ता प्रयोग के समय विभिन्न गतिविधियों का निरीक्षण करता है। इससे वह परिस्थितियों का प्रत्यक्ष रूप से अवलोकन कर लेता है।

2. जब अनुसंधानकर्ता प्रयोग करता है तो सभी परिस्थितियाँ उसके नियंत्रण में रहती है। वह जिस कारण से प्रयोग करता है, उसको वह नियन्त्रित रूप से प्राप्त कर लेता है।

3. प्रयोग में अनुसंधानकर्ता कारण प्रभाव का अध्ययन करता है कि कौन-सा कारक कितना प्रभावशाली है?

4. प्रयोग के माध्यम से अनुसंधान अपनी परिकल्पना की पुष्टि आसानी से कर लेता है।

5. प्रयोग के अन्तर्गत स्वतंत्र चर में पविर्तन का मानदण्ड अथवा अन्तिम चर पर पड़ने वाले प्रभाव का पूर्णता के साथ निरीक्षण किया जाता है।

6. वस्तुत: प्रयोग द्वारा क्या कार्य सिद्ध होता है? इस प्रश्न का उतर प्राप्त किया जाता है। इसके माध्यम से अनुसंधानकर्ता के ज्ञान में पर्याप्त वृद्धि हो जाती है।

7. शैक्षिक प्रयोगों के माध्यम से शिक्षण विधि के प्रभाव का विद्यार्थियों की उपलब्धियों पर प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

8. किसी कारक के प्रभावों के निरीक्षण को नियत्रिंत स्थिति अथवा परिस्थिति में करना ही प्रयोग की प्रमुख विशेषता माना जाता है।

9. किसी परिस्थिति का उद्देश्यपूर्ण निरीक्षण तथा मापन के लिए कार्य करना ही प्रयोग कहलाता है।

10. बाहरी कक्षाओं के प्रभाव का नियंत्रण करके ही एक अनुसंधानकर्ता प्रयोगात्मक चर के प्रभाव का निरीक्षण तथा मापन करता है।

उपरोक्त के अतिरिक्त प्रयोग की निम्नलिखित तीन विशेषताएं भी मानी जाती है-

(अ) प्रयोगों के द्वारा प्रभावों का शुद्ध मापन शुद्धता से प्राप्त किया जाता है।

(ब) प्रयोगों में प्रभावों तथा गतिविधि का वैज्ञानिक निरीक्षण होता है।

(स) प्रयोग नियत्रिंत परिस्थितियों का उपयोग ही करता है।

5.3.3 प्रयोग की मूलभूत अवधारणाएँ -

जे.एस.मिल के अनुसार ही प्रयोगात्मक अनुसंधान की 'एक चर नियम' की अवधारणा विकसित हुई है। इस धारणा के अनुसार यदि दो स्थितियाँ पूर्ण रूप से समान है तथा एक परिस्थिति में एक तत्व को मिला दिया जाये अथवा एक तत्व को हटा दिया जाये परन्तु ऐसी में दूसरी स्थिति अपरिवर्तित ही रहे। यदि ऐसी स्थिति में कोई परिवर्तन विकसित होता है तो वह जोड़े गये अथवा घटाये गये तत्व का प्रभाव होता है।

अर्थात यहाँ पर इसका अर्थ यह हुआ कि जब दो एक समान परिस्थितियाँ होने पर, किसी एक परिस्थिति में कोई चर जोड़ा जाये अथवा किसी चर को घटाया जाये तब इस स्थिति में जो परिवर्तन आयेगा, वह मात्र जोड़े गये अथवा हटाये गये चर के प्रभाव से ही होगा |

उदाहरण – 1

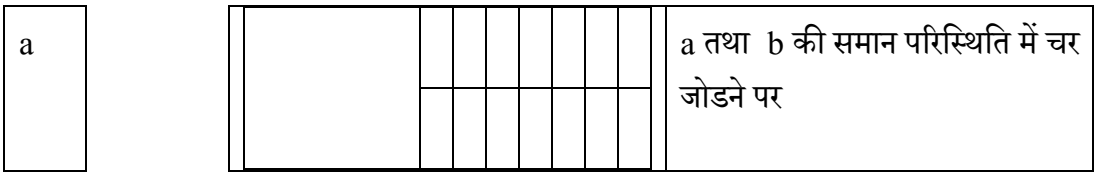

a परिस्थितिय b परिस्थिति

उदाहरण – 2

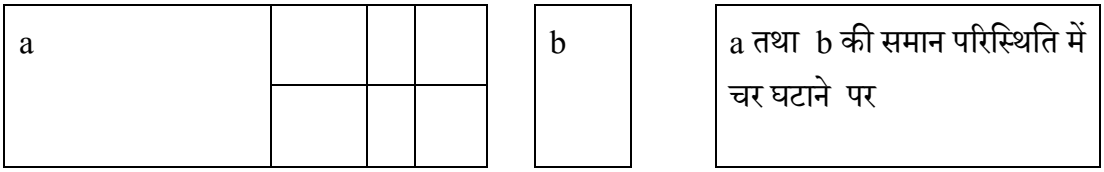

उपरोक्त दोनों उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि यदि चर को जोड़ने से या हटाने से कोई परिवर्तन दिखायी देता है तो यह तो वह उस चर के कारण ही होता है। समान परिस्थितियों में यह अन्तर चर के प्रभाव होता है।

5.4 प्रयोग के प्रकार

भिन्न-भिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से प्रयोगों का वर्गीकरण किया है, यहाँ पर हम जिन विद्वानों के वर्गीकरण को प्रस्तुत करेगें उनके नाम निम्नलिखित हैं -

1- मैकगुइगन

2- अण्डरवुड

3- जहोदा

1- मैकगुइगन का वर्गीकरण - इनके अनुसार प्रयोग में निम्नलिखित तीन तत्व पाये जाते हैं।

(अ) खोजक प्रयोग

(ब) सिद्ध प्रयोग तथा

(स) क्रूशियल प्रयोग।

(अ) **खोजक प्रयोग-** प्राय: इस प्रकार के प्रयोगों का उपयोग इस स्थिति में किया जाता है जबकि अनुंसधानकर्ता को अपनी समस्या का सीमित मात्रा में ही ज्ञान है। इस सीमित ज्ञान के कारण वह ऐसी अवस्था में नहीं होता है ,कि समस्या का कोई भी सही तथा संभव निष्कर्ष प्राप्त कर सके। निष्कर्ष के अभाव में वह कोई भी निश्चित परिकल्पना नहीं कर पाता

है। परन्तु चूंकि अनुंसधानकर्ता समस्या के समाधान को प्राप्त करना चाहता है , इस कारण से कुछ समंक एकत्र कर लेता है, परन्तु उसके पास ऐसा कोई आधार नहीं होता है जिसके आधार पर वह यह अनुमान प्राप्त कर सके कि प्रयोगों के परिणाम तथा निष्कर्ष क्या होगें ? इस वर्ग में प्रयोग समस्या के समाधान की प्रारम्भिक अवस्था में होते हैं।

(ब) **सिद्धि प्रयोग -** प्राय: इस प्रकार के प्रयोग में वे प्रयोग सम्मलित किये जाते है, जिसमें अनुसंधानकर्ता यह सिद्ध करने का प्रयास करता है कि अमुक चर निश्चित रूप से प्रभावकारी सिद्ध होगें। अनुसंधानकर्ता सिद्धि प्रयोगों के माध्यम से एक चर का अन्य चरों पर पड़ने वाले प्रभावों की मात्रा तथा उनके निश्चित रूप को निर्धारित करने का प्रयास करता है।

(स) **क्रूशियल प्रयोग -** इस प्रकार के प्रयोगों के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता एक अथवा अधिक परिकल्पनाओं को एक प्रयोग द्वारा परखने का प्रयास करता है। ऐसे प्रयोगों को इस प्रकार अभिकल्पित किया जाता है कि यदि निष्कर्ष एक और हो तो एक परिकल्पना सिद्ध हो जाये तथा दूसरी परिकल्पना असफल हो जाये। सही रूप में ऐसे प्रयोगों के निष्कर्ष एक सिद्धान्त को स्वीकार करते है तथा अन्य सम्भव सिद्धान्तों को खण्डित करते है।

2. **अण्डरवुड का वर्गीकरण -** अण्डरवुड का वर्गीकरण दो तथ्यों पर आधारित है, जो कि निम्नलिखित है-

(अ) 'मैं आश्चर्य करता हूँ कि क्या होगा' ?

(ब) 'मैं शर्त करता हूँ कि यह होगा'?

अण्डरवुड के वर्गीकरण का विस्तृत विवरण निम्नलिखित है -

(अ) **'मैं आश्चर्य करता हूँ कि क्या होगा' -** प्रयोगकर्ता इस प्रकार के प्रयोगो में यह तथ्य प्राप्त करने का प्रयास करता है कि अमुक तत्व क्या यह एक प्रभावशाली उत्तेजक है,अथवा नहीं? ऐसी स्थिति में यदि वह एक शक्तिशाली उत्तेजक होता है तो वह एक विशेष प्रकार की प्रक्रिया करने में समर्थ है अथवा नहीं? अनुसंधान की प्रारम्भिक अवस्था में ऐसे प्रयोग सम्पादित किये जाते है, जबकि प्रयोगकर्ता के स्वतंत्र तथा आश्रित प्रकार के चरो का सम्बन्ध स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं होता है।

(ब) **मैं शर्त करता हूँ कि यह होगा? -** इसके अन्तर्गत वे प्रयोग शामिल किये जाते हैं, जिनमें प्रयोगकर्ता को अपने स्वतंत्र चर की प्रभावशीलता का पूर्णरूप से ज्ञान होता है। इस कारण से इस प्रकार के प्रयोग में अनुसंधानकर्ता एक परिकल्पना बनाकर किसी विशेष उतेजक चर के परिवर्तन के प्रभावों का अध्ययन करता है । इस वर्ग के प्रयोगों का उपयोग परिकल्पनाओं की जांच के लिए किया जाता है।

3. **जहोदा का वर्गीकरण -** मेरी जहोदा ने प्रयोगों के दो प्रकार बताये है, जो निम्नलिखित हैं -

(अ) केवल- उत्तरोगामी प्रयोग,

(ब) पूर्ण- उत्तरोगामी प्रयोग।

जहोदा का वर्गीकरण का विस्तृत विवरण निम्नलिखित है -

(अ) **केवल- उत्तरोगामी प्रयोग** - जहोदा ने इस प्रकार के प्रयोग के दो रूप माने हैं- प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह । इन दोनों ही प्रकार के समूहों में आश्रित चर का प्रयोग किया जाता है । स्वतंत्र चर मात्र प्रयोगात्मक समूह में आता है । अत: यदि प्रयोगात्मक समूह में आश्रित चर की मात्रा में स्वतंत्र चर की मात्रा के उपरांत यदि कोई परिवर्तन के लिए जिसे प्रयोगकर्ता समूह में न पाये जाये तो वह इस परिवर्तन को स्वतंत्र चर का कारक मान सकता है ।

(ब) **पूर्व-उत्तरोगामी प्रयोग-** इस प्रकार के प्रयोगों के अन्तर्गत आश्रित चर का स्वतंत्र चर के अभिदर्शन के पूर्व तथा पश्चात में मापन किया जाता है । प्रयोगकर्ता के समक्ष कभी-कभी इसमें ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है जैसे -

(1) प्रयोगात्मक तथा नियन्त्रित समूह के प्रयोग के चयन से पूर्व प्रयोगकर्ता अपने प्रयोग को संवेदनशीलता को आश्रित चरों से सम्बन्धित स्थिति को प्रयोज्यों के अनुरूपण में विस्तारित करना चाहता है ।

(2) यदि प्रयोगकर्ता की परिकल्पना का सम्बन्ध आश्रित चर की विशेष स्थिति से हो ।

(3) यदि प्रयोगकर्ता यह ज्ञात करना चाहे कि स्वतंत्र चर प्रभाव डालने का स्थान है अथवा नहीं ।

(4) प्रयोगकर्ता की अध्ययन की यदि परिकल्पना का सम्बन्ध आश्रित चर की प्रारम्भिक स्थिति का अध्ययन नहीं करती हो परन्तु प्रयोगकर्ता तथ्यों को इस प्रकार से विश्लेषित करना चाहे जिससे वह यह ज्ञात कर सके कि स्वतंत्र चर का प्रभाव उन व्यक्तियों पर जो आश्रित चर की विभिन्न में थे, भिन्न पड़ा है । ऐसी स्थिति में प्रयोगकर्ता उसे आश्रित चर की स्थिति पर व्यक्तियों को स्वतंत्र चर के अभिदर्शित करने से पूर्व ज्ञात कर लेना अति आवश्यक है ।

इस प्रकार इन सभी स्थितियों में आश्रित चर को स्वतंत्र चर में अभिदर्शन से पूर्व में तथा अभिदर्शन के पश्चात में मापना अति आवश्यक होगा। इस प्रकार के प्रयोगों में आश्रित चर को दो बार माना जाता है।

5.5 प्रयोगात्मक नियत्रंण (Experimental Control)

प्रयोग की सबसे बड़ी समस्या प्रयोगों को नियंत्रण में करने की होती है । प्रयोगकर्ता को निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए आवश्यक होता है कि केवल चर क्रियाशील स्थिति में हो तथा अन्य चरों पर नियत्रंण हो, जिससे सटीक निष्कर्ष प्राप्त किया जा सके । इस विषय पर विभिन्न विद्वानो के मत निम्नलिखित है -

(1) ''नियंत्रण शब्द द्वारा प्रयोगकर्ता अपने प्रयोग की दशाओं पर कुछ मात्रा में अपनी शक्ति अथवा अधिपत्य प्रदर्शित करता है। वह अपने चरों के क्रिया कौशल में समर्थ है, जिससे वह कोई उचित निष्कर्ष निकाल सकता है।''

- मैकगुइगन

"The word 'control' implies the experiment has a certain power over the condition of his experiments, he is able to manipulate varibable in an effects to arrive at a sound condition."

(2) ''किसी घटना को शुद्ध दशाओं में उसके वातावरण को विनियमित करके उत्पन्न करने का प्रयास करता ही, परिस्थिति का नियत्रंण अथवा प्रयोग का नियत्रंण है। ''

- जे.सी.टाउसैण्ड

"The attempt to produce a phenomenon in a pure condition by regulating its envirment is called 'controlling the situation' or controlling the experiment."

उपरोक्त परिभाषाओं के अध्ययन करने के उपरान्त कहा जा सकता है कि अनुसंधानकर्ता परिस्थितियों को इस प्रकार नियत्रिंत कर सके, जिससे कि वह अपनी स्वेच्छानुसार परिणाम प्राप्त कर सकें।

5.5.1 नियन्त्रण की आवश्यकता

नियत्रंण की आवश्यकता को निम्नलिखित वाक्यों के आधार पर समझा जा सकता है -

1- नियंत्रण की सहायता से निष्कर्ष का सत्यापन आसानी से तथा सरलता से प्राप्त हो सकता है।

2- अनुसंधानकर्ता को नियंत्रण के समय परिस्थितियों का ज्ञान होता है। अत: अनुसंधानकर्ता किसी भी समय तथा किसी भी स्थान पर परिस्थितियों का प्रयोग कर सकता है। इससे उसे निष्कर्ष की प्राप्ति में आसानी रहती है।

3- नियंत्रण द्वारा अनुसंधानकर्ता परिस्थितियां में परिवर्तित करके उनके विभिन्न प्रभावों का अध्ययन सुगमता के साथ कर सकता है।

4- नियंत्रण के माध्यम से ही अनुसंधानकर्ता वैज्ञानिक तत्व को प्राप्त कर सकता है।

5- प्राय: प्रयोगकर्ता को यह निश्चय ही ज्ञात होता है कि कैसे, कब और क्या मापन करना चाहिए ? इसके माध्यम से उसका निष्कर्ष सुगमता से प्राप्त होता है।

6- नियंत्रण के माध्यम की आवश्यकता को समझने के उपरान्त यह प्रश्न सामने आता है कि किसका अथवा किस प्रकार नियंत्रण किया जाना चाहिए। इसका वर्णन अग्रलिखित है -

नियंत्रण किसका - अनुसंधानकर्ता का उद्देश्य सदा किसी परिस्थिति में किसी एक स्वतंत्र चर के प्रभाव का अध्ययन करने का होता है। इसके लिए अनुसंधानकर्ता को इन सभी सम्बन्धित चरों का नियंत्रण करना होता है, जो कि इस घटना के होने को प्रभावित करते है। अनुसंधानकर्ता जब तक प्रभाव डालने वाली परिस्थितियों पर नियंत्रण नहीं कर लेता है, तब तक वह पूर्ण विश्वास के साथ नहीं कह सकता कि यह घटना ऐसी अथवा अमुक चर के कारण से ही घटित हुई है। यहां यह भी हो सकता है कि घटना के लिए और भी कोई तत्व उतरदायी हों।

उदाहरण - यदि कोई अनुसंधानकर्ता सीखने पर प्रेरणा के प्रभावों को ज्ञात करना चाहता है तो उसे सीखने को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण तत्वों जैसे- आयु, पूर्व उपलब्धियों, पूर्व अनुभव, रूचि, योग्यता, विषय की प्रकृति तथा उसकी कठिनाई, शिक्षण की विधि, शिक्षक का व्यवहार, वातावरण आदि सभी पर नियंत्रण करना होगा। तभी अनुसंधानकर्ता निश्चित रूप से कह सकता है कि सीखने में यह परिवर्तन प्रेरणा के माध्यम से संभव हुआ है, किसी अन्य कारण से नहीं।

इस तथ्य को हम निम्नलिखित रेखाचित्र के माध्यम से समझ सकते है -

सम्बन्धित चर	आयु पूर्व अनुभव मानसिक योग्यता - पूर्व उपलब्धि अध्यापन की विधि अध्यापक	नियंत्रण
स्वतंत्र चर	प्रेरणा - विषय की प्रकृति -	सीखना
सम्बन्धित चर	विषय में रूचि विषय की कठिनाई शैक्षिक वातावरण अध्यापक का प्रोत्साहन अध्यापक का व्यवहार	नियंत्रण

उपरोक्त तथ्य को ज्ञात करने के उपरांत प्रश्न यह आता है कि संबंधित चरों की विभिन्न सूचंनाएं किस प्रकार प्राप्त की जायें ? इस समस्या के समाधान के लिए प्रयोगकर्ता को सम्बन्धित साहित्य, विशेषज्ञ तथा पूर्व प्रयोगों के ऊपर निर्भर रहना होता है। इनके आधार पर ही प्रयोगकर्ता सभी सम्बन्धित चरों की सूची तैयार करने के उपरांत उनके नियंत्रण की विधि पर भी विचार करना होगा।

5.5.2 बाहरी चरों के प्रभाव

(1) परीक्षण

(2) इतिहास

(3) पपिक्वता

(4) प्रतिगमन

(5) चयन

(6) उपकरण ह्रास

(7) प्रयोगात्मक नश्वरता

कैम्पवैल के अनुसार इसमें से कोई भी तत्व प्रयोग की आन्तरिक वैधता को प्रभावित करने की क्षमता रखता है । इसके अतिरिक्त इनमें से कुछ स्वतंत्र प्रवृत्ति के चर, अन्त: क्रिया प्रयोगात्मक निष्कर्ष की बाहरी प्रमाणिकता को भी प्रभावित कर सकता है।

विभिन्न प्रकार के प्रयोगात्मक अधिपत्य के माध्यम से इनका नियंत्रण करने का भी प्रयास किया जाता है। इसका विवरण इसी अध्याय में आगे किया जायेगा।

नियंत्रण किस प्रकार ? - सामाजिक विज्ञानों में नियंत्रण की सुविधाजनक विधि वस्तुत: दो समूहों से चुनाव की होती है। इसके अन्तर्गत एक समूह को नियंत्रित समूह तथा दूसरे प्रकार को प्रयोगात्मक समूह कहा जाता है । यहाँ दोनों में यह अन्तर है कि नियंत्रित समूह को उसी प्रकार रखा जाता हैं जबकि प्रयोगात्मक समूह पर प्रयोगात्मक चर का उपयोग किया जाता है। इस प्रकार नियंत्रित समूह उस चर की अनुपस्थिति के प्रभाव को तथा प्रयोगात्मक समूह उस चर की उपस्थिति के प्रभाव को स्पष्ट कर देता है । अत: कहा जा सकता है कि दोनों में परिवर्तन का कारण प्रयोगात्मक चर की उपस्थिति ही है।

उदाहरण - निम्नलिखित रेखाचित्र के माध्यम से यह वर्णन स्पष्ट किया जा सकता है-

वातावरण में उत्तेजनाएँ	**प्रयोजक के संग्राहक**		**प्रयोज्य के कारक**
A_1	B_1	E_1	प्रयोज्य की उत्तेजना 1,2,3,4,5 की प्रतिक्रिया का परीक्षण
A_2	B_2	E_2	
A_3	B_3	E_3	
A_4	B_4	E_4	
A_5	B_5	E_5	

नियंत्रण समूह

A_1	B_1	E_1	प्रयोज्य की उत्तेजना 1,2,3,4,5 तथा I.V. की प्रतिक्रिया का निरीक्षण
A_2	B_2	E_2	
A_3	B_3	E_3	
A_4	B_4	E_4	
A_5	B_5	E_5	

Plas A.V.V ⟶ B.I.V ⟶ E.D.V

चित्र प्रयोगात्मक समूह

उपरोक्त रेखाचित्र के माध्यम से नियन्त्रित तथा प्रयोगात्मक समूह के कार्यो का स्पष्ट वर्णन हो जाता है। दोनों समूहों ही जांच उत्तेजनाओं ने समान है परन्तु (A.I.V) केवल प्रयोगात्मक समूह में कार्य कर रही है । इसलिए उत्तेजना चर (A.I.V) से प्रतिक्रिया (B.I.V.) होती है, जो प्रयोग के कारक में आश्रित चर (E.D.V) है । इस कारण प्रयोगात्मक चर अथवा स्वतंत्र चर है ।

एक अनुसंधानकर्ता यदि यह ज्ञात करना चाहता है कि मैंने जो औषधि खोज निकाली है, उसके प्रयोग में मन्द-बुद्धि शिशुओं की बुद्धि में वृद्धि हो जाती है तो ऐसी परिस्थितियों में प्रयोग के लिए शिशुओं को दो समूहो में विभाजित किया जायेगा, एक समूह को तो वह उन औषधि को देगा तथा दूसरे समूह को नहीं। फिर कुछ समय के उपरान्त वह मापन करेगा। यदि औषधि दिये गये समूह की बुद्धि में वृद्धि हो गयी होतो वह विश्वास के साथ कह सकता है कि वह वृद्धि उसी औषधिस के कारण है और किसी अन्य कारण से नहीं । परन्तु यहाँ पर वह यह भी कह सकता है कि जबकि दोनों समूह एक समान हो तथा वृद्धि को प्रभावित करने वाले अन्य सभी तत्वों को दोनों समूह में स्थिर रखा गया है । इस प्रकार से नियंत्रण को मौलिक आवश्यकता दोनों समूहो की समानता को ही निश्चित करता है। इस कारण से प्रयोग पूर्णरूप से सफल नहीं माना जा सकता । यहाँ पर अब यह प्रश्न आता है कि दोनों समूहो को समान कैसे करें ।

समूह को समान करने के उपाय - समूह को समान करने के लिए विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न सुझाव दिये है, जिसमें से प्रमुख सुझाव निम्नलिखित है -

1- समेल जोड़ा विधि

2- जुड़वाँ शिशुओं की विधि,

3- यादृच्छित समूह विधि,

4- समेल समूह विधि।

उपरोक्त विधियों को स्पष्ट रूप से समझने के लिए विस्तृत विवरण की आवश्यकता है। इन विधियों का विस्तृत विवरण निम्नलिखित है -

1- **समेल जोड़ा विधि -** इस प्रकार के अन्तर्गत किसी प्रकार की परख का प्रयोग उसके प्राप्तांको के आधार पर समेल अथवा समुलेखित अंको के जोड़े बनाये जाते हैं, इसके उपरांत उनमें से एक-एक को एक-एक के समूह में वर्गीकृत किया जाता है, जैसे - विद्यार्थियों की मानसिक योग्यता के आधार प्राप्तांक लिए गये, जिसमें 6 विद्यार्थियों 106, 4 को 102, 4 को 92 2 को 96 अंक मिले। इसके आधार पर सूची बनाकर एक-एक समूह में रखा जायेगा। इस प्रकार से दो समतुल्य अथवा समुचित जोड़े बन जाते है।

2- **जुड़वाँ शिशुओं की विधि -** यह विधि वस्तुत: वंश परम्परा के अध्ययन में अधिक उपयोगी होती है। यदि जुड़वाँ शिशु पर्याप्त मात्रा में मिल सके तो उनको एक-एक को अलग-अलग समूह में रखकर दोनों समूह को समतुल्य बनना कठिन है।

3- **यादृच्छित समूह विधि -** प्रयोगकर्ता यदि यह देखता है कि समूहों को समुचित कना कठिन हो रहा है तो उस स्थिति में यह यादृच्छित विधि का प्रयोग करता है। इसके अन्तर्गत समूह का यादृच्छित चयन होता है तथा धारणा यह होती है कि यादृच्छित चयन में न्यादर्श सम्पूर्ण जनता का प्रतिनिधित्व करता है और उसमें से प्राप्त दो समूह निश्चय ही सुमेलित होगें। इन विधि में बड़ी संख्याओं का होना आवश्यक है।

4- **समेल समूह विधि -** यह विधि वर्तमान में सबसे प्रसिद्ध मानी जाती है। एक प्रयागकर्ता इस विधि से एक-एक व्यक्ति की तुलना नहीं करता बल्कि वह निश्चय करता है कि सम्बन्धित चरों की दृष्टि से दोनों समूहों में समानता हो। प्रयोगकर्ता को यह निश्चय करने केलिए दोनों समूहो को समक्ष कर उनके मध्यमान तथा विचलन को निकाल लेते है। इसमें यदि यह ज्ञात होता है कि सांख्यिकीय दृष्टि से दोनों समूह में सार्थक भिन्नताएँ नहीं है तो यह समझ लिया जाता है कि दोनों समूह पूर्णत: सुमेलित है। यदि इससे भिन्नता दृष्टिगोचर होती है तो एक समूह में कुछेकक सदस्यों का परिवर्तन कर लिया जाता है। इस प्रकार से यह विधि अपना महत्व स्थापित करती है।

5.6 प्रायोगिक विधि के विभिन्न सोपान

इसके अन्तर्गत विभिन्न सोपान का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है -

1- रूचि के अनुसार प्रयोग स्त्रोत को चुनना।

2- साहित्य का सर्वेक्षण |

3- उचित समस्या का चुनाव करना।

4- समस्या के विभिन्न पदों की व्याख्या।

5- समस्या का सीमांकन|

6- परिकल्पनाओं का निर्माण।

7- परिवर्तित तथा उनका स्पष्टीकरण।

(अ) परतंत्र चर को दिखाना।

(ब) स्वतंत्र चर को दिखाना।

(स) नियंत्रित चरों का वर्णन।

8- बाहरी चरों के नियंत्रण के लिए उचित अभिकल्प का चुनाव करना।

9- प्रतिदर्श का चुनाव।

10- निरीक्षणों के लिए उचित उपकरणों का चुनाव।

11- शून्य परिकल्पनाओं का निर्माण करना।

12- समंको के विश्लेषण के लिए उचित सांख्यिकीय विधियों का सुगमता के साथ चुनाव करना।

13- वास्तविक तथा उचित प्रयोग।

14- समंको का संग्रह।

15- समंको का वर्गीकरण।

16- समंको का सारणीपन तथा विश्लेषण।

17- निष्कर्ष तथा इसका समान्यीकरण।

18- प्रयोग प्रतिवेदन प्रस्तुत करना।

प्रयोगात्मक प्रक्रिया -

प्रयोगात्मक अध्ययन की विभिन्न प्रक्रियाओं को हम निम्नलिखित रूप से विभाजित कर सकते हैं -

1- आयाम के साधन - तुलनात्मक, विश्लेषणात्मक, संख्यात्मक तथा गुणात्मक।

2- नियंत्रण का प्रकार - व्यवहारिक नियंत्रण, वैज्ञानिक नियंत्रण, औपचारिक नियंत्रण, अनौपचारिक नियंत्रण, वास्तविक नियंत्रण अथवा अनुमानित नियंत्रण।

3- विषयों का समूहीकरण - समूहों में अथवा एक-एक करके।

4- प्रयोग का स्थान - प्रयोगशाला, क्षेत्र अथवा कक्षा में।

5- समय की आवश्यकता - दीर्घ अवधि अथवा लघु अवधि।

6- विषयों के मध्य व्यवहार - समूह में अथवा व्यक्तिगत रूप में।

7- **प्रयोगकर्ता संस्था-** स्वतंत्र रूप से अथवा सहयोग से एक व्यक्ति द्वारा अथवा संस्था में माध्यम से।

8- **कार्य का उद्देश्य -** प्रत्यक्ष प्रभाव, अप्रत्यक्ष प्रभाव अथवा कारणों का अध्ययन तथा विश्लेषण कारण।

प्रयोगात्मक विधि की विशेषताएँ -

सामान्यत: प्रयोगात्मक विधि की विशेषताओं को दो भागों में सामान्य विशेषताएं तथा विशिष्ट विशेषताओं में विभाजित किया जाता है। इनका विस्तृत विवरण निम्नलिखित है -

1- **सामान्य विशेषताएँ -** इसकी सामान्य विशेषताओं का वर्णन निम्नलिखित है -

(1) प्रयोगात्मक विधि में अनुमान के वास्तविक रूप को संख्याओं में सरलता से प्रस्तुत किया जा सकता है।

(2) प्रयोगात्मक अनुसंधान विधि पक्षपात से पूर्णत: मुक्त होती है तथा इस कारण इसमें वास्तविक प्रभावों का सही मूल्यांकन किया जा सकता है।

(3) इसके अंतर्गत विभिन्न उद्देश्यों के लिए स्पष्ट तथा विशेष परिकल्पनाओं को प्रतिपादित किया जाता है तथा उनकी पुष्टि भी की जाती है।

2. **विशिष्ट विशेषताएँ -** प्रयोगात्मक विधि की विशिष्ट विशेषताओं का वर्णन निम्नलिखित वाक्यों के माध्यम से समझ सकते हैं -

(1) प्रयोगात्मक विधि के अन्तर्गत सम्बन्धित चरों पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित करने का प्रयास किया जाता है।

(2) इसके अन्तर्गत समंको के संकलन को विषय में वस्तुनिष्ठता तथा शुद्धता की समस्या सामने नहीं आती है।

(3) प्रयोगात्मक विधि में प्रामाणिक परीक्षणों का सम्पादन किया जाता है। अत: इससे प्राप्त समंक अधिक विश्वस्त होते हैं।

(4) यह विधि प्रयोग की स्थिति से बाहरी चरों के प्रभावों को स्वतंत्र चर के आश्रित चर पर पड़ने वाले प्रभावों को रोकने के लिए न्यायदर्श के चयन में पूरी सावधानी रखी जाती है।

(5) इस विधि के अन्त्रगत परिकल्पनाओं का निर्माण और परख विभिन्न प्रयोगों के आधार पर किया जाता है। इस कारण से या तो परिकल्पना की पुष्टि नहीं होती अथवा पुष्टि हो भी सकती है।

(6) इस विधि में सम्बन्धित चरों में अन्त: प्रक्रिया प्रभाव के यथार्थ तथा शुद्ध ज्ञान के लिए अधिक संभावना उपस्थित रहती है। इस कारण से इस विधि के माध्यम से सम्बन्धित चरों में कारण सम्बन्ध में शुद्ध रूप से स्थापित करना अधिक सरल होता है। इसके निष्कर्षों की आन्तरिक वैधता भी अधिक ही रहती है।

5.7 प्रयोगात्मक अनुसंधान की सीमाएं (Limitations of Experimental Research)

प्रयोगात्मक अनुसंधान अनेक लाभ तथा विशेषताओं से युक्त तो है परन्तु इसकी भी अपनी कुछ सीमाएं है । अत: इन सीमाओं का संक्षिप्त विवरण यहां कारण सोचकर होगा । इन सीमाओं का विवरण निम्नलिखित है -

(1) सामान्यत: प्रयोगात्मक अनुंसधान के निष्कर्षों को बाहरी वैधता प्राप्त नहीं होती है । इनके निष्कर्षों को प्राय: सामान्य परिस्थितियों में उपयोग में नहीं लाया जा सकता क्योंकि इसमें निष्कर्ष नियन्त्रित परिस्थितियाँ से प्राप्त किये जा सकते हैं । यदि प्रयोगों को नियन्त्रित विधि से नहीं किया जाये तो उनका कोई महत्व ही नहीं रहता है ।

(2) नियन्त्रित प्रक्रिया न्यायदर्श का आकार प्रयोगात्मक अनुसंधान में दो विरोधी तत्वों समन्वय करना सम्भव होता है । अनुसंधान में न्यादर्श का आकार विस्तृत होने की स्थिति में नियंत्रण स्थापित नहीं हो पाता । निष्कर्षों की उपयोगिता नियंत्रण बढ़ने की स्थिति में कम होती है ।

(3) प्रयोगात्मक अनुसंधान का उपयोग शिक्षा के क्षेत्र में करना प्राय: संभव नहीं होता है, इसके मुख्य कारण निम्नलिखित माने जाते हैं -

(अ) इसमें शिक्षको का पूर्व सहयोग प्राप्त नहीं होता है ।

(ब) विद्यार्थियों का सहयोग भी प्राप्त नहीं होता है ।

(स) प्रयोग तथा प्रभाव नियन्त्रित समूह पर भी पहुंच जाता है ।

(4) इसके अन्तर्गत मध्यस्थ चरों की पहचान में कठिनाई आती है ।

(5) प्रयोगात्मक अनुसंधान से समूहों के मध्य समानता स्थापित करना भी सरल नहीं होता क्योकि दो व्यक्ति एक ही मापदण्ड पर समान कार्य नहीं कर सकते ।

(6) प्रयोगात्मक अनुसंधानों के निष्कर्ष, व्यवहारिकता उपयोगी नहीं मान जा सकते हैं, कुछ मनोविज्ञ्ञनियों ने जानवरों पर प्रयोग किये है । अत: उनको मानवीय व्यवहारों पर उपयोग करना न्यायोचित नहीं है । इस कारण कार्योत्तर अनुसंधान का शिक्षा में उपयोग करना चाहिए ।

5.8 सह-सम्बन्धात्मक अनुसंधान का अर्थ (Meaning of Correlational Research)

वर्णनात्मक एवं अन्तसंम्बन्धात्मक अनुसंधान की श्रेणी में ही सह-सम्बन्धात्मक अध्ययन भी आते हैं। इन अध्ययनों का उद्देश्य भी चरों के बीच सम्बन्ध ज्ञात करना होता है । चर परस्पर सम्बन्धित है अथवा नहीं यह तो अन्य प्रकार के अध्ययनों के माध्यम से भी जाना जा सकता है । परन्तु सह - सम्बन्धात्मक अध्ययनों की यह विशेषता है कि वे केवल यहीं नहीं बताते कि दो या दो से अधिक

चर परस्पर सम्बन्धित है, बल्कि यह भी बताते हैं कि यह सम्बन्ध कितना गहरा अथवा अधिक है। ये अध्ययन सांख्यिकी की एक विशिष्ट विधि पर आधारित होते हैं जिसके माध्यम से संबंधको एक गणितीय संख्या के रूप में व्यक्त किया जाता है, जिसे अनुबंध गुणांक कहते हैं। यह गुणांक $\pm$ 1.0 की सीमा के भीतर ही होता है। गुणाक + 1.0 का अर्थ होता है पूर्ण एवं सकारात्मक संबंधएवं - 1.0 का अर्थ होता है पूर्ण परन्तु नकारात्मक संबंध। इनके बीच में जो गुणांक होते हैं वे पूर्ण से कम सकारात्मक एवं नकारात्मक संबंधके परिचायक होते हैं। सकारात्मक संबंधका अर्थ होता है दोनों चरों का एक ही दिशा में घटना बढ़ना। जैसे बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि के बीच यदि सकारात्मक सम्बन्ध है तो इसका अर्थ होगा कि यदि बुद्धि बढ़ती है तो शैक्षिक उपलब्धि भी बढ़ेगी। यदि नकारात्मक अथवा विपरीत सह सम्बन्ध है तो स्थिति यह होगी कि यदि बुद्धि बढ़ती है तो शैक्षिक उपलब्धि घटती है।

ये अध्ययन सांख्यिकीय विधियों पर आधारित होते हैं। इनका प्रयोग अत्यन्त जटिल सम्बन्धों को ज्ञात करने में भी किया जाता है तथा इनके आधार पर बहुचरीय विश्लेषण तथा पूर्वकथन अध्ययन किए जाते हैं।

सहसंबधात्मक शोध का उद्देश्य किसी समद्धि में कुछ चर किए प्रकार आपस में संबंधितहै, उसका पता लगाना है। उदाहरण के लिए एक अध्ययन का उद्देश्य उपलब्धि प्रेरणा और तत्संबधी व्यक्तित्व के गुणो के बीच संबंधज्ञान करना हो सकता है।

5.9 संहसम्बन्धात्मक अनुसधान की विशेषताएँ

1- इसमें चरो के दो समूहों के बीच सह-संबंधस्थापित करने की समस्या होती है जैसे उपर्युक्त उदाहरण में व्यक्तित्व के चरों और उपलब्धि प्रेरणा के बीच संबंधस्थापित करने की अपेक्षा।

2- इसमें सामान्यत: अध्ययन संबंधितसमष्टि से उपर्युक्त रूप से प्राप्त प्रतिदर्श पर किये जाते है तथा प्राप्त निष्कर्षों को पूरे समष्टि पर सामान्यीकृत किया जाता है। इसके पीछे यह तर्क है कि यदि कोई संबंधसमष्टि में है तो वह संबंधउसके प्रतिनिधि प्रतिदर्श में भी दिखाई पड़ेगा।

तथापि सभी सह-संबंधी अध्ययनों का उद्देश्य किसी सिद्धान्त का प्रतिपादन करना नहीं होता, केवल किसी विशिष्ट प्रश्न का उतर प्राप्ता करना होता है, जैसे

बुद्धि और शैक्षिक उपलब्धि में किस प्रकार का संबंधहै?

क्या प्रजातांत्रिक शिक्षक सत्तात्मक शिक्षक की अपेक्षा अधिक अच्छा अनुशासन रख सकते है?

इस आधार पर सह संबंधी अध्ययन दो प्रकार के हो सकते हैं (1) भेदात्मक जिसमें शोध परिणाम किसी सिद्धान्त से जुड़ा न हो। (2) संरचनात्मक जिसमें उद्देश्य किसी सिद्धान्त का विकास करना होता है।

5.10 सहसम्बन्धात्मक शोधों के प्रकार

1. **सह सम्बन्धात्मक अध्ययन -** इसमें दो या उससे अधिक चरों के बीच सम्बन्ध ज्ञात करना होता हैं परन्तु अक्सर सह संबंधवास्तविक स्थिति नहीं दर्शाते, क्योंकि -

   (i) आवश्यक रूप से यह कारण-परिणाम संबंधप्रकट नहीं करते हैं। सह संबंधकेवल यह बताता है कि दो चरों के बीच संबंधहै या नहीं, परन्तु यह निश्चित नहीं करता है कि यह संबंधकारण-परिणाम का है या नहीं। ऐसा हो सकता है कि माता-पिता के सामाजिक आर्थिक स्तर और उनके बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि में उच्च स्तरीय सह संबंधपाया जाय, परन्तु यह सामाजिक आर्थिक स्तर के कारण न होकर 'बुद्धि के कारण हो क्योंकि बुद्धि और सामाजिक आर्थिक स्तर के बीच उच्च स्तरीय सह संबधपाया गया है।

   (ii) कुछ स्थितियों में यह सह संबंधदिखावटी या नकली हो सकता है जैसा हमने ऊपर देखा सामाजिक आर्थिक स्तर तथा शैक्षिक उपलब्धि के बीच उच्च स्तरीय सह संबंधदिखावटी हो सकता है वास्तविक कारण बुद्धि है।

2. **भविष्य कथानात्म्क अध्ययन (Predictive studies)-** सह संबंधीअध्ययनों में परोक्ष या अपरोक्ष रूप से भविष्य निहित होता है। अधिकांश चयन परीक्षण भविष्य कथनों से संबंधित पर आधारित होते है। भविष्य सूचक अध्ययन, समाश्रण समीकरण द्वारा विश्लेषित आँकड़ो की सहायता से किये जाते हैं। यह अध्ययन एक चरीय या बहुचरीय हो सकते हैं। एक चरीय मे केवल एक भविष्य सूचक जैसे बुद्धि के आधार पर किसी निकर्ष जैसे शैक्षिक उपलब्धि के बारे में भविष्यवाणी की जाती है।

5.11 सह सम्बन्धात्मक अनुसंधानकी सीमाएँ

1. सह -सम्बन्धात्मक शोध की सीमाओं में एक है चरों का ढीला नियंत्रण चूंकि सह-सम्बन्धात्मक शोध में कुछ ऐसे चर होते हैं जिनका सही-सही नियंत्रण करना शोधकर्ता के लिए कठिन होता है, अत: इसका कुप्रभाव आश्रित चर पर पड़ने से रोका नहीं जा सकता। जैसे शोधकर्ता यदि समस्या समाधान योग्यता और बुद्धि के बीच के सम्बन्ध का अध्ययन करना चाहता है तो शोध में शामिल किए गये सभी प्रयोज्यों की आयु का एक समान होना आवश्यक है अन्यथा, आयु के साथ मिलकर समस्या समाधान योग्यता को प्रभावित कर सकता है। परन्तु चूंकि आयु का नियंत्रण चयन प्रक्रिया द्वारा किया जाता है, अत: यह नियंत्रण प्रयोगात्मक शोध की तरह सख्त न होकर ढीले किस्म का होता है।

2. सह सम्बन्धात्मक शोध की दूसरी सीमा है स्वतंत्र चर और आश्रित चर के बीच कार्य कारण सम्बन्ध या कारण एवं परिणाम सम्बन्ध का निश्चित न होना। इस शोध के आधार पर जो परिणाम प्राप्त होते हैं उससे यह पता नहीं चलता है कि प्राप्त

परिणाम का कारण क्या है ? उदाहरण स्वरूप, यदि अधिक बुद्धि वाले बच्चे में समस्या समाधान की योग्यता अधिक हो तो इससे यह पता नहीं चलता कि समस्या समाधान योग्यता का अधिक होना अधिक बुद्धि का परिणाम है। यानि, बुद्धि कारण है और समस्या समाधान फल है। समस्या समाधान योग्यता का बेहतर होना आयु अधिक होने, अनुभव अधिक होने के कारण भी होता है। इस प्रकार सह सम्बन्धात्मक शोध चरों के बीच कारण एवं परिणाम के निश्चितता की मात्रा कम कर देता है।

5.12 प्रयोगात्मक तथा सहसम्बन्धात्मक शोध में अन्तर -

प्रयोगात्मक तथा सहसम्बन्धात्मक शोधों अर्थ एवं विशेषताओं पर प्रकाश डालने के क्रम में हम चर्चा कर चुके हैं कि इन दोनों में स्वतंत्र एवं आश्रित चर उपस्थित होते हैं तथा दोनों ही शोधो का स्वरूप आनुभविक होता है फिर भी इन दोनों शोधों में निम्नलिखित भिन्नताऐं -

i. प्रयोगात्मक शोध में जहां स्वतंत्र चर में जोड़ जोड़ प्रयोगात्मक रूप से यानी, सीधे किया जाता है, वहीं सहसम्बन्धात्मक शोध में स्वतंत्र चर में चयन के द्वारा जोड़-जोड़ या हस्तचालन का कार्य किया जाता है।

ii. प्रयोगात्मक शोध में शोधकर्ता स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर के बीच कार्य तथा प्रभाव सम्बन्ध बड़े विश्वास के साथ स्थापित कर पाता है वहीं सहसम्बन्धात्मक शोध में स्वतंत्र चर तथा आश्रित के बीच कार्य तथा कारण सम्बन्ध स्थापित करना कठिन है।

5.13 सारांश

प्रयोगात्मक अनुसंधान किसी चर की वास्तविक उपस्थिति एवं प्रभाव का अध्ययन करता है यह अध्ययन नियंत्रित परिस्थितियों में किया जाता है। मनोविज्ञान में इस प्रकार के अनुसंधान को करने हेतु प्रयोगकर्ता एवं प्रयोज्य दोनों की आवश्यकता होती है। प्रयोगात्मक अनुंसधान दो प्रकार का होता है प्रयोगशाला प्रयोग तथा क्षेत्र प्रयोग।

सहसम्बन्धात्मक अनुंसधान भी आश्रित चर पर स्वतंत्र चर के प्रभाव का अध्ययन करता है।

5.14 शब्दावली

- **प्रयोग :** नियंत्रित परिस्थिति में किया गया क्रमबद्ध निरीक्षण ही प्रयोग कहलाता है।
- **चर:** चर उन परिस्थितियों या घटनाओं को कहते है जो सदा एक जैसे स्थिति में नहीं रहते वे प्रशिक्षण बदलते रहते है।
- **आश्रित चर :** वे चर जो किसी दूसरे पर निर्भर होते हैं उन्हे आश्रित चर कहते हैं।

- **स्वतंत्र चर :** वे चर तो किसी दूसरे पर स्वतत्र रूप से अपना प्रभाव डालते ही स्वतंत्र चर कहलाते हैं।
- **संगत चर** : (बाह्य चर) वे चर जिन्हे प्रयोगकर्ता यदि नियंत्रित नहीं करे तो वह प्रयोग के दौरान स्वतंत्र चर के साथ मिलकर आश्रित चर को प्रभावित कर सकते हैं।

5.15 स्वमूल्यांकन प्रश्न -

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न -

1. निम्नलिखित का अर्थ बताइए।

   (a) प्रयोग (b) चर (c) आश्रित चर (d) स्वतंत्र चर

2. प्रयोग क्या है ?
3. प्रयोग के कितने प्रकार हैं ?

लघुतरात्मक प्रश्न -

1- प्रयोगात्मक अनुसंधान का अर्थ क्या है ?

2- सहसम्बन्धात्मक अनुसंधान का अर्थ क्या है ?

3- प्रयोग की मूलभूत अवधारणाएं एवं विशेषताएं बताइये।

4- प्रयोगिक विधि के विभिन्न सोपानो का उल्लेख कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न -

1- प्रयोगात्मक अनुसंधान का एक उपयुक्त उदाहरण लेकर वर्णन कीजिए।

2- सहसम्बन्धात्मक अनुसंधान का एक उपयुक्त उदाहरण लेकर वर्णन कीजिए।

5.16 संदर्भ ग्रंथ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियां, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली |
- बेस्ट, जे. डब्ल्यू (1963) : रिसर्च इन एजूकेश्न, नई दिल्ली, प्रेटिंय हॉल |
- गुड, सी.वी. एवं स्केट्स डी.ई. (1954): मेथड्स ऑफ रिसर्च, न्यूयार्क एलिशन सेन्चुरी |
- कपिल एच.के. (2001) : अनुसंधान विधियां, (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा |

- एफ.एन. करलिंगर (1964) : फाउन्डेशन ऑफ विवेहरियल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं बिंसटन इंक, न्यूयार्क |
- भट्नगार, आर.पी. (1995) : शिक्षा अनुसंधान : विधि एवं विश्लेषण लायल बुक डिपो, कॉलेज रोड, मेरठ |
- शर्मा, आर.ए. (1995) : शिक्षा अनुसंधान, मरेठ इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ |
- सुखिया एस.पी.महरोत्रा, पी.पी. एवं मेहरोत्रा आर.एन. (1973) : शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा |
- सिद्धु के एस.(1985) : मेथड्स ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, नई दिल्ली, स्टरलिंग पब्लिशर्स |
- रायजादा बी.एस. (1999) : शिक्षा के अनुसंधान के आवश्यक तत्व |
- शर्मा, अरविन्द कुमार (2008) : शोध प्रविधियां एवं सूचना प्रौद्योगिकी एस एस पब्लिकेशनस, नई दिल्ली |
- जैन, एम.के. (2007) : शोध विधियां, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली |

इकाई - 6

कार्योत्तर अनुसंधान

Ex-Post Facto Research

6-1 प्रस्तावना

6-2 उद्देश्य

6-3 कार्योत्तर अनुसंधान का अर्थ

6-4 कार्योत्तर अनुसंधान की विशेषताएँ

6-5 कार्योत्तर अनुसंधान की व्यूहरचनाएं

6-6 कार्योत्तर अनुसंधान की सीमाएँ

6-7 कार्योत्तर अनुसंधान में गुणात्मक सुधार हेतु उपाय

6-8 सारांश

6-9 शब्दावली

6-10 स्वमूल्यांकन प्रश्न

6-11 संदर्भग्रंथसूची

6-1 प्रस्तावना

पिछले अध्याय में आपने प्रयोगात्मक शोध का अर्थ, विशेषताएँ प्रकारों की जानकारी प्राप्त की इसका सहसम्बन्धात्मक शोध के साथ अन्तर करना भी सीखा।

प्रस्तुत इकाई में आप एक एसे अनुसंधान के बारे में जानकारी प्राप्त करेगें जो घटना घटित होने के पश्चात् उनके कारण की खोज से सम्बन्धित है यह अनुसंधान दैनिक जीवन में घटित होने वाली घटनाओं के अध्ययन से सम्बन्धित है।

6-2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- कार्योत्तर अनुसंधान का अर्थ एवं विशेषताओं को जान पायेंगे।
- कार्योत्तर अनुसंधानकी व्यूह रचनाओं तथा सीमाओं को जान पायेगें।
- कार्योत्तर अनुसंधान में गुणात्मक सुधार हेतु उपाय सुझावित कर पायेगें।

6.3 कार्योत्तर अनुसंधानका अर्थ

जैसा कि कार्योत्तर अनुसंधान शब्दावली से संकेत मिलता है वह अनुसंधान उन घटनाओं के बारे में है जो पहले की घटित हो चुकी है। यहां हम उन कारणात्मक कारको या चरों का पता लगाने का प्रयत्न करते हे जो पहले से अपना प्रभाव डाल चुके है। उदाहरण के लिए, हम मोटर गाड़ियों की दुर्घटनाओं के कारणों को जानने का प्रयत्न करते हैं, बाल अपराध के पूर्ववर्ती घटनाओं (कारको) का पता लगाना चाहते हैं , फेफड़े के कैंसर के कारणों को जानना चाहते हैं इत्यादि। इन सभी खोजों में घटनात्मक कारक पहले से घटित हो गये थे और हम अब उन घटित कारणों का पता लगाने की कोशिश करते हैं। इसलिए इसको कारकीय तुलनात्मक शोध भी कहते है।

बेस्ट और काह्न (Best & Kahn 1989) जैसे कुछ विद्वान इस शोध को मात्रात्मक विवरणी शोध की श्रेणी में रखते है जबकि सेक्स (Sex 1979) इसे विवरणों (Descriptive) तथा प्रयोगात्मक शोध का संकर-वर्ण मानता है। विवरणी इसलिए क्योकि शोधकर्ता का कारणात्मक कारकों पर हेर-फेर करने का नियत्रंण नहीं होता। इसी प्रकार प्रयोगात्मक इसलिए क्योंकि यह चरों के मध्य कारणात्मक संबंधज्ञात करने का प्रयत्न करता हैं। इसे बहुधा प्रयोगात्मक कल्प खोज के अन्तर्गत रखा जाता है। जब इसमें सह-संबंधीविश्लेषण शामिल होता है तो संबंधशोध कहा जाता है। यद्यपि यह शोध एक त्रुटिपूर्ण तर्क पर आधारित है इसका सबसे अधिक प्रयोग शिक्षा और समाजशास्त्र के शोधों में हुआ है।

6-4 कार्योत्तर अनुसंधानकी विशेषताएँ

इस प्रकार के शोध में शोधचरों पर शोधकर्ता का नियंत्रण नहीं होता, प्रायोगिक तथा कार्योत्तर दोनों प्रकार के शोधों में उनके तर्क और लक्ष्य एक समान होते हैं। दोनों प्रकार के शोधों का उद्देश्य कारण-परिणाम की जानकारी प्राप्त करना और दोनों का तर्क है .... इसके बाद, इसलिए इसका कारण, परन्तु दोनों में इस तर्क के विभिन्न आधार है। प्रायोगिक शोध में शोधकर्ता स्वतंत्र चर में हेर-फेर करके यह देखता है कि उसका आश्रित चर पर क्या प्रभाव पड़ता है। वह किसी परिणाम को उत्पन्न करने के लिए कुछ कारणों की सृष्टि कर सकता है। वह यादृच्छिकी विधि से विषयी जनों को विभिन्न समूहों में वितरित कर सकता है, जिससे वे आरम्भ में समतुल्य हो। परन्तु कार्योत्तर अनुसंधान में शोधकर्ता इतना भाग्यशाली नहीं होता। वह कारणों की सृष्टि नहीं कर सकता है, न ही स्वतत्रं चरों में कोई हेर-फेर सकता है, क्योंकि कारण- चर या तो पहले ही घटित हो चुके होते कार्योत्तर या उनमें हेर-फेंर करना संभव नहीं होता। वह पहले से अध्ययनीय विषयों को यादृच्छिक रूप से चुनकर उन्हें शोधन समूहों में वितरित भी नहीं कर सकता। इसलिए शोधकर्ता के लिए अधिकांश परिस्थितियों में विगत घटनाओं या पहले से चली आ रही दशाओं के विश्लेषण के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं बचता, जिससे वह कारण-परिणाम का अध्ययन कर सकें।

6-5 कार्योत्तर अनुसंधान व्यूह रचनाएँ

उपर्युक्त विशिष्ट प्रकृति के कारण कार्योत्तर शोध में दो प्रकार की व्यूह रचनायें काम में लायी जा सकती है -

(i) प्रभाव से कारण की ओर चलने वाले उल्टे गियर (Back Gear) की व्यूह रचना - यहां, क्योकि शोधकर्ता न तो कारणों की सृष्टि कर सकता है न ही विषयोजनों की यादृच्छिक विधि से शोधन समूहों में वितरित कर सकता है, वह किसी घटना का कारण ढूंढने के लिए उससे पहले होने वाली घटनाओं का विश्लेषण करता है। वह पूर्ववर्ती घटनाएं जो उसके साथ-बराबर संगत करती लगती है वह उस घटना का कारण मान ली जाती है। यहां पर यह तर्क है (जो यद्यपि त्रुटिपूर्ण है) कि ''इसके बाद (post hoc) इसलिए (Ergo) इसके कारण (propter hoc)".

आइये इस अभिकल्प को एक उदाहरण से स्पष्ट करें। मान लीजिए बाल अपराध के कारणों का पता लगाने की समस्या हैं इन कारणों का पता लगाने के लिए शोधकर्ता दो समूहों को लेना। एक जिसमें घोषित बाल अपराधी है अर्थात जिसमें प्रभाव उपस्थित है। (तथा दूसरा जिसमें गैर बाल अपराधी है) अर्थात जिसमें प्रभाव उपस्थित नहीं है। इन शोधों समूहो में वर्तमान अन्तरों को बाल अपराध का संभावित कारण समझा जाता है। इस क्रिया विधि की दो कमियां है।

(अ) दोनों चयनित समूहों के चयन का आधार केवल एक प्रतिमान है बाल अपराध। अत: दोनों समूहों को हर दृष्टि से समतुल्य नहीं कहा जा सकता है। बाल अपराध को छोड़कर उनके अन्य चरों में भिन्न होने की संभावना हो सकती है, जैसे, सामाजिक, आर्थिक स्तर, बुद्धिलब्ध इत्यादि। दोनों को समतुल्य बनाने का एक तरीका उनका कुछ महत्वपूर्ण चरों पर सुमेलन करना हो सकता है। परन्तु इस प्रकार का संतुलन दोनों समूहों के निर्माण के बाद ही हो सकता है, इसलिए प्रत्येक सुमेलन का प्रयत्न अध्ययन के विषयोजनों की संख्या को काफी कम कर सकता है। चेपिन के एक अध्ययन में शोधकर्ता ने 2127 विषयोजनों से आरम्भ किया जो छ: चरों पर सुमेलन करने पर केवल 46 रह गए फिर भी उन्हें समतुल्य मानने पर आपत्ति की गई।

(ब) बाल अपराध की छात्र-छाया में बहुत से लक्षण (जो उसका कारण नहीं है) दोनों समूहों में प्रवेश पा सकते हैं। इसलिए यह भी संभावना हो सकती है कि दोनों समूहों का अन्तर ''कारणात्मक'' के कारण न होकर इन लक्षणों के कारण हो।

अपराधी और गैर-अपराधी समूह अनेक प्रकार से भिन्न हो सकते हैं, इसलिए यह निश्चित करना कठिन हो जाता है कि कौन सी भिन्नताएं कारण है और कौन सी कारण नहीं हैं सामाजिक घटनाएं जिसमें शिक्षा से संबंधित घटनाएं भी सम्मिलित है एक कारण से नहीं

वरन अनेक कारणों से घटित होती है । इसलिए ''इसके बाद, इसलिए इसके कारण'' (Post hoc ergo propter hoc) का तर्क लक्षणों को कारण समझने का भ्रम पैदा कर सकता है । अधिकांश स्थितियों में शोधकर्ता का पथ-प्रदर्शन करने के लिए कोई पूर्व परिकल्पना भी नहीं होती। इसलिए शोध कर्ता को अनेक भिन्नताओं का मूल्यांकन करना पड़ता है।

(ii) सह-संबंधविधि का प्रयोग करने वाली व्यूह रचना -

यह व्यूह रचना उस समय प्रयोग की जा सकती है जब शोधकर्ता के पास परीक्षण के लिए कोई परिकल्पना हो। उदाहरण के लिए आयुर्विज्ञान की एक परिकल्पना है - अत्यधिक धूम्रपान फेफड़े के कैंसर का एक कारण है। यहां शोधकर्ता अत्यधिक धूम्रपान और फेफड़े के कैंसर की घटनाओं के बीच सह-संबंधज्ञात कर सकता है। यदि सांख्यिकीय दृष्टि से यह सह-संबंधसार्थक पाया जाता है तो कारणात्मक संबंधस्थापित समझा जाता है अर्थात वह मान लिया जाता है कि अत्यधिक धूम्रपान फेफड़े के केंसर का एक कारण है।

यहां भी दो चरों (अत्यधिक धूम्रपान तथा फेफड़े का केंसर) के सहवर्ती परिवर्तन (Concomitant Variation) से निकाला हुआ निष्कर्ष उतना सुरक्षित नहीं होता जितना कि प्रायोगिक अनुसंधान से प्राप्त निष्कर्ष, क्योंकि वहां शोधकर्ता चरों पर सीधा नियंत्रण नहीं रख पाता। जैसे हम जानते हैं, सहं सबंध आवश्यक नहीं कि कारणता का द्योतक हो। हो सकता है कि धूम्रपान और फेफड़े दोनों का कारण हो । इसलिए ऊपर से तो अत्यधिक धूम्रपान तथा फेफड़े के कैंसर के बीच उच्च स्तरीय सह-संबंध इन दोनों के बीच, कारणात्मक संबंध प्रदर्शित करता है, परन्तु वास्तविक कारण मानसिक तनाव है जो दोनों को प्रभावित करता है। यद्यपि अन्य स्त्रोतों जैसे महामारी संबंधी शोध से यह अभिभूत करने वाले साक्ष्य मिलते हैं कि धूम्रपान फेफड़े के कैंसर का कारण हो सकता है परन्तु इस कारणात्मक संबंधको निश्चित रूप से कार्योत्तर शोध द्वारा प्रमाणित ही किया जा सकता है।

6-6 कार्योत्तर अनुसंधानकी सीमाएँ

जैसा ऊपर भी देखा गया, कार्योत्तर शोध की बहुत सी सीमायें है जैसे -

1. **चरों पर सीमित नियंत्रण -** एक आदर्श वैज्ञानिक शोध में शोधकर्ता सदैव निम्नलिखित नियत्रंण कर सकता है।

(i) वह अपने अध्ययन के लिए यादृच्छिक विधि से विषयोजनों के प्रतिदर्श प्राप्त कर सकता है।

(ii) वह यादृच्छिक विधि से विषयोजनों को विभिन्न समूहों में वितरित कर सकता है।

(iii) यह यादृच्छिक विधि से इन समूहों को विभिन्न शोधनों के लिए रख सकता है।

कार्योत्तर शोध में, शोधकर्ता का नियंत्रण केवल पहले वाले नियंत्रण तक सीमित है । उसके लिए सादृच्छिक प्रतिदर्श लेना संभव है परन्तु वह स्वतंत्र चरों पर कोई हेर-फेर या नियंत्रण नहीं कर सकता

क्योकि या तो पहले से घटित हो चुके हैं या उनमें हेर-फेर करना संभव नहीं होता । इस तरह वह यादृच्छिक विधि या अन्य किसी विधि से विषयोजनों को न तो विभिन्न शोधन समूहों में वितरित कर सकता है न ही शोधनों को यादृच्छिक विधि से विभिन्न समूहों में वितरित कर सकता है । विषयोजन एक तरह से उन वर्तमान जिनके कारणों का पता लगाना होता है, के आधार पर, स्वयं विभिन्न समूहों में बंट जाते है या यूँ कहिए कि अपने आपको चुन लेते हैं । इस प्रक्रिया में कुछ दूसरे विषयोजन जिनमें शोधकर्ता की रूचि नहीं होती या वे कारक जो लक्षणों के कारण नहीं है, शोध में शामिल होकर शोध को विकृत बना सकते हैं ।

2- **जिस प्रभाव के कारण के बारे मे शोध की जा रही है वह एक न होकर अनेक हो सकते हैं ।**

3- **शोधकर्ता उल्टी दिशा में चलता है -** यह परिणाम से कारण की ओर अग्रसर होता है और अनेक स्थितियों में शोध से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण और व्याख्या के लिए उसके पास ऐसी कोई परिकल्पना नहीं होती जो उसका मार्गदर्शन कर सकें। इसी कारण सतर्क वैज्ञानिक अन्वेषक कार्योत्तर शोध में रूचि नहीं लेते तथा उसमें कारण प्रभाव जैसे अभिव्यक्ति को मानने में हिचकिचाते है । परन्तु इससे यह भावना नहीं आनी चाहिये कि यह शोध प्रायोगिक शोध से घटिया है । इस प्रकार का पूर्वाग्रह रखना अनुचित होता क्योकि -

(i) हर प्रकार के शोध के अपने गुण और कमियां होती हैं । प्रायोगिक शोध की भी कुछ सीमाएं है जिनका पहले विचार किया जा चुका है । आवश्यकता इस बात की है कि जिस शोध को हमने अपने हाथ में लिया है उसकी सामर्थ्य और कमजोरियों के बारे में हमारी संतुलित समझ हो ।

(ii) शिक्षा तथा सामाजिक विज्ञानों में प्रायोगिक शोध की तुलना में कार्योत्तर शोध अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि इन क्षेत्रों में अनेक ऐसी समस्याएं है जिनका समाधान प्रायोगिक शोधों द्वारा नहीं हो सकता क्योंकि अनेक चरों पर नियंत्रण करना संभव नहीं है । यह बात ''बाल अपराध'' की समस्या के संदर्भ में भलीभांति स्पष्ट की जा चुकी हैं । इस प्रकार के अन्य उदाहरण भी हो सकते है जैसे, सड़क दुर्घटनाओं के कारण, अभिवृत्तियों या विश्वासों के कारण आदि। इस प्रकार की सभी स्थितियाँ में नियंत्रित जांच तो संभव है परन्तु वास्तविक प्रायोगिक शोध संभव नहीं है । शायद यह एक महत्वपूर्ण कारण है कि हम शिक्षा और सामाजिक विज्ञानों में प्रायोगिक शोधों की अपेक्षा कार्योत्तर शोध कहीं संख्या में पाते है ।

6.7 कार्योत्तर अनुसंधान में गुणात्मक सुधार हेतु उपाय

कार्योत्तर शोध में गुणात्मक सुधार लाने के लिए कुछ सुझाव इस प्रकार दिए गए है -

(i) **वैकल्पिक परिकल्पना का प्रयोग -** प्लैट (Platt 1964 pp. 347-357), चेम्बरलिन (Chamberlin 1965. pp 754-59, करलिंगर (Kerlinger 1983, pp. 389-90) और बेस्ट और काह्न (Best and Kahn, 1989 p. 145) ने वैकल्पिक या ''नियंत्रित'' पकिल्पनाओं के परीक्षण का सुझाव दिया है । करलिंगर इनको नियंत्रित परिकल्पनाएं इसलिए कहता है क्योंकि उसके अनुसार स्वतंत्र चरों को ''नियत्रित'' करने का यही एक मात्र रास्ता हैं परन्तु उसके अनुसार वैकल्पिक परिकल्पना आश्रित चर के लिए भी हो सकती हैं प्लेट ने इस प्रक्रिया को ''सबल अनुमान और चेम्बरलिन ने इसे ''बहु-परिकल्पनाओं के साथ कार्य करने की विधि'' कहा है।

उक्त बात को एक उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है | आम तौर पर ये देखा जाता है कि सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम निजी क्षेत्र के उपक्रम निजी क्षेत्र के उपक्रमों की अपेक्षा कम उपलब्धि प्रदर्शित करते हैं। एक शोधकर्ता इस न्यून उपलब्धि का कारण जानना चाहता है। उसकी परिकल्पना है, कि अत्यधिक नौकरी की सुरक्षा के कारण सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य करने वाले श्रमिक (सरकारी कर्मचारी) अपने कार्य के प्रति कम प्रेरित होते हैं। इसके अध्ययन के लिए वह कार्योत्तर विधि (शोध) का सहारा लेता है। वह एक सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम, जैसे एक सार्वजनिक राष्ट्रीयकृत बैंक, को अध्ययन के लिए चुनता है और उसके समानान्तर एक निजी क्षेत्र के उपक्रम लिमिटेड, बैंक को चुनता है। दोनों प्रकार के बैंक कर्मचारियों को वह एक बना बनाया या स्वनिर्मित अभिप्रेरणा मापक परीक्षण देता है। इसके आधार पर यदि वह यह देखता है कि दोनों प्रकार के बैक कर्मचारियों के अभिप्रेरणा स्तर में महत्वपूर्ण अन्तर है, तो उसके यह संतोष हो सकता है कि उसकी परिकल्पना का सत्यापन हो गया हैं। परन्तु अपने निष्कर्ष पर अधिक निश्चित होने के लिए उसे अन्य वैकल्पिक या नियंत्रित परिकल्पनाओं पर भी विचार करना चाहिए। इस प्रकार की कुछ अन्य परिकल्पनाएं इस प्रकार हो सकती है -

(अ) सार्वजनिक क्षेत्र के न्यून निष्पादन का कारण उसके कर्मचारियों का कम योग्यता वाला होना है।

(ब) कर्मचारियों को कम आर्थिक लाभ मिलने के कारण सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों का निष्पादन हीन होता है।

यदि शोधकर्ता इन दोनों परिकल्पनाओं का परीक्षण करके यह सिद्ध कर दे कि दोनों प्रकार के उपक्रमों में कर्मचारियों की योग्यता और मिलने वाले आर्थिक लाभों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है तो उसे अपने इस निष्कर्ष पर कि सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों के हीन निष्पादन का कारण उनमें प्रेरणा की कमी है अधिक विश्वास होगा। वह सही है कि किसी शोधकर्ता को अपने निष्कर्षों पर पूर्ण निश्चिता नहीं होती, परन्तु वैकल्पिक परिकल्पनाओं के परीक्षण से उसे अपने निष्कर्षों पर संदेह करने में कमी आएगी। इसके अलावा अपने प्राप्त निष्कर्षों पर और अधिक निश्चित होने के लिए यह वैकल्पिक कल्पना वाली विधि सभी प्रकार के शोधों के लिए उपयोगी हैं इसका केवल कार्योत्तर

शोधों तक सीमित नहीं है, परन्तु यहां यह अधिक आवश्यक है क्योंकि इसके निष्कर्षों में अधिक अनिश्चितता होती है।

ऐसे अनेक अध्ययनों के उल्लेख मिलते है जिसमें बहु-परिकल्पना प्रयोग विधि काम में लाई गई है। एक-दो उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं -

''प्रजातीय पूर्वाग्रह के लिए व्यक्तित्व के कारकों की अपेक्षा सामाजिक कारक अधिक जिम्मेदार है।''

इस परिकल्पना का परीक्षण, कार्योत्तर शोध के द्वारा नीग्रो लोगों पर अध्ययन करने किया गया। कार्योत्तर विधि का सहारा इसलिए लिया गया क्योंकि प्रायोगिक शोध से इसका परीक्षण संभव नहीं था। उत्तरी अमरीका के 4 शहरोंतथा दक्षिणी अमरीका के 4 शहरों से गोरे लोगों के यादृच्छिक विधि से 2 समूह बनाए गये तथा उन पर यहूदी विरोधी नीग्रो विरोधी तथा सत्तावाद मापनीयां का प्रयोग किया गया। शोधकर्ता यह प्रदर्शित करने में सफल रहा कि दो विभिन्न सामाजिक परिपेक्ष वाले, उतर और दक्षिण क्षेत्र के लोगों के नीग्रो विरोधी पूर्वाग्रह में सार्थक अन्तर था। दक्षिणी लोगों का नीग्रो विरोधी मापनी पर मध्यमान उतर के लोगों के मध्यमान की अपेक्षा अधिक था। परन्तु सत्तावाद की मापनी पर उनके मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं था। सत्तावाद व्यक्तित्व के एक पक्ष मापन करता है। इसे नियंत्रित परीक्षण के रूप में प्रयोग किया गया। दोनों क्षेत्रों के लोग सत्तावाद मापनी पर भिन्न नहीं पाए गए। (व्यक्तित्व पक्ष पर), पर नीग्रो-विरोधी मापनी पर सार्थक रूप से भिन्न पाए गए (सामाजिक पक्ष पर) इससे उपर्युक्त परिकल्पना हो गया तथा दक्षिण क्षेत्र में नीग्रो विरोधी पूर्वाग्रह में सामाजिक सांस्कृतिक कारक अधिक सक्रिय पाए गए।

एक अन्य अध्ययन में प्रभाव (आश्रित चर) से संबंधितवैकल्पिक परिकल्पना के परीक्षण का प्रयोग प्रदर्शित करने के लिए शोध योजना यह सत्यापित करने के लिए बनाई गई कि अंग्रेज तथा अमरीकी बालक टेस्ट चिंता में सार्थक रूप से भिन्न है परन्तु सामान्य चिन्ता में नहीं। यही भी प्रायोगिक शोध संभन नहीं था इसलिए कार्योत्तर का सहारा लिया गया। अंग्रेज और अमरीकी बालकों के दो प्रतिदर्श अध्ययन के लिए चुने गए और अन्य संभावित बाह्य स्वतंत्र चरों के प्रविष्ट को रोकने के लिए उन दोनों का सतर्कता पूर्वक सुमेलन किया गया। टेस्ट चिंता उत्पन्न करने के लिए उन्हें एक समान परीक्षा दी गई जो उसकी दृष्टि से उनके भावी शैक्षिक जीवन के बारे में निर्णय लेने में सहायक हो सकती थी। यहां परीक्षा, स्वतंत्र चर (कारणात्मक तत्व) थी तथा परीक्षागत चिंता तथा सामान्य चिंता आश्रित चर (परिणाम) के रूप में थे। अपनी परिकल्पना परीक्षण के लिए शोधकर्ता को यह प्रदर्शित करना था कि परीक्षाओं ने दोनों समूहों में विभिन्न परीक्षागत चिंता उत्पन्न क परन्तु सामान्य चितांए को विभिन्नता नहीं उत्पन्न कर सकी। इसमें वह सफल रहा। दोनों में परीक्षा जनित चिंता में सार्थक रूप से भिन्नता पाई गई। परन्तु सामान्य चिंता में दोनों समूहों में कोई सार्थक अन्तर नहीं था | तर्क स्पष्ट तथा साधारण था -

परीक्षा द्वारा विभिन्न प्रकार की परीक्षागत चिंता उत्पन्न हुई।

इसलिए दोनों समूहों में भिन्नता परीक्षाजनित चिंता के कारण थी। सामान्य चिंता के कारण नहीं।

यदि शोधकर्ता सामान्य चिंता पर भी दोनों समूहों को समान न पाता तो उसकी परिकल्पना का सत्यापन नहीं हो सकता था।

(ii) **सह प्रसरण विश्लेषण का प्रयोग(Analysis of Co variance) -** हमने प्रभावी और अप्रभावी समूहों के विषयोजनों के सुमेलन के द्वारा बाह्य चरों के नियंत्रण में चैपनिस के प्रयत्न को देखा। सुमेलन की इस विधि की आलोचना इस आधार पर की गई थी कि यह समूहों के विषयोजनों की संख्या को बुरी तरह से कम कर देती है । चैपनिस के अध्ययन में वह 2127 से आरम्भ होकर केवल 46 रह गई थी। उस पर भी केम्पवेल और स्टेनल के अनुसार प्रतीपगमन प्रभाव यह अब भी समतुल्य नहीं थे क्योकि विषयोजनों का चुनाव इसलिए हुआ था क्योकि वे सुदूर समूहों में थे । इसलिए उन्होनें विकल्प के रूप में सह प्रसरण विश्लेषण अभिकल्प का सुझाव दिया जिससे विषयोजनों को संख्या में भी कमी न आए तथा प्रतीपगमन प्रवाह को भी निष्क्रिय किया जा सकें।

उदाहरण के लिए हम एक बार फिर सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में धीमे-निष्पादन को लेते हैं और उस पर सह -प्रसरण विश्लेषण का प्रयोग करते हैं | यहां हम प्रेरणा को प्रायोगिक स्वतंत्र चर तथा योग्यता और आर्थिक सुविधाओं को सहचरों के रूप में ले सकते है जिससे यह देखा जा सके कि क्या प्रेरणा का अभाव, धीमी निष्पादन का कारण है ।

इस सबसे, जेसा कि विभिन्न विद्वानों ने सुझाव दिया है, यह निष्कर्ष निकालना तर्कसंगत होगा कि यद्यपि सभी क्षेत्रों में प्रायोगिक शोध की बहुत अधिक आवश्यकता है परन्तु कार्योत्तर शोध को बिल्कुल नकारना ठीक नहीं होगा। इस पर गंभीर रूप से ध्यान देना चाहिए ,हां यह जरूर है कि इसके परिणामों के विश्लेषण और व्याख्या में आवश्यक सतर्कता बरतनी चाहिये ।

जैसे -

(1) अपवादों को छोड़कर हमें कार्योत्तर शोध के परिणामों पर कोई ध्यान नहीं देना चाहिये, यदि वे परिकल्पना का सत्यापन नहीं कर पाते तथा उन परिणामों के प्रति अत्यधिक संदिग्ध मत वाला होना चाहिए जिसमें केवल एक ही परिकल्पना का परीक्षण किया गया हो अर्थात जिसमें वेकल्पिक या नियंत्रित परिकल्पनाओं का परीक्षण नहीं किया गया हो।

(2) हमें उन बाह्य चरों के प्रति सावधान रहना चाहिये जो परिणामों की वैधता को चुनौती दे सकते हैं ।

(3) हमें कार्योत्तर शोध की रिपोर्ट को और अधिक सतर्कता और सावधानी से पढ़ता चाहिये तथा उस पर बहुत समझ बूझकर अपना निर्णय देना चाहिए ।

6.9 सारांश

एक्स पोस्ट फैक्टो (कार्योत्तर अनुसंधान) एक ऐसा अनुसंधान है जिससे अनुसंधानकर्ता किसी प्रभाव के आधार पर इसके संभावित कारणों का पता लाने की कोशिक करता है । इस शोध में प्रभाव उपस्थित चर होता है तथा कारण स्वतंत्रचर होता है ।

6.10 शब्दावली

- **कार्य कारणसम्बन्ध -** कोई कार्य किन कारणों से सम्पन्न हुआ या किसी प्रभाव का मुख्य कारण क्या है |

6-11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

अति लघुत्तरात्मक प्रश्न -

1- निम्नलिखित का अर्थ बताइये -

(a) एक्सपोस्ट फैक्टों अनुसन्धान (b) कार्यकारण सम्बन्ध

लघुत्तरात्मक प्रश्न -

1- कार्योत्तर अनुसंधान की विशेषताएं बताइये?

2- कार्योत्तर अनुसंधान की क्या सीमाएं है ।

3- कार्योत्तर अनुसंधान एवं प्रयोगात्मक अनुसंधान में क्या अर्थ है?

निबंधात्मक प्रश्न -

1. एक उपयुक्त उदाहरण लेकर कार्योत्तर अनुसंधान का सविस्तार वर्णन कीजिए।

6-12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियां, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली |
- बेस्ट, जे. उस्लयू (1963) : रिसर्च इन एजूकेश्न, नई दिल्ली, प्रेटिंय हॉल |
- गुड, सी.वी. एवं स्केट्स डी.ई. (1954): मेथड्स ऑफ रिसर्च, न्यूयार्क एलिशन सेन्चुरी |
- एच.के. कपिल (2001) : अनुसंधान विधियां, (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा |
- एफ.एन. करलिंगर (1964) : फाउन्डेशन ऑफ विवेहरियल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं बिंसटन इंक, न्यूयार्क |

- भटगार, आर.पी. (1995) : शिक्षा अनुसंधान : विधि एवं विश्लेषण लायल बुक डिपो, कॉलेज रोड, मेरठ |
- शर्मा, आर.ए. (1995) : शिक्षा अनुसंधान, मरेठ इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ |
- सुखिया एस.पी.महरोत्रा, पी.पी. एवं मेहरोत्रा आर.एन. (1973) : शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा |
- सिद्धु के एस.(1985) : मेथड्स ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, नई दिल्ली, स्टरलिंग पब्लिशर्स|
- रायजादा बी.एस. (1999) : शिक्षा के अनुसंधान के आवश्यक तत्व |
- शर्मा, अरविन्द कुमार (2008) : शोध प्रविधियां एवं सूचना प्रौद्योगिकीएस एस पब्लिकेशनस, नई दिल्ली |
- जैन, एम.के. (2007) : शोध विधियां, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली |

इकाई - 7

शोध समस्या की परिभाषा एवं शोध समस्या चुनने का आधार

(Definition of Research Problem and criteria of Selecting a Research Problem)

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 समस्या के क्षेत्र से परिचित होना

7.4 समस्या का चयन

7.4.1 व्यावसायिक अनुभव (Professional experiences)

7.4.2 सिद्धांत से अनुमान (Inferences from theory)

7.4.3 व्यावसायिक साहित्य (Professional literature)

7.4.4 तकनीकी व सामाजिक परिवर्तन (Technological and Social Changes)

7.5 शोध समस्या के गुण एवं उसका अर्थ

7.6 शोध समस्या चुनने का आधार

7.7 सारांश

7.8 शब्दावली

7.9 निबंधात्मक प्रश्न

7.10 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

विश्व की सारी प्रगति विभिन्न क्षेत्रों में किये गए अनुसंधानों के कारण ही है | आज प्रत्येक क्षेत्र में इस बात का अनुभव किया जा रहा है कि यदि ज्ञान के विस्फोट को समझाना है, प्रगति की होड़ में आगे बढ़ना है तो उसका एक मात्र साधन वैज्ञानिक शोध ही हो सकता है | मनोविज्ञान में हमारा प्रयास, मानव के व्यवहार को समझने, उसकी भविष्यवाणी करने तथा उस पर नियंत्रण के लिए है | इसके लिए शोध कार्य एक प्रमुख साधन है | व्यवहार के विभिन्न घटकों को जानने, उसे उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों को जानकर उसके सम्बन्ध में भविष्यवाणी करने तथा व्यवहार के नियंत्रण का मार्ग केवल शोध के द्वारा ही खोजा जा सकता है | ज्ञान की वह शाखा अब बहुत पीछे रह जायेगी, जिसमें

वैज्ञानिक अनुसन्धानों का अभाव है | शोध प्रक्रिया का पहला चरण अन्वेषण के लिए उपयुक्त समस्या को चुनना है | शोध कठिनाई अनुभव होने पर ही शुरू होता है | जब भी कोई कठिनाई की स्थिति उत्पन्न होती है और उसके निराकरण की आवश्यकता होती है तो शोध किया जाता है | मनोविज्ञान शोध के प्रत्येक के क्षेत्र में अनेक समस्यायें सामने आती है और प्रत्येक का शुद्ध, व्यवहारिक या क्रियात्मक शोध से सन्दर्भ होता है | ऐसी समस्याओं को चिन्हित करना, उनके समाधान निकालना आवश्यक होता है और इस प्रकार ज्ञान के पिंड में, जिसे मनोविज्ञान मानते हैं, वृद्धि होती है | सम्पूर्ण शोध प्रक्रिया में समस्या का अभिज्ञान एक कठिन परन्तु अति महत्वपूर्ण अंग है | शोधकर्ता को इसके लिए अत्याधिक धेर्य और तर्कयुक्त विचार की आवश्यकता होती है | प्रारंभ में शोधकर्ता को शोध के लिए समस्या चुनने में कठिनाई होती है | ऐसी शोध प्रक्रिया में उसके सीमित ज्ञान व समस्या चिन्हित करने के लिए तैयार ना होने के कारण होता है | वह उन विषयों से भी अनभिज्ञ होता है जिसमें शोध की आवश्यकता होती है और इससे भी कि शोध के लिए उपयुक्त विषय चुनने में क्या प्रक्रियायें अपनानी होंगी |

7.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- समस्या के क्षेत्र से परिचित हो सकेंगें।
- शोध समस्या के विभिन्न क्षेत्रों के महत्व को जान सकेंगें |
- समस्या चयन की कला को जान सकेंगें |
- समस्या चयन के आधार को जान सकेंगें |
- शोध समस्या के गुण एवं उसके अर्थ को समझ सकेंगें |

7.3 समस्या के क्षेत्र से परिचित होना (Knowing the field of Problem)

सबसे पहले शोधकर्त्ता को एक बड़ा क्षेत्र (Broader Field) चुनना चाहिए जिसमें उसे अध्ययन करना है | उसे उस क्षेत्र में गहन रूचि होनी चाहिए | अध्ययन के सफल होने में उसका उत्साह और वास्तविक जिज्ञासा उसकी अभिप्रेरणा को बल देती है | चयनित क्षेत्र ऐसा होना चाहिए जिसमें शोधकर्ता मौलिकता व अच्छा निर्णय प्रदर्शित कर सके | अध्ययन के लिए समस्या छांटने में सबसे पहला और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कदम यह है कि शोधकर्ता को क्षेत्र के बारे में सब तथ्यों व विचारों का सम्पूर्ण ज्ञान हो अगर वह अपने चयनित क्षेत्र से परिचित है और उसे यह भी मालूम है कि इसके पहले क्या –क्या अध्ययन किये जा चुके हैं तो उसे यह भी पता चल जायेगा कि कौन सी समस्याओं का अभी निराकरण नहीं हुआ है | शोध रिपोर्टो (Research Report) के अंत में उनकी समीक्षाओं में दिए गए सुझावों के सर्वेक्षण से शोधकर्ता को किसी क्षेत्र विशेष में उपलब्ध ज्ञान की कमियों का पता चल सकता है |

लगभग सभी शिक्षा शोध के क्षेत्रों में आवधिक पत्रिकाए व वार्षिक ग्रन्थ सूचियों से शोधकर्ता को यह जानने में सहायता मिलती है कि उसकी रूचि व सामर्थ्य के क्षेत्र में क्या शोध कार्य चल रहा है |

शोध समस्या का चयन (Selection of a Research Problem) :-

विशाल क्षेत्र चयन करने के बाद शोधकर्ता को किसी छोटी स्पष्ट शोध समस्या की ओर आकृष्ट हो जाना चाहिए | उसे विशिष्ट प्रश्न का प्रकथन करना चाहिए जिसका उत्तर वह वैज्ञानिक विधि का प्रयोग कर , खोजना चाहता है |

ऐसी सभी मनोविज्ञान सम्बन्धी समस्यायों की सूची बनाना संभव नहीं है जिन पर शोध होना चाहिए | प्रत्येक शोधकर्ता अपनी अनूठी आवश्यकताओं व प्रयोजन के लिए समस्या चुनता है | कुछ ऐसे महत्वपूर्ण स्त्रोत भी होते हैं जो शोधकर्ता को चुनने में सहायक होते हैं |

व्यावसायिक अनुभव (Professional Experiences):-

शोध के नौसिखियों की समस्या का सर्वाधिक फलदायक स्त्रोत उसका अपना व्यावसायिक अनुभव है | कक्षा में शिक्षक व विद्यार्थी के बीच, विद्यार्थियों के आपस में और विद्यार्थी व सामग्री के बीच अन्योन्य क्रिया होती है | यह अन्योन्य क्रिया शिक्षा शोध द्वारा समाधान के लिए समस्या प्रदान का मुख्य स्त्रोत है | इसी प्रकार चिकित्सक का रोगियों के साथ एवं रोगियों की चिकित्सकों के साथ अनोन्य क्रिया होती है |

सिद्धांत से अनुमप्त (Inferences from theory):-

शोध की समस्याओं का दूसरा महत्वपूर्ण स्त्रोत शोधकर्ता के जाने हुए विभिन्न शैक्षिक व मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों से निकाले जाने वाले अनुमान है | विभिन्न सिद्धांतों निहित सामान्य नियमों का किसी भी विशिष्ट स्थिति में प्रयोग करने से ही शोध कार्य का शुभारम्भ होता है |यह निश्चित करने में सहायक होगा कि कोई सिद्धांत विशेष वास्तविक प्रयोग में स्थानांतरित किया जा सकता है कि नहीं | अधिगम सिद्धांत , व्यक्तित्व के सिद्धांत, बुद्धि के सिद्धांत , प्रेरणा के सिद्धांत , सामाजिक सिद्धांत आदि शोध के लिए विषयों के धनी स्त्रोत होते हैं | केवल वैज्ञानिक विधि के प्रयोग से हम मनोवैज्ञानिक स्तिथियों में विभिन्न सिद्धांतों की वैधता ,उनके अवसर व क्रियात्मकता का सफल परीक्षण कर सकते हैं |

व्यावसायिक साहित्य (Professional literature)

समस्याओं को चिन्हित करने के स्त्रोतों में एक यह भी है कि शोधकर्ता अपनी रूचि के क्षेत्र के साहित्य की पूर्ण जानकारी प्राप्त करे |व्यवसायिक साहित्य के अध्ययन से शोधकर्ता को ना केवल अति आवश्यक समस्याओं से परिचित होगा बल्कि उसे यह सुझाव भी मिलेगा कि शोध किस प्रकार किया जाए | शोध रिपोर्टे, पुस्तकों व लेखों के विवरण ,समयावधिक पत्रिकाएं ,शोध संक्षिप्त वार्षिक पुस्तकें, शब्दकोष व शोध निर्देशिकाएँ ऐसे क्षेत्रों को इंगित करती है जिसमें शोध की आवश्यकता है | मनोविज्ञान शोध का विश्वकोष, शोध ग्रन्थ, अंतर्राष्ट्रीय सारांश, मनोवैज्ञानिक शोध की हस्तपुस्तिका, मनोवैज्ञानिक सारांश और इसी प्रकार के अन्य प्रकाशन समस्याओं के विशाल स्त्रोत हैं | सामान्यतः प्रकाशित शोध रिपोर्टो का समापन शोध को आगे बढ़ाने के सुझाव से हुआ है | ऐसे सुझावों से शोधकर्ताओं को यह सोचने में सहायता मिलती है कि अपनाई गई विधियों को अन्य समस्याओं के

समाधान के लिए किस प्रकार अनुकूलित किया जा सकता है या ऐसा ही अध्ययन भिन्न क्षेत्र या विषय पर या भिन्न प्रतिरूपों के साथ कैसे किया जा सकता है |

शोध प्रारंभ करने वाले व्यक्ति के लिए पुनरावृति या पूर्ण शोध अध्ययन का विस्तार भी लाभप्रद व उचित गतिविधि है | यह सामान्य धारणा है कि एक बार अध्ययन पूरा होने के बाद, उसे दोहराना नहीं चाहिए | किसी अध्ययन को भिन्न समय में, भिन्न समूहों पर व भिन्न स्थानों पर दोहराने से शोध परिणामों के व्यापकीकरण की सीमा बढ़ जाती है और निष्कर्षों की वैधता सिद्ध करने हेतु अतिरिक्त साक्ष्य मिल जाते हैं | कभी-कभी शोध अध्ययनों की, अभिकल्पना, उपकरणों, आकंड़ों के संसाधन व विश्लेषण परिणामों में विरोधाभास व असंगतता आदि दुबर्लताओं के कारण आलोचना होती है | ऐसे अध्ययनों की अभिकल्पना व विधि में उपयुक्त संशोधन करने के बाद, परिणामों की असंगतता के संशोधन द्वारा पुनरावृति से बड़ा मूल्यवान व उचित योगदान मिल सकता है |

तकनीकी व सामाजिक परिवर्तन (Technological and Social Changes):-

तकनीकी व सामाजिक परिवर्तनों की मांग है कि शिक्षा संस्थाओं में विद्यार्थियों के लिए नए कार्यक्रम व पाठयक्रमों का विकास किया जाये इन सभी विकास कार्यों में शोध के लिए नई समस्याएं उत्पन्न होती है | मनोविज्ञान में कंप्यूटर प्रोग्राम (Computer Programme)व कंप्यूटर उपकरण (Computer Equipment) का प्रयोग ,कृत्रिम स्थिति , कम्पूटर आदि के पक्ष में बोल रहे है | मनोविज्ञान में इन सभी नई पद्धतियों का शोध प्रक्रिया द्वारा सावधानीपूर्ण मूल्यांकन होना चाहिए |

समस्या का चयन (Selection of Problem) हो जाने के बाद , अगला कार्य उसे शोध के अनुरूप परिभाषा देने का है |

"समस्या की परिभाषा से तात्पर्य उसके चारों ओर घेरा लगाने से है,आवश्यकता की स्थितियों में ऐसे ही प्रश्नों से , सावधानीपूर्वक अलग रखने से है"

कार्य प्रारंभ करने से पहले, शोधकर्ता को अपने आप में यह आश्वस्त होना चाहिए कि वह अपनी समस्या को स्पष्ट रूप से जानता है | समस्या को स्पष्ट रूप देना व फिर उसे सुकरणीय आकार में छोटा करना प्रारम्भ ही में अति महत्वपूर्ण है | मोनरो व एनेलहार्ट (1928)के अनुसार :-समस्या की परिभाषा का तात्पर्य है उसे विस्तार से सही –सही कहना है | प्रत्येक प्रश्न व उसके सहायक प्रश्नों, जिनका उत्तर देना है ,को स्पष्ट विनिर्दिष्ट करना चाहिए | जाँच की सीमा निर्धारित करनी चाहिए |प्रायः पूर्व में किये गए अध्ययनों की समीक्षा करना आवश्यक हो जाता है जिससे यह निर्णय लिया जा सके कि क्या करना है | कभी -कभी दृष्टिकोण या शिक्षा सिद्धांत का संरूपण आवश्यक हो जाता है जिस पर जाँच आधारित हो | अगर कुछ कल्पनाएँ की जाती है तो उनका स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए | यह कथन ,समस्या की स्पष्ट व परिशुद्ध परिभाषा को तथा शोध के भार को कम करने का माध्यम बताता है |

अभ्यास प्रश्न

शोध समस्या के चुनने का आधार बताएं ?

शोध समस्या चुनने में सिद्धांत से अनुमान से आप क्या समझते है ?

समस्या को परिभाषित करने से आप क्या समझते है ? विस्तार से बताएं |

7.4 शोध समस्या के गुण एवं उसका अर्थ (Meaning and characteristics of a Research Problem)

जब शोधकर्ता किसी क्षेत्र में किये गए शोधों की समीक्षा करने पर इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि विभिन्न लोगों द्वारा किये गए शोधों के परिणाम में असंगतता (inconsistency) है ,तो वह स्पष्टतः इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि कोई शोध समस्या मौजूद है | अब प्रश्न है कि शोध समस्या (research problem) से तात्पर्य क्या होता है? सामान्यतः शोध समस्या एक ऐसी समस्या होती है जिसके द्वारा दो या दो से अधिक चरों (variables)के बीच एक प्रश्नात्मक सम्बन्ध (interrogative relationship) की अभिव्यक्ति होती है | करलिंगर (Kerlinger, 1986) द्वारा शोध समस्या को कुछ इसी अर्थ में परिभाषित किया गया है , "समस्या एक ऐसा प्रश्नात्मक वाक्य या कथन होता है जो प्रश्न करता है – दो या दो से अधिक चारो के बीच कैसा सम्बन्ध है ?"

यदि इसी परिभाषा का विश्लेषण किया जाय तो हम पायेंगे कि शोध समस्या के कथन (the statement of research problem)कि कुछ विशेषताएँ है जो निम्न है :-

1:-समस्या कथन (Problem statement) की अभिव्यक्ति प्रश्नात्मक वाक्य द्वारा (interrogative sentence) होती है | ऐसा वाक्य बिल्कुल ही स्पष्ट शब्दों में लिखा जाता है | उदाहरण के लिए –

(क):- छात्रों के निष्पादन (classroom achievement) तथा बुद्धिलब्धि (IQ) में क्या सम्बन्ध होता है ?

(ख):- स्कूल के छात्रों में दुश्चिंता (anxiety) तथा बुद्धि (Intelligence) में क्या सम्बन्ध होता है ?

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि शोध समस्या के कथन स्पष्ट रूप से प्रश्नात्मक रूप (interrogative form) में अभिव्यक्ति होती है | कथन से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि उसमें कुछ पूछा जा रहा है

जिसका उत्तर शोध करने बाद ही दिया जा सकता है | कभी –कभी ऐसा होता है कि शोध की समस्या की अभिव्यक्ति एक प्रश्नात्मक रूप में ना करके साधारण रूप में भी कर दी जाती है | परन्तु यह प्रथा अधिक प्रचलित नहीं है क्योंकि इससे यह पता नहीं चल पता है कि वास्तव में शोधकर्ता किस बिंदु को लेकर शोध करना चाहता है |

2:- शोध कथन (Research Statement) द्वारा दो या दो से अधिक चरों के बीच के सम्बन्ध की अभिव्यक्ति होती है | इसका मतलब यह हुआ कि शोध समस्या के कथन की अभिव्यक्ति करने से पहले शोध कर्ता को चरों (variables) के बारे में एक निर्णय लेना पड़ता है | जैसे, उपयुक्त उदाहरण में (पहले कथन में)वर्ग निष्पादन (classroom achievement) तथा बुद्धिलब्धि (IQ) दो चर है | उसी तरह दूसरे कथन में भी दुश्चिंतता (anxiety), बुद्धि (intelligence) दो चर है | चरों की पहचान कर लेने के बाद दोनों के बीच एक विशेष सम्बन्ध (relationship)की उक्ति की जाती है |

3:- शोध समस्या का कथन ऐसा होना चाहिए जिसे आनुभविक विधियों (empirical methods) से जांच किया जाना सम्भव हो | दूसरे शब्दों में शोध समस्या का कथन ऐसा होना चाहिए कि उसके चरों (variable) का मापन आँकड़ों (data) का संग्रहण (collection) करके किया जाना सम्भव हो|

इन प्रमुख विशेषताओं के अलावा कुछ और भी वांछनीय विशेषताएँ (desirable characteristics) बतलाई गयीं है जिनसे शोध समस्या का स्वरुप स्पष्ट हो जाता है | ऐसे प्रमुख विशेषताएं निम्नांकित है–

1. किसी शोध समस्या को नैतिक (moral) मूल्यों से या निर्णयों से सम्बंधित नहीं होना चाहिए क्योंकि ऐसी शोध समस्याओं का अध्ययन करना असंभव नहीं तो मुश्किल अवश्य है | जैसे- क्या विधवा विवाह संपन्न होना चाहिए ? क्या व्यक्ति को सभी परिस्थितियों में झूठ बोलना चाहिए? आदि कुछ ऐसे प्रश्नात्मक कथन है जिनका अध्ययन करना काफी कठिन है |
2. शोध समस्या के वैज्ञानिक (scientific) होने के लिए यह भी आवश्यक है कि उसका सम्बन्ध महत्वपूर्ण विषयों एवं घटनाओं से हो | शोध समस्या का स्वरुप ऐसा भी होना चाहिए कि उसे जांच करने पर आवश्यकता से ज़्यादा धन एवं समय का व्यय न हो |
3. शोध समस्या को न तो अधिक सामान्य और न ही अत्यधिक विशेष होना चाहिए | उदाहरण के लिए शोध समस्या का कथन जैसे क्या सृजनशीलता व्यक्ति की आत्मयथार्तता (Self-actualization) द्वारा प्रभावित होती है , इक अत्यधिक सामान्य समस्या का उदाहरण है | इस ढंग की शोध समस्या की जांच नहीं की जा सकती है इसलिए वैज्ञानिक रूप से यह एक अर्थहीन समस्या बन जाती है | जैसा कि कर्लिंगर ने भी कहा है कि अगर समस्या अत्यधिक सामान्य है तो वह इतनी अस्पष्ट हो जाती है कि उसकी जांच नहीं की जा सकती है | इस प्रकार से वैज्ञानिक रूप से वह अर्थहीन होजाती है | उसी तरह से यदि कोई समस्या अत्यधिक विशिष्ट हो जाती है तो वह भी शोध की हिसाब से एकदम निरर्थक हो जाती है क्योंकि ऐसी शोध समस्या के अध्ययन से कोई अर्थपूर्ण सामान्यीकरण नहीं हो पाता है | करलिंगर ने इस पर अपनी बात रखते हुए कहा है कि शायद अत्यधिक विशिष्टता अत्यधिक सामान्यता से भी बड़ा खतरा है |

उपर्युक्त विवरण से या बात साफ़ है कि शोध समस्या एक प्रश्नात्मक कथन के रूप में व्यक्त की जाती है | शोध समस्या को वैज्ञानिक कहलाये जाने के लिए कुछ और भी आवश्यकताओं को पूरा करना अनिवार्य है |

अभ्यास प्रश्न

समस्या कथन से क्या अभिप्राय है? स्पष्ट करें |

शोध समस्या की क्या –क्या शर्तें हैं ?

शोध समस्या की कौन –कौन सी वांछनीय विशेषताएं बतायी गयीं हैं ?

एक शोध समस्या में कौन –कौन सी विशेषताएं होनी चाहियें उदाहरण सहित स्पष्ट करें ?

7.5 शोध समस्या चुनने का आधार (Criteria for Selecting a Research Problem)

शोधकर्त्ता द्वारा जाँच में ली जाने वाली समस्या पर विचार करते हुए उसे इस सम्बंध में स्वयं से श्रृंखलाबद्ध कुछ प्रश्न पूछने चाहिये | यह प्रश्न उसकी व्यक्तिगत उपयुक्तता व सामाजिक मूल्यों के आधार पर समस्या का मूल्यांकन करने में सहायक होतें हैं | अध्ययन पर कार्य प्रारम्भ करने से पहले इन सभी प्रश्नों के साकारात्मक उत्तर मिल जाने चाहिए |

1:- क्या समस्या शोध योग्य है? (Is the problem researchable)

कुछ ऐसी भी समस्याएँ होती है जिनका शोध द्वारा प्रभावशाली हल नहीं मिल सकता | यह प्रश्न कि क्या माध्यमिक स्कूलों में सेक्स शिक्षा देना उचित है ? एक मूल्यों सम्बंधी प्रश्न है और इसका उत्तर मूल्यों के आधार पर निर्णय लेकर ही दिया जा सकता है | शिक्षाशास्त्री ,माता-पिता , विद्यार्थी व शिक्षक ऐसे प्रश्न का उत्तर दे सकते हैं पर व्यवहार में , दार्शनिक प्रश्नों के उत्तर , वैज्ञानिक जाँच द्वारा नहीं दिए जा सकते हैं | विज्ञान , दार्शनिक व नैतिक प्रश्नों के उत्तर नहीं दे सकता | उचित समस्या सदा दो या अधिक चरों के आपसी संबंधों से जुड़ी है जिन्हें परिभाषित किया जा सकता है और मापा जा सकता है |

उपरोक्त चर्चा से यह नहीं मान लेना चाहिए कि दार्शनिक व नैतिक प्रकरणों के समाधान पाने के लिए शोध का सहारा नहीं लिया जा सकता है | जिस बिन्दु पर बल दिया जा रहा है वह यह है कि समस्या, शोध के ऐसे प्रश्नों के रूप में प्रस्तुत कि जाये जिसका आनुभविक हल मिल जाए | उदाहरण के लिए, ऊपर दिए गए प्रश्न को इस रूप में पूछा जाये 'माध्यमिक स्कूलों में सेक्स शिक्षा प्रदान करने से युवतियों की अभिवृत्तियों में विवाहपूर्ण सेक्स सम्बंधों के प्रति क्या प्रभाव होंगा ?' शोधकर्त्ता इस प्रकार के प्रश्नों पर सूचना संकलन के लिए अध्ययन की अभिकल्पना कर सकता है जो इस नैतिक प्रश्न का उत्तर ढूंढन में सहायक हो,"क्या माध्यमिक स्कूलों में सेक्स शिक्षा देना उचित है"?

2:-क्या समस्या नई है? (Is the problem new?)

ऐसी समस्या का अध्ययन निरर्थक है जिस पर अन्य शोधकर्त्ता पहले ही काफी जाँच कर चुके हैं|अज्ञातवश शोधकर्त्ता ऐसा अध्ययन पकड़ लेता है जो न तो नया है न मौलिक |अतः वह ऐसी समस्या पर अनावश्यक रूप से अपना समय नष्ट करता है जिसकी जाँच अन्य शोधकर्त्ता पहले ही कर चुका है | इसलिए अपने चुने हुए क्षेत्र में पहले ही किये जा चुके अध्ययनों के अभिलेखों को सावधानी से देख लेना चाहिए ताकि उसी पर दोबारा कार्य न हो | शोधकर्त्ता को यह सुनिश्चित किए बिना कि यह समस्या वास्तव में नई है और इस पर पहले जाँच नहीं कि गयी है , अपनी समस्या नहीं चुननी चाहिए | साथ ही , इसका यह अभिप्राय नहीं है कि जिस समस्या पर भूतकाल में जाँच हो चुकी है वह अध्ययन योग्य नहीं होती | यदि शोधकर्त्ता चाहता है कि पहले हुए अध्ययन के परिणामों को सत्यापित करे या उनकी वैधता पहले से बिल्कुल भिन्न स्थिति में भी मान्य हो तो वह पहले किये गए अध्ययन को दोहरा सकता है |

3:-क्या समस्या सार्थक है?(Is the problem significant)

समस्या की साथर्कता का प्रश्न इस बात से जुड़ा है कि शोधकर्त्ता अध्ययन विशेष में क्या उपलब्धि चाहता है ?अपनी चुनी हुई समस्या का समाधान ढूंढने में उसका उद्देश्य क्या है ?पहले ही विद्यमान ज्ञान के भंडार में उसे क्या वृद्धि करने की आशा है ? और इस नए ज्ञान का क्या मूल्य होगा ? यह अभी प्रश्न शोधकर्त्ता के सम्मुख होते हैं | यदि वह इन सब प्रश्नों का स्पष्ट उत्तर नहीं दे सकता तो उसे शोध के लिए वह समस्या नहीं चुननी चाहिए |

शोधकर्त्ता को यह दिखाना चाहिये कि इस अध्ययन से वर्तमान ज्ञान की कमियां पूरी होगी , पहले किये गए शोध में असंगतता को सुलझाने में सहायता होगी या अज्ञात तथ्यों को पुनःव्याख्या में सहायता होंगी यह परिणाम सिद्धांत , व्यापीकरण या नियमों के आधार होंगे और यह शोध को आगे बढ़ाने के लिए नई समस्याएँ प्रस्तुत करेंगे |अगर परिणामों में कोई प्रत्यक्ष प्रभाव या सम्बन्धं नहीं दिखता तो कम से कम उनका व्यावहारिक अनुपयोग तो स्पष्ट होना हो चाहिए |

4:- क्या समस्या शोधकर्त्ता के लिए सुसंगत है ? (Is the problem feasible for the particular researcher?)

ऊपर दी गयी तीन कसौटीयों से समस्या अच्छी हो सकती है परन्तु संभव है कि शोधकर्त्ता के निम्न वर्णित व्यक्तिगत पक्षों के दृष्टिकोण से सुसंगत न हो |

A. **शोध कार्य की योग्यता (Research competencies):** वह विद्यमान सिद्धांतों , विचारों व नियमों से परिचित हो ताकि उचित समस्या चिन्हित कर सके | उनमें आंकड़े एकत्रित करने के औज़ारों को विकसित करने ,उन पर काम करने और व्याख्या करने की आवश्यकता कुशलता व योग्यता होनी चाहिए | इसके अतिरिक्त उसे यह भी विचार कर लेना चाहिए कि शोध को पूरा करने के लिए उसके पास आवश्यक शोध अभिकल्प व सांख्यिकी प्रक्रिया का ज्ञान है या नहीं |

B. **रूचि व उत्साह (Interest and Enthusiasm):-** समस्या ऐसी होनी चाहिए जिसमें शोधकर्त्ता की वास्तव में रूचि है जिसके प्रति उसमें उत्साह है | वह समस्या अर्थपूर्ण हो और उससे शोधकर्त्ता में जिज्ञासा जागृत हो | ऐसे समस्या की जाँच जिसमें शोधकर्त्ता की कम रूचि है या बिल्कुल रूचि नहीं है , थकानभरी व स्वादरहित सिद्ध होगी |

C. **वित्तीय सोच विचार (Financial Consideration):-** समस्या वित्तीय पक्ष से सुसंगत होनी चाहिए |शोधकर्त्ता को यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि चयनित समस्या का जाँच कार्य करने के लिए उस के पास वित्तीय संसाधन उपलब्ध है | उसे आंकड़ो से संग्रहण के उपकरणों, छपाई, परीक्षण सामग्री, यात्रा व लिपिकीय सहायता पर सम्भावित व्यय का अनुमान लगा लेना चाहिए | यदि शोध योजना महँगी है तो शोधकर्त्ता को राजकीय व निजी स्त्रोतों व केन्द्रीय संघठनों जैसे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ,राष्ट्रिय परिषद्शिक्षा शोध व प्रशिक्षण और भारतीय परिषद् सामाजिक शास्त्र शोध से वित्तीय सहायता मिलाने की सम्भावनाओं पर भी विचार कर लेना चाहिए |

D. **समय की आवश्यकता (Time requirements):-** समस्या ऐसी होनी चाहिए जिसका अध्ययन व समापन निर्धारित अवधि में हो जाए | उसे ऐसी समस्या चुननी चाहिए जिस पर समय व शक्ति का कम व्यय हो | यह उचित होगा कि वह औंजारों के निर्माण व प्रयोग , आंकड़ों के संसाधन व विश्लेषण तथा रिपोर्ट लिखने में व्यतीत होने वाले समय कि योजना बना ले | यदि समस्या विस्तृत है तो अन्य व्यक्तियों की सहायता लेने की संभावनाओं पर भी विचार कर,एक टीम के रूप में योजना पर कार्य करना चाहिए |

E. **प्रशासनिक सोच विचार (Administrative considerations):-**व्यक्तिगत,वित्तीय व समय की आवश्यकताओं के अतिरिक्त,शोध अध्ययन सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए , शोधकर्त्ता को यह भी विचार करना चाहिए कि किस भांति के आंकड़ें औजार , विशेषज्ञकर्मी व प्रशासनिक सुविधाओं की आवश्यकता है उसे यह भी सुनिश्चित कर लेना

चाहियें कि क्या सम्बंन्धित आंकड़े उपलब्ध है | उसे यह भी सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि क्या प्राधिकारी उसे विद्यार्थियों से सम्पर्क करने,आवश्यक औंजारो के क्रियान्वयन या आवश्यक प्रयोग करने, शिक्षकों से साक्षात्कार करने या महत्वपूर्ण प्रलेखों व अभिलेखों के अभिगम्यता की अनुमति दे देंगे |

अभ्यास प्रश्न

शोध समस्या चुनने के कौन – कौन से प्रमुख आधार हैं ?

क्या समस्या शोधकर्त्ता के लिए सुसंगत है से आप क्या समझते हैं ? अपने शब्दों में स्पष्ट करें |

समस्या शोध योग्य है या नहीं किसी शोध में कितना आवश्यक है ? स्पष्ट करें

7.6 सारांश (Summary)

विश्व की सारी प्रगति विभिन्न क्षेत्रों में किये गए अनुसंधानों के कारण ही है | आज प्रत्येक क्षेत्रों में इस बात का अनुभव किया जा रहा है कि यदि ज्ञान के विस्फोट को समझाना है, प्रगति की होड़ में आगे बढ़ना है तो उसका एक मात्र साधन वैज्ञानिक शोध ही हो सकता है | मनोविज्ञान में हमारा प्रयास, मानव के व्यवहार को समझने, उसकी भविष्यवाणी करने तथा उस पर नियंत्रण के लिए है | सब से पहले शोधकर्त्ता को एक बड़ा क्षेत्र चुनना चाहिए जिसमें उसे अध्ययन करना है | उसे उस क्षेत्र में गहन रूचि होनी चाहिए | अध्ययन के सफल होने में उसका उत्साह और वास्तविक जिज्ञासा उसकी अभिप्रेरणा को बल देती है | चयनित क्षेत्र ऐसा होना चाहिए जिसमें शोधकर्ता मौलिकता व अच्छा निर्णय प्रदर्शित कर सके | अध्ययन के लिए समस्या छांटने में सबसे पहला और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कदम यह है कि शोधकर्ता को क्षेत्र के बारे में सब तथ्यों व विचारों का सम्पूर्ण ज्ञान हो अगर वह अपने चयनित क्षेत्र से परिचित है और उसे यह भी मालूम है कि इसके पहले क्या –क्या अध्ययन किये जा चुके है | विशाल क्षेत्र चयन करने के बाद शोधकर्ता को किसी छोटी स्पष्ट शोध

समस्या की ओर आकृष्ट हो जाना चाहिए | उसे विशिष्ट प्रश्न का प्रकथन करना चाहिए जिसका उत्तर वह वैज्ञानिक विधि का प्रयोग कर, खोजना चाहता है | समस्या का चयन (Selection of Problem) हो जाने के बाद , अगला कार्य उसे शोध के अनुरूप परिभाषा देने का है |

"समस्या की परिभाषा से तात्पर्य उसके चारों ओर घेरा लगाने से है,आवश्यकता की स्थितियों में ऐसे ही प्रश्नों से , सावधानीपूर्वक अलग रखने से है" |

जब शोधकर्ता किसी क्षेत्र में किये गए शोधों की समीक्षा करने पर इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि विभिन्न लोगों द्वारा किये गए शोधों के परिणाम में असंगतता (inconsistency) है ,तो वह स्पष्टतः इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि कोई शोध समस्या मौजूद है | शोधकर्त्ता द्वारा जांच में ली जाने वाली समस्या पर विचार करते हुए उसे इस सम्बंध में स्वयं से श्रृंखलाबद्ध कुछ प्रश्न पूछने चाहिये | यह प्रश्न उसकी व्यक्तिगत उपयुक्तता व सामाजिक मूल्यों के आधार पर समस्या का मूल्यांकन करने में सहायक होते हैं |अध्ययन पर कार्य प्रारम्भ करने से पहले इन सभी प्रश्नों के साकारात्मक उत्तर मिल जाने चाहिए | अत: हमें यह समझ लेना चाहिये कि एक उच्च स्तरीय शोध कार्य के लए उच्च स्तरीय शोध समस्या का होना अति आवश्यक है |

7.7 शब्दावली: (Glossary)

- **समस्या** समस्या की परिभाषा से तात्पर्य उसके चारों ओर घेरा लगाने से है,आवश्यकता की स्थितियों में ऐसे ही प्रश्नों से , सावधानीपूर्वक अलग रखने से है |

7.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. यह वर्णन करें कि शोधकर्ता को , जिस क्षेत्र से अपनी समस्या चुनता है , उससे पूर्ण परिचित क्यों होना चाहिए ?
2. समस्या के चयन हेतु मुख्य स्रोतों की सूची देते हुए इनका विवरण दीजिए |
3. समस्या चयन के आधार के सम्बन्ध में विस्तार से टिप्पणी लिखिये |
4. शोध समस्या से आप क्या समझते हैं ? शोध समस्याके प्रमुख गुणों या विशेषताओं का वर्णन करें |

7.9 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची(Suggested Readings)

- Best, John W. , Kahn J James (2002)Research In Education, Allyn & Bacon; 9th Edition.
- Kerlinger, F.N. (1986) Foundation of Behavioral Research Holt, Rinehart and Winston, Inc., American Problem Series, New York, NY
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) शिक्षा मनोविज्ञान, पटना, भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, वाराणसी, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

- सिंह, अरूण कुमार, (2001) उच्चतर मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- Wiersma, W.,& Jurs, S.G.(2009) Research Methods in Education: An Introduction. New Delhi: Pearson Publication.

इकाई - 8

परिकल्पना का अर्थ एवं प्रकार

Meaning and types of Research Hypothesis

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 परिकल्पना : अभिप्राय

8.4 शोध समस्या तथा शोध परिकल्पना में अंतर

8.5 परिकल्पना के प्रकार

8.5.1 चरों की संख्या के आधार पर

8.5.2 चरों में विशेष सम्बन्ध के आधार पर

8.5.3 विशिष्ट उद्देश्य के आधार पर

8.6 सारांश

8.7 शब्दावली

8.8 निबंधात्मक प्रश्न

8.9 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

मनोवैज्ञानिक शोध का स्वरुप चाहे प्रयोगात्मक हो या अप्रयोगात्मक हो, शोध समस्या का वैज्ञानिक तरीके से चयन हो जाने के पश्चात शोधकर्ता परिकल्पना का निर्माण करता है | अब प्रश्न यह उठता है कि परिकल्पना से शोधकर्ता का क्या तात्पर्य होता है तथा इसका प्रतिपादन क्यों किया जाता है | चूँकि अब तक आप शोध समस्या के बारे में जान एवं समझ चुके होंगे अतः प्रस्तुत इकाई में हम समस्या चयन के पश्चात समाधान की दिशा में दूसरा कदम रखेंगे | इस इकाई में आप परिकल्पना का अर्थ एवं उसके विभिन्न प्रकारों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे | परिकल्पना का ज्ञान आपको किसी भी शोध की समस्या के समाधान की दिशा में चिंतन का नया आयाम प्रदान करेगा और आपको वैज्ञानिक तरीके से परिकल्पना का निर्माण करने में सहायता प्रदान करेगा |

8.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- परिकल्पना के अर्थ को समझ सकेंगे |

- परिकल्पना के विभिन्न प्रकारों को जान सकेंगे।
- परिकल्पना निर्माण के उद्देश्य पर प्रकाश डाल पायेंगे |
- परिकल्पना को परिभाषित कर उनकी विशेषताएं बता पायेंगे |
- शोध समस्या तथा शोध परिकल्पना में अंतर को समझ सकेंगे |

8.3 परिकल्पना : अभिप्राय (Hypothesis: Connotation)

एक बार समस्या के परिभाषित हो जाने के बाद परिकल्पना का निर्माण और जाँच दूसरा महत्वपूर्ण चरण है | परिकल्पना का शाब्दिक अर्थ पूर्व चिंतन से है | परिकल्पना शोध का एक आवश्यक अंग है इसके आभाव में शोध कार्य एक उद्देश्यहीन क्रिया है | भाषा के दृष्टिकोण से Hypothesis शब्द , दो शब्दों hypo (कम) व thesis (शोध लेख) से बना है जिसका अर्थ है –शोध लेख से कम निश्चित| यह उपलब्ध साक्ष्य पर आधारित एक प्रस्ताव या उचित अनुमान है जिसे अनुसंधायक अपने अध्ययन द्वारा सिद्ध करना चाहता है | शब्द 'परिकल्पना','सिद्धांत 'व 'निष्कर्ष 'प्रायः ही शोध साहित्य में प्रयोग होते हैं और उनके स्पष्टीकरण की आवश्यकता है | 'परिकल्पना' की सटीक परिभाषा है '**समस्या के निराकरण के लिए सुझाया गया तात्कालिक साध्य '** और 'सिद्धांत ' वह अन्तिम परिकल्पना है जिसके पक्ष में सभी साक्ष्य हों | यह अन्तिम परिकल्पना जो सभी साक्ष्यों के अनुकूल हों, अध्ययन से प्राप्त मुख्य निष्कर्ष का रूप शोधकर्ता के दृष्टिकोण से परिकल्पना को सुविधापूर्वक तात्कालिक साध्य कहा जा सकता है और सिद्धांत वह अन्तिम परिकल्पना है, जो सभी साक्ष्यों से पक्ष में समर्थित है | चूंकि वैज्ञानिक विधि से प्राप्त ज्ञान नए आंकड़े मिलने पर संशोधित हो सकता है, सिद्धांत केवल एकरूप में सदा कार्यकारी कल्पना रहता है जिस कारण परिकल्पना व सिद्धांत में रूढ अन्तर (साक्ष्य की बढ़ती हुई पर्याप्तता और परिणामस्वरूप अधिक निश्चितता के आधार पर) केवल आपेक्षिक है | सभी व्यावहारिक प्रयोजनों के लिए परिकल्पना के दोहरे प्रयोग से शोधकर्ता को चिन्तित नहीं होना चाहिए बल्कि उसे लाभप्रद अनुस्मरण के रूप में यह मानना चाहिए कि वैज्ञानिक विधि से प्राप्त कोई भी निष्कर्ष निश्चित व अंतिम सत्य नहीं है |

शोध प्रक्रिया में विश्वसनीय ज्ञान प्राप्ति के लिए परिकल्पना एक शक्तिशाली माध्यम है | इससे शोधकर्ता को सिद्धांत को प्रेक्षण को सिद्धांत से सम्बद्ध करने में सहायता मिलती है | परिकल्पनाएं समस्याओं के सुझाए समाधान (हल) के रूप में इस लक्ष्य के साथ संरूपित की जाती है कि आगे के अध्ययन उसे अस्वीकार भी कर सकते हैं | उनसे शोधकर्ता को अपने अध्ययन में चरों को स्थापन करने व पहचानने में मदद मिलती है और यह सुझाव भी मिलता है कि कौन सी विधिक प्रक्रियाएं उपयोग की जाए |

मनोवैज्ञानिक शोध का स्वरुप चाहें प्रयोगात्मक हो या अप्रयोगात्मक हो , शोध समस्या का वैज्ञानिक चयन हो जाने के बाद शोधकर्ता परिकल्पना का प्रतिपादन करता है | प्रश्न यह उठाता है कि परिकल्पनासे शोधकर्त्ता का क्या तात्पर्य होता है तथा इसका प्रतिपादन क्यों किया जाता है | जब शोधकर्त्ता किसी शोध समस्या का चयन कर लेता है तो वह उसका एक अस्थायी समाधान एक जांचने योग्य प्रस्ताव के रूप में करता है | इसी प्रस्ताव को तकनीकी भाषा में परिकल्पना कहा जाता है | संक्षेप में तब यह कहा जा सकता है कि किसी शोध समस्या का एक प्रस्तावित जांचने योग्य उत्तर

ही परिकल्पना कहलाता है | एक उदाहरण लिया जाये – मान लिया जाये कि एक शोधकर्ता की शोध समस्या यह है – क्या सीखना पर पुनर्बलन का प्रभाव पड़ता है ? थोड़ी देर के लिए मान लिया जाये कि शोध समस्या का एक प्रस्तावित जांचने योग्य उत्तर इस प्रकार तैयार किया जाता है – " पुरस्कार से सीखने की क्रिया तेजी से होगी तथा दंड देने से सीखने की क्रिया धीमी पड़ जायेगी" यह जांचने योग्य उत्तर परिकल्पना कहलायेगा | अगर प्रयोग या शोध का निष्कर्ष से परिकल्पना की पुष्टि हो जाती है तो परिकल्पना को सही मान लिया जाता है | किन्तु यदि पुष्टि नहीं हो पाती है , तो परिकल्पना में या तो परिमार्जन कर दिया जाता है या उसकी जगह दूसरी परिकल्पना विकसित कर ली जाती है |

परिकल्पना के कुछ प्रमुख शोध – विशेषज्ञों ने इस प्रकार परिभाषित किया है

मैकग्युगन (1990) के अनुसार, " दो या दो से अधिक चरों के बीच संभावित सम्बंधों के बारे में बनाएँ गए जांचने योग्य कथन को परिकल्पना कहते हैं"|

A testable statement of a potential relationship between two or more variables is called hypothesis- **Macgugan: Experimental Psychology. 1990**

करलिंगर के अनुसार , " दो या दो से अधिक चरों के बीच सम्बंधों के आनुमानिक कथन को परिकल्पना कहा जाता है | परिकल्पना को हमेशा घोसणात्मक वाक्य के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है और वे चरों से चरों के बीच में सामान्य या विशिष्ट सम्बन्ध बतलाते है |"

A hypothesis is conjectural statement of the relation between two or more variables. Hypotheses are always in declarative sentences from and they relate either generally or specifically variables to variables- **Kerlinger : Fondations of Behavioural Research, 1986**

इन परिभाषाओं का विश्लेषण करने पर हमें कुछ ऐसे तथ्य प्राप्त होते हैं जिनसे परिकल्पना का स्वरुप स्पष्ट हो जाता है , कुछ ऐसे तथ्य निम्नांकित है –

1. परिकल्पना में दो या दो से अधिक चरों के बीच एक सम्बंध बताया जाता है जैसे , ' कुछ के पुरस्कार देने से सीखने की प्रक्रिया तेजी से होती है |'एक ऐसी ही परिकल्पना का उदाहरण है जिसमें पुरस्कार (एक चर) तथा सीखना (दूसरा चर) के बीच एक तरह का सम्बन्ध बताया जा रहा है |
2. परिकल्पना चरों के बीच एक जांचने योग्य कथन के रूप में अभिव्यक्त की जाती है | इसका मतलब यह हुआ कि परिकल्पना में दो या दो से अधिक ऐसे चर होते हैं जिन्हें मापा जाना सम्भव है | जैसे- ऊपर के उदाहरण में पुरस्कार तथा सीखना दोनों ऐसे ही चर जिनका आसानी से मापन किया जा सकता है |
3. परिकल्पना द्वारा चरों के बीच एक सामान्य या विशिष्ट सम्बंन्धों की अभिव्यक्ति की जाती है

इन तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि परिकल्पना की कुछ अपनी विशेषताएं होती है जिनसे इनके स्वरुप के स्पष्ट झलक मिलती है |

अभ्यास प्रश्न

परिकल्पना को परिभाषित करें |

परिकल्पना का स्वरुप स्पष्ट करें |

Hypothesis शब्द की व्युत्पत्ति समझाएं ?

8.4 शोध समस्या तथा शोध परिकल्पना में अंतर (The difference between research problem and research hypothesis)

शोध समस्या दो या दो से अधिक चरों के बीच एक प्रश्नात्मक वाक्य या कथन (interrogative sentence or statement) होता है | परिकल्पना (hypothesis) दो या दो से अधिक चरों के बीच व्यक्त प्रश्नात्मक कथन का एक अस्थायी समाधान (tentative solution) होता है | स्पष्ट है कि इन दोनों में बहुत हद तक समानता (similarity) हैं | जैसे दोनों के द्वारा दो या दो से अधिक चरों के बीच एक खास तरह के सम्बन्ध की अभिव्यक्ति होती है | दूसरी समानता यह बतलायी गयी है कि इन दोनों के द्वारा शोध को दिशा निर्देश मिलता है | परन्तु इन समस्याओं के बावजूद भी इन दोनों में निम्नांकित अन्तर है :-

(1) परिकल्पना दो या दो से अधिक चरों के बीच सीधे एक जाँचनीय कथन (testable statement) होता है जबकि शोध समस्या अपने आप में जाँचनीय कथन नहीं होता है लेकिन इसका आशय (implication) आनुभविक विधियों (empirical methods)द्वारा अवश्य जांचनीय होता है | उदाहरण के लिए , क्या पुनर्बलन (reinforcement) का प्रभाव सीखने कि प्रक्रिया पर पड़ता है ? एक शोध समस्या (research problem) का

उदाहरण है जिसकी जाँच सम्भव नहीं है | परन्तु जब इस शोध समस्या के समाधान के लिए एक अस्थायी तौर पर हम एक प्रस्ताव (proposition) तैयार कर लेते हैं , तो यह परिकल्पना (hypothesis) का रूप ले लेता है जिसकी जाँच सम्भव है |जैसे , "पुरस्कार देने से सिखने कि प्रक्रिया तेजी से होगी" एकपरिकल्पना है जिसकी जाँच शोधकर्ता प्रयोग करके करता है |

(2) शोध समस्या की अभिव्यक्ति एक प्रश्नात्मक कथन (interrogative statement) के रूप में की जाती है जबकि परिकल्पना (hypothesis) की अभिव्यक्ति एक घोषणात्मक वाक्य कथन (declarative sentence or statement) के रूप में की जाती है | जैसे, क्या पुनर्बलन (reinforcement) का प्रभाव सीखने की प्रक्रिया पर पड़ता है ? एक प्रश्नात्मक कथन (interrogative statement) है जो शोध समस्या का एक उदाहरण है | परन्तु " पुरस्कार से सीखने की प्रक्रिया तेजी से होगी" या "दंड देने से सीखने की प्रक्रिया धीमी गति से होगी" एक घोषणात्मक कथन है जो परिकल्पना का एक उदाहरण है |

(3) शोध समस्या द्वारा यह पता चलता है कि चरों के बीच के सम्बंधों की मुख्य समस्या क्या है ? इससे उसके समाधान की ओर कोई संकेत नहीं मिलता है परन्तु परिकल्पना द्वारा चरों के बीच के सम्बंधों की समस्या के संभावित हल का संकेत मिलता है|

इस तरह से स्पष्ट है कि शोध समस्या अथा परिकल्पना में समानता होते हुए भी कुछ भिन्नताएँ हैं|

अभ्यास प्रश्न

1. शोध समस्या तथा शोध परिकल्पना में अंतर (The difference between research problem and research hypothesis) स्पष्ट करें|

---

2. शोध समस्या को परिभाषित करें |

8.5 परिकल्पना के प्रकार (Types of Hypothesis)

मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा के क्षेत्र में शोधकर्त्ताओं द्वारा बनाये गए परिकल्पनाओं के स्वरुप पर यदि ध्यान दिया जाए तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि उसे कई प्रकारों में बाँटा जा सकता है | शोध विशेषज्ञों ने परिकल्पना का वर्गीकरण निम्नांकित तीन आधारों पर किया है-

8.5.1 चरों के संख्या के आधार पर :- (On the basis of number of variables)

मनोवैज्ञानिकों ने परिकल्पनाओं का सबसे सरल वर्गीकरण परिकल्पना में निहित चरों के आधार पर किया है |इस कसौटी पर परिकल्पना के मुख्य दो प्रकार बताये गए हैं_

(a)साधारण परिकल्पना (Simple hypothesis)-साधारण परिकल्पना ऐसी परिकल्पना को कहा जाता है जिसमें चरों की संख्या मात्र दो होती है और सिर्फ इन्हीं दो चरों के सम्बन्ध द्वारा शोध समस्या का एक प्रस्तावित उत्तर दिया जाता है | उदाहरण के लिए, "बच्चों की बुद्धि(Intelligence) तथा वर्ग उपलब्धि (Classroom achievement) में धनात्मक सहसम्बन्ध होता है |" इस परिकल्पना में दो चर है अर्थात बुद्धि तथा वर्ग उपलब्धि जिनके बीच एक खास सम्बन्ध की चर्चा कि गयी है | अतःयह एक साधारण परिकल्पना का उदाहरण है |

(b)जटिल परिकल्पना(Complex hypothesis)-जटिल परिकल्पना ऐसी परिकल्पना को कहा जाता है जिसमें चरों की संख्या दो से अधिक होती है और उनमें एक खास सम्बन्ध बतलाकर शोध समस्या का प्रस्तावित उत्तर तैयार किया जाता है | जैसे , "शहर के उच्च सामाजिक –आर्थिक स्तर के लोगों में धूम्रपान करने की प्रवृत्ति देहात के मध्यम सामाजिक -आर्थिक स्तर के लोगों की अपेक्षा अधिक होती है |"इस परिकल्पना में तीन चर है –सामाजिक –आर्थिक स्तर ,धूम्रपान की प्रवृत्ति तथा शहरी-ग्रामीण क्षेत्र | इन तीनों चरों में विशेष प्रकार का सम्बन्ध बतलाकर जिस परिकल्पना का उल्लेख किया गया है ,वह निश्चित रूप से एक जटिल परिकल्पना का उदाहरण है |

8.5.2 चरों में विशेष सम्बन्ध के आधार पर (On the basis of specific relationship of variables)

कुछ शोध विशेषज्ञों ने परिकल्पना का वर्गीकरण चरों के विशिष्ट सम्बन्धों के आधार पर किया है| जैसे ,मैकग्यूगन (McGuigan,1990) ने इस कसौटी के आधार पर परिकल्पना के मुख्य दो प्रकार बतलाये है जो निम्नांकित है –

(a)सार्वत्रिक परिकल्पना(Universal hypothesis)-जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है ,इस तरह के परिकल्पना का स्वरूप ही कुछ ऐसा होता है जो निहित चरों के सभी तरह के मानों के बीच सम्बन्ध को हर परिस्थिति में हर समय बनाये रखता है | जैसे, "मानव की सीखने की प्रक्रिया पुरस्कार तथा प्रशंसा द्वारा तेजी से होती है ",ऐसी परिकल्पना का उदाहरण है जिसमें बतलाया गया सम्बन्ध हर परिस्थति में हर समय प्रत्येक मानव पर लागू होता है | परन्तु मनोविज्ञान में चूँकि जीव के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है और चूँकि व्यवहारों में विभिन्नता होने की संभावना अधिक होती है ,इसलिए इस तरह की सार्वत्रिक परिकल्पना की सीमा बंधी हुई होती है | जैसे ,उपयुक्त परिकल्पना को ही ले लिया जाये | यह परिकल्पना सामान्य मानव के लिए तो ठीक है परन्तु असामान्य मानव के लिए कहाँ तक उतना ही उपयुक्त होगा ,कहना मुश्किल होगा | अतः व्यवहारों में विभिन्नता के कारण सार्वत्रिक परिकल्पना पाने आप ही एक सीमा में बंध जाती है |

(b)- अस्तित्वात्मक परिकल्पना(Existential hypothesis)- वैसी परिकल्पना को कहा जाता हैं जो सभी व्यक्तियों या परिस्थितियों के लिए नहीं तो कम-से-कम एक व्यक्ति या परिस्थिति के लिए निश्चित रूप से सही होती है | जैसे , यदि यह परिकल्पना विकसित की जाती है कि 'वर्ग में कम-से-कम एक छात्र तो ऐसा है जिसमें सीखनें कि प्रक्रिया दण्ड देने से तेजी से होती है |'तो यह एक अतित्वात्मक परिकल्पना का उदाहरण है |इस ढंग कि परिकल्पना के साथ एक दोष यह बतलाया

गया है कि यदि वह जाँच के बाद सही पाई जाती है तो उसका सामान्यीकरण अन्य व्यक्तियों के लिए नहीं किया जा सकता है और इस तरह से आगे की समस्या शोधकर्ता के लिए बनी रह जाती है | ऐसी परिस्थिति में शोधकर्ता एक नहीं बल्कि कई अस्तित्वात्मक परिकल्पनाओं की जाँच करता है और तब कहीं जाकर वह सामान्यीकरण करने कि अवस्था में पहुँच जाता हैं

8.5.3 विशिष्ट उद्देश्य के आधार पर (On the basis of specific purpose)

शोध के विशिष्ट उद्देश्य के अधर पर शोध मनोवैज्ञानिकों ने परिकल्पना कोनिम्नांकित पाँच भागों में बाँटा है –

(a)कारणत्व परिकल्पना(Causal hypothesis)- व्यवहार के कारणों को नियंत्रित करने तथा उसकी व्याख्या के उद्देश्य के अनुसार शोधकर्त्ता कारणत्व परिकल्पना का निर्माण करते हैं | कारणत्व परिकल्पना एक ऐसी परिकल्पना होती है , जिसके माध्यम से व्यवहार का विशिष्ट करण या व्यवहार पर पडने वाले विशिष्ट प्रभाव की व्याख्या होती है | उदाहरण के लिए , शोधकर्त्ता यह परिकल्पना कर सकता है कि थकान से अधिगम में हास्य होता है ,तो यह कारणत्व परिकल्पना का उदाहरण होगा | क्योंकि उसमें अधिगम में हास्य होने का कारण थकान बतलाया जाता है हालांकि अधिगम में हास्य होने का कारण मात्र थकान ही नहीं होता है |

(b)वर्णनात्मक परिकल्पना (Descriptive hypothesis)- व्यवहार के बारे में पूर्वकथन तथा उसका वर्णन करने से शोधकर्त्ता वर्णनात्मक परिकल्पना का निर्माण करत है | वर्णनात्मक परिकल्पना वैसे परिकल्पना को कहा जाता है जो व्यवहार की व्याख्या उसकी विशेषताओं या उस परिस्थिति जिसमें वह होता है , के रूप में करता है | इस तरह का परिकल्पना शोधकर्त्ता को व्यवहार के गुणों की पहचान करने में मदद करता है और उसे पूर्वकथन करने में भी मदद करता है | इस ढंग के परिकल्पना की सबसे मुख्य विशेषता यह होती है कि इसमें व्यवहार के कारण की पहचान करने पर बल नहीं डाला जाता है | इसे एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझाया जा सकता है |मान लिया जाए शोधकर्त्ता यह परिकल्पना करता है कि थकान में व्यक्ति में आगे कार्य की अनिच्छा होता है ,तो यह वर्णानात्मक परिकल्पना का उदाहरण होगा, क्योंकि इसमें थकान में होने वाले व्यवहार का मात्र वर्णन किया जा रहा है |

(c)शोध परिकल्पना या कार्यरूप परिकल्पना (Research hypothesis or Working hypothesis)- शोध परिकल्पना (research hypothesis) से तात्पर्य वैसी परिकल्पना से होता है जो किसी घटना या तथ्य के लिए बनाये गए विशिष्ट सिद्धांत (specific theory) से निकाली गई अनुमिति (deductions) पर आधारित होती है | शोधकर्त्ता इस विश्वास के साथ इस तरह की परिकल्पना का प्रतिपादन करता है कि वह यथार्थ (accurate) है क्योंकि वह एक सिद्धांत पर आधारित होता है | शोधकर्त्ता की तमन्ना यही रहती है कि शोध के परिणाम द्वारा उसकी शोध परिकल्पना की संपुष्टि हो जाये, हालांकि कभी –कभी उसकी यह तमन्ना पूरी नहीं हो पाती है | शोध परिकल्पना को एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझा जा सकता है –सीखने का एक प्रमुख सिद्धांत 'सूझ सिद्धांत 'है | यदि इस पर आधरित करके कोई शोधकर्त्ता यह परिकल्पना बनाता है कि "व्यक्ति सूझ द्वारा प्रयत्न तथा भूल (trial and error) की अपेक्षा जल्दी सीखता हैं"(Persons learns by insight quicker than by trial and error) तो यह एक शोध परिकल्पना का उदाहरण होगा |

शोध परिकल्पना के संक्रियात्मक अभिव्यक्ति (Operational statement) को ही वैकल्पित परिकल्पना कहा जाता है |

शोध परिकल्पना की अभिव्यक्ति (expression) दो ढंग से की जा सकती है –दिशात्मक अभिव्यक्ति (directional expression) तथा अदिशात्मक अभिव्यक्ति (non- directional hypothesis) | उदाहरण के लिए , मान लिया जाये कि कोई शोधकर्त्ता व्यक्तियों के दो समूहों में बुद्धि में अन्तर का अध्ययन करना चाहता है जिसके लिए वह शोध परिकल्पना इस तरह बनाता है – समूह 'अ' समूह 'ब' से बुद्धि में श्रेष्ठ है |"इस शोध परिकल्पना के लिए वह वैकल्पिक (alternative hypothesis) परिकल्पना दो तरह से तैयार कर सकता है | समूह अ तथा समूह ब की बुद्धि एक सामान है | या फिर समूह ब बुद्धि में समूह अ से श्रेष्ठ है या समूह अ बुद्धि में समूह ब से श्रेष्ठ है | पहली परिकल्पना अदिशात्मक ढंग से अभिव्यक्त की गयी है क्योंकि इसमें समूह व तथा समूह ब में अन्तर की कोई दिशा का उल्लेख नहीं है | परन्तु दूसरी परिकल्पना दिशात्मक ढंग (directional way) से अभिव्यक्त की गई है क्योंकि इसमें समूह अ तथा बा के अन्तर में एक दिशा पर बल डाला गया है | अदिशात्मक परिकल्पना (Non directional hypothesis) को द्वि – पार्श्व परिकल्पना (Two-tailed hypothesis) तथा दिशात्मक परिकल्पना(Directional hypothesis) एक पार्श्व परिकल्पना(One tailed hypothesis) भी कहा जाता है |

(d)नल परिकल्पना(Null hypothesis)-नल परिकल्पना शोध परिकल्पना के ठीक विपरीत होती है | जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है ,यह एक तरह से उल्लेखित चरों के बीच प्रभाव नहीं की परिकल्पना होती है | दूसरे शब्दों में ,नल परिकल्पना वह परिकल्पना है जिसके द्वारा हम चरों के बीच कोई अन्तर नहीं होने का उल्लेख करते हैं | शोधकर्त्ता जब कोई शोध परिकल्पना बनाता है तो साथ ही साथ ठीक उसके विपरीत ढंग से नल परिकल्पना भी बना लेता है और उसकी तमन्ना यही रहती है कि शोध के परिणाम द्वारा नल परिकल्पना अस्वीकृत हो जाय ताकि वह विश्वाश के साथ शोध परिकल्पना कोस्वीकृत करके उस दिशा में एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँच सके |जैसे , उपयुक्त शोध परिकल्पना के लिए नल परिकल्पना इस प्रकार होगी, "व्यक्ति सूझ द्वारा प्रयत्न तथा भूल की अपेक्षा जल्दी नहीं सीखता है" | यदि शोध के परिणाम द्वारा यह अस्वीकृत हो जाता है तो स्वतः उसका विपरीत (यानी , शोध परिकल्पना) कोयथार्थ मान लिया जाता है |यही कारण है कि नल परिकल्पना को एक काल्पनिक मॉडल मान लिया गया है क्योंकि उसका अस्तित्व वास्तविक रूप से तो होता नहीं है |

(e)सांख्यकीय परिकल्पना(Statistical hypothesis)-सांख्यकीय परिकल्पना से तात्पर्य वैसी परिकल्पना से है जिसमें सांख्यकीय जीवसंख्या के बारे में विशेष सम्बन्धकी उक्ति होती है तथा जिसे शोधकर्त्ता अपने प्राप्त आँकड़ों के आधार पर स्वीकृत या अस्वीकृत करना चाहता है|ब्लैक तथा चैम्पियन के शब्दों में , "सांख्यकीय परिकल्पना सांख्यकीयजीव संख्या के बारे में वैसा कथन होता है जिसे प्रेक्षित आंकड़ो से मिलाने वाली सूचनाओं के आधार पर समर्थन दिया जाता है या खंडन किया जाता है |" सांख्यकीय परिकल्पना का अर्थ समझाने के लिए यह आवश्यक है कि सांख्यकीय जीव संख्या का तात्पर्य समझा जाए | सांख्यकीय जीव संख्या एक ऐसी जीव संख्या है जो व्यक्तियों की या कुछ चीज़ों की भी हो सकती है | सांख्यकीय जीव संख्या कीविशेषता यह है कि इसमें व्यक्तियों या चीज़ों के बारे में किये गए प्रेक्षणों को कुछ संख्यात्मक मात्राओं में बदल दिया जाता है ,और तब उसके बारे में कोई निर्णय लिया जाता है | उदाहरण के लिए मान लिया जाये कि

शोधकर्ता समूह अ तथा समूह ब में उन अंतरो का अध्ययन करना चाह रहा है | इसके लिए वह शोध परिकल्पना इस प्रकार विकसित कर सकता है

समूह अ समूह ब से प्रौढ़ है | इस शोध परिकल्पना को सांख्यकीय परिकल्पना में बदलने के लिए पहले शोध कर्ता कोसमूह अ के सभी व्यक्तियों के उम्र का माध्य ज्ञात करना होगा, तथा उसी प्रकार समूह ब के सभी व्यक्तियों के उम्र का माध्य ज्ञात करना होगा | इसके बाद इन दोनों माध्यों की तुलना कर इस तथ्य पर पहुंचा जाएगा कि दोनों माध्यों में से कौन बड़ा है और किस समूह को प्रौढ़ मान लिया जाएगा | इस तरह से स्पष्ट है कि सांख्यकीय परिकल्पना शोध परिकल्पना का ही सांख्यकीय पदों में एक परिवर्तित रूप कोकहा जाता है | सांख्यकीय परिकल्पना में सिर्फ शोध परिकल्पना को ही नहीं बल्कि नल परिकल्पना कोभी सांख्यकीय पदों में परिवर्तित कर दिया जाता है | जब शोध परिकल्पना एवं नल परिकल्पना के रूप मने व्यक्त किया जाता है, तो विशेष संकेत का प्रयोग किया जाता है | शोध परिकल्पना के लिए H_1 तथा नल परिकल्पना H_0 का संकेत प्रयोग किया जाता है तथा माध्य के लिए X का प्रयोग किया जाता है | यदि शोध परिकल्पना यह है समूह अ समूह ब से प्रौढ़ है तो इसकी सांख्यकीय परिकल्पना के रूप में H_0 तथा H_1की अभिव्यक्ति निम्न प्रकार से किया जाता है |

अभ्यास प्रश्न

चरों की संख्या के आधार पर (On the basis of number of variables) परिकल्पना के विभिन्न प्रकारों को परिभाषित करें ?

चरों में विशेष सम्बन्ध के आधार (On the basis of specific relationship of variables) परिकल्पना के विभिन्न प्रकारों को परिभाषित करें ?

विशिष्ट उद्देश्य के आधार पर (On the basis of specific purpose) परिकल्पना के विभिन्न प्रकारों को परिभाषित करें |

सांख्यकीय परिकल्पना(Statistical hypothesis) से आप क्या समझते हैं ?

नल परिकल्पना(Null hypothesis) से आप क्या समझते हैं ?

8.6 सारांश (Summary)

परिकल्पना शोध का एक आवश्यक अंग है , इसके अभाव में शोध कार्य एक उद्देश्यहीन क्रिया है | भाषा के दृष्टिकोण से Hypothesis शब्द , दो शब्दों hypo (कम) व thesis (शोध लेख) से बना है जिसका अर्थ है – शोध लेख से कम निश्चित | यह उपलब्ध साक्ष्य पर आधारित एक प्रस्ताव या उचित अनुमान है जिसे अनुसंधायक अपने अध्ययन द्वारा सिद्ध करना चाहता है | शब्द 'परिकल्पना ,' 'सिद्धांत 'व 'निष्कर्ष 'प्रायः ही शोध साहित्य में प्रयोग होते हैं | मैकग्युगन (1990) के अनुसार, " दो या दो से अधिक चरों के बीच संभावित सम्बंधों के बारे में बनाएँ गए जांचने योग्य कथन को परिकल्पना कहते हैं" A testable statement of a potential relationship between two or more variables is called hypothesis. शोध समस्या दो या दो से अधिक चरों के बीच एक प्रश्नात्मक वाक्य या कथन (interrogative sentence or statement) होता है | परिकल्पना (hypothesis) दो या दो से अधिक चरों के बीच व्यक्त प्रश्नात्मक कथन का एक अस्थायी समाधान (tentative solution) होता है |

मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा के क्षेत्र में शोधकर्त्ताओं द्वारा बनाये गए परिकल्पनाओं के स्वरुप पर यदि ध्यान दिया जाए तो यह स्पष्ट हो जायेगी कि उसे कई प्रकारों में बाँटा जा सकता है | शोध विशेषज्ञों ने परिकल्पना का वर्गीकरण निम्नांकित तीन आधारों पर किया हैं-

1. चरों के संख्या के आधार पर (On the basis of number of variables)
2. चरों में विशेष सम्बन्ध के आधार (On the basis of specific relationship of variables)
3. विशिष्ट उद्देश्य के आधार पर (On the basis of specific purpose)

8.7 शब्दावली (Glossary)

- **शोध समस्या** : शोध समस्या दो या दो से अधिक चरों के बीच एकप्रश्नात्मक वाक्य या कथन (interrogative sentence or statement) होता है |
- **परिकल्पना :** दो या दो से अधिक चरों के बीच संभावित संबंधों के बारे में बनाए गए जांचे जाने योग्य कथन को परिकल्पना कहते हैं |
- **साधारण परिकल्पना (Simple hypothesis)-**साधारण परिकल्पना वैसी परिकल्पना को कहा जाता है जिसमें चरों की संख्या मात्र दो होती है और सिर्फ इन्हीं दो चरों के सम्बन्ध द्वारा शोध समस्या का एक प्रस्तावित उत्तर दिया जाता है |
- **जटिल परिकल्पना(Complex hypothesis)-**जटिल परिकल्पना वैसी परिकल्पना को कहा जाता है जिसमें चरों की संख्या दो से अधिक होती है और उनमें एक खास सम्बन्ध बतलाकर शोध समस्या का प्रस्तावित उत्तर तैयार किया जाता है |
- **सार्वत्रिक परिकल्पना(Universal hypothesis)-**जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है ,इस तरह के परिकल्पना का स्वरूप ही कुछ ऐसा होता है जो निहित चरों के सभी तरह के मानों के बीच सम्बन्ध कोहर परिस्थिति में हर समय बनाये रखता है |
- **अस्तित्वात्मक परिकल्पना(Existential hypothesis)-** वैसी परिकल्पना को कहा जाता है जो सभी व्यक्तियों या परिस्थितियों के लिए नहीं तो कम-से-कम एक व्यक्ति या परिस्थिति के लिए निश्चित रूप से सही होती है |
- **कारणत्वपरिकल्पना(Causal hypothesis)-** कारणत्व परिकल्पना एक ऐसी परिकल्पना होती है, जिसके माध्यम से व्यवहार का विशिष्ट कारण या व्यवहार पर पडने वाले विशिष्ट प्रभाव की व्याख्या होती है |
- **शोध परिकल्पना या कार्यरूप परिकल्पना (Research hypothesis or Working hypothesis)-** शोध परिकल्पना (research hypothesis) से तात्पर्य वैसी परिकल्पना से होता है जो किसी घटना या तथ्य के लिए बनाये गए विशिष्ट सिद्धांत (specific theory) से निकाली गई अनुमिति (deductions) पर आधारित होती है |
- **नल परिकल्पना(Null hypothesis)-**नल परिकल्पना शोध परिकल्पना के ठीक विपरीत होती है | जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है ,यह एक तरह से उल्लेखित चरों के बीच प्रभाव नहीं की परिकल्पना होती है | दूसरे शब्दों में ,नल परिकल्पना वह परिकल्पना है जिसके द्वारा हम चरों के बीच कोई अन्तर नहीं होने का उल्लेख करते हैं |
- **सांख्यकीय परिकल्पना** : सांख्यकीय परिकल्पना सांख्यकीय जीव संख्या के बारे में वैसा कथन होता है जिसमें प्रेक्षित आंकड़ो से मिलाने वाली सूचनाओं के आधार पर समर्थन दिया जाता है या खंडन किया जाता है |

8.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. परिकल्पनाओं को परिभाषित करें एवं इसकी विशेषताओं का उल्लेख करें |
2. शोध समस्या और शोध परिकल्पना में क्या अंतर है स्पष्ट करें |
3. परिकल्पना से आप क्या समझते हैं ? परिकल्पना निर्माण के उद्देश्य बताएं |
4. परिकल्पना के विभिन्न प्रकारों का उदाहरण के साथ विवेचन करें |
5. टिप्पणी लिखें
    1. सांख्यकीय परिकल्पना
    2. शून्य परिकल्पना
    3. शोध परिकल्पना

8.9 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची(Suggested Readings)

- Best, John W. , Kahn J James (2002)Research In Education, Allyn & Bacon; 9th Edition.
- Kerlinger, F.N. (1986) Foundation of Behavioral Research Holt, Rinehart and Winston, Inc., American Problem Series, New York, NY
- कपिल ,डा० एच० के ० (2010): अनुसंधान विधिया – व्यवहारिक विग्रानो में , हर प्रसाद भार्गव , पुस्तक प्रकाशक ,4/230, कचहरी घाट , आगरा |
- त्रिपाठी , जगपाल (2007): मनोविज्ञान एव शिक्षा में शोध पद्धतिया , एच० पी० भार्गव बुक हाउस , 4/230 , कचहरी घाट आगरा |
- त्रिपाठी , प्रो० लाल बचन एव अन्य (2008): मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतिया, एच ० पी० भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा|
- सिह, अरुण कुमार (2009): मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधिया , मोतीलाल बनारसी दास , पटना एवं वाराणसी|
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) शिक्षा मनोविज्ञान, पटना, भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, वाराणसी, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) उच्चतर मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

- Goode, W.J.&Hatt, P.K.(1981): Methods in Scoial Research
- Festinger and Katz: Research method in Behavioural Sciences .
- Mc Guin, F.J.(1990): Experimental Psychology .
- Wiersma, W.,& Jurs, S.G.(2009) Research Methods in Education: An Introduction. New Delhi: Pearson Publication

इकाई - 9

परिकल्पनाओं के स्रोत एवं अच्छी परिकल्पनाओं की विशेषताएँ

Sources of Hypothesis and characteristics of good Research Hypothesis

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 परिकल्पना के स्रोत

9.4 अच्छी परिकल्पना की विशेषताएं

9.5 परिकल्पनाओं के कार्य

9.6 सारांश

9.7 शब्दावली

9.8 निबंधात्मक प्रश्न

9.9 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची

9.1 प्रस्तावना (Introduction)

एक बार समस्या का चयन व परिभाषा तय हो जाने के बाद शोध में सबसे महत्वपूर्ण कार्य परिकल्पनाओं की व्युत्पत्ति का है | पिछली इकाई में आपने परिकल्पना का अर्थ परिभाषा एवं उनके विभिन्न प्रकारों के बारे में पढ़ा| शोध समस्या एवं शोध परिकल्पना के बीच के अंतर को भी आप अच्छी तरह समझ चुके हैं तथा इसके साथ ही साथ आप विभिन्न प्रकार के परिकल्पनाओं का निर्माण भी सीख चुके हैं | इस इकाई में आप परिकल्पना के विभिन्न स्रोतों का अध्ययन करेंगें साथ ही साथ आप यह भी जान पायेगें कि एक अच्छी शोध परिकल्पना में कौन – कौन से गुण होने चाहिए | प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप को यह लाभ होगा कि आप किसी शोध समस्या के समाधान हेतु एक उत्तम परिकल्पना का निर्माण करने की दिशा में परिकल्पना के विभिन्न स्रोतों की जांच- पड़ताल करने के योग्य हो जायेगें |

9.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- परिकल्पना के स्रोत के बारे में जान एवं समझ सकेंगे।

- अच्छी परिकल्पना की विशेषताओं को जान एवं समझ सकेंगे ।
- परिकल्पना के मूल तत्वों को समझ सकेंगे |
- परिकल्पना के कार्य को समझ सकेंगें |
- परिकल्पना के विभिन्न स्रोतों को वर्गीकृत कर सकेंगे |

9.3 परिकल्पना के स्रोत (Sources of Hypothesis)

विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई विभिन्न परिभाषाओं एवं उसके विश्लेषण से यह तो स्पष्ट है कि परिकल्पना दो या दो से अधिक चरों के बीच ,सम्भावित सम्बन्धों के बारे में बनाया गया जाँचनीय कथन है | इसका निर्माण प्रयोगात्मक या अप्रयोगात्मक किसी भी प्रकार के शोध में समस्या के प्रस्तावित उत्तर के रूप में किया जाता है | यह साधारण ,जटिल ,सार्वत्रिक, अस्तित्वात्मक ,वैकल्पित ,निराकरणीय या सांख्यिकीय रूप की हो सकती है | रूप इसका जो भी हो, परन्तु परिकल्पना का उद्देश्य सिद्धांत की जाँच करना, नये सिद्धांतों का प्रतिपादन करना ,चरों के सांख्यिकीय विश्लेषण को बढ़ावा देना ,शोध को सही दिशा देना ,किसी घटना का वर्णन करना आदि होता है | अब सवाल यह उठता है कि किसी समस्या समाधान हेतु जो परिकल्पना निर्मित की जाती है उसका स्रोत क्या है ?यानी परिकल्पना निर्माण में सहायक तत्व या एजेंन्सी कौन-कौन सी हैं ,जो एक शोधकर्त्ता को विभिन्न प्रकार की परिकल्पनाओं का निर्माण करने हेतु सूझ या अन्तदृष्टि प्रदान करते है इस सम्बन्ध में विद्वानों ,शोधकर्त्ताओं ,विशेषज्ञों आदि ने निम्नलिखित महत्वपूर्ण स्रोतों की चर्चा की है जो किसी परिकल्पना के निर्माण में सहायक होते हैं –

1. समाज का सांस्कृतिक मूल्य
2. पूर्व में किए गए शोध
3. शोध-पुस्तकें, पत्रिकाएँ,जर्नल शोधसार आदि
4. व्यक्तिगत अनुभव
5. विशेषज्ञों से वार्तालाप एवं विवेचन
6. सूझ या अचानक मिली प्रेरणा
7. अध्ययन में अनुरूपता

1. समाज का सांस्कृतिक मूल्य- हर समाज का अपना-अपना सांस्कृतिक मूल्य होता है| उदाहरण के लिए अमरीकी संस्कृति में जहाँ व्यक्तिकता गतिशीलता, प्रतिस्पर्धा एवं समानता पर बल दिया जाता है | अतः यदि कोई शोधकर्त्ता अमरीकी संस्कृति का अध्ययन करना चाहता है तो उसे वहा के मूल्यों के सापेक्ष परिकल्पना का निर्माण करना होगा और यदि भारतीय संस्कृति का अध्ययन करना चाहता है तो यहाँ के सांस्कृतिक मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में परिकल्पना का निर्माण करना होगा | भारतीय संस्कृति के अध्ययन से सम्बन्धी परिकल्पना हो सकती है कि "भारत में मतदान व्यवहार का सम्बन्ध मतदाताओं की जाति से है |

2. **पूर्व में किए गए शोध-** परिकल्पना के निर्माण में पूर्व में किए गए शोधों से प्रेरणा मिलती है | पूर्व के शोधों के परिणामों के गहन अध्ययन से कभी-कभी उनमे परिकल्पना सम्बन्धी,विश्लेषण सम्बन्धी,अनुमान सम्बन्धी तथा सामान्यीकरण से सम्बन्धी कुछ ऐसी कमियां मिलती हैं कि उनके आधार पर नवीन परिकल्पना की रचना कर उनकी जाँच की जा सकती है | उदाहरण के लिए ,यदि एक शोधकर्ता छात्र –उपद्रव का अध्ययन कर रहा है और पूर्व के शोधों में एक रिक्तता मिलती है ,तो वह यह परिकल्पना बना सकता है कि "महाविद्यालय या विश्वविद्यालय में दो या तीन वर्ष से अधिक अवधि से अध्ययनरत छात्र प्रथम वर्ष के छात्रों की तुलना में छात्र समस्या के प्रति ज्यादा अभिरुचि प्रदर्शित करते हैं |" इसके अतिरिक्त ,वह इस प्रकार की परिकल्पना भी निर्मित कर सकता है कि "ऊँची योग्यता एवं ऊँची सामाजिक प्रतिष्ठा वाले छात्रों की तुलना में कम ऊँची योग्यता एवं ऊँची सामाजिक प्रतिष्ठा वाले छात्र उपद्रव या विरोध में कम सहभागिता करते हैं |"

3. **शोध-पुस्तकें, पत्रिकाएँ,जर्नल शोध-सार आदि -** आजकल ज्ञान के हर क्षेत्र में शोध से सम्बंधित साहित्य बिखरे पड़े हैं | शोध जर्नल हैं ,शोध के विषय से संबद्ध पीरिऑडिकल्स हैं,एवं इंटरनेट पर भी पर्याप्त साहित्य उपलब्ध है | समस्या से सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन से शोधकर्ता को नवीन संबंधों एवं तथ्यों की व्यापक जानकारी उपलब्ध होती है और इससे परिकल्पना बनाने में सुविधा होती है | मनोविज्ञान में अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ द्वारा "अमेरिकन साइकोलाजिकल आबस्ट्रैक्ट" का प्रकाशन होता है | भारत में Indian Psychological Abstract प्रकाशित होता है | विभिन्न देशों में अलग- अलग Psychological Abstract प्रकाशित होता है |

4. **व्यक्तिगत अनुभव :** शोधकर्ता प्रायः सामान्य घटनाओं को एक नवीन तरीके से देखता है | उसके निरीक्षण में प्रायः एक नवीन रचनात्मक शक्ति , तर्क शक्ति रहती है | न्यूटन द्वारा फल को गिरते देखकर उत्पन्न सूझ , डार्विन का जीवों के बीच पाए जाने वाले संबंधों की सूझ आदि शोध कर्ता के व्यक्तिगत अनुभव से संबद्ध थे | इसी अनुभव ने नवीन परिकल्पनाओं को जन्म दिया |

5. **विशेषज्ञों से वार्तालाप एवं विवेचन :** कभी –कभी शोधकर्ताओं को परिकल्पनाओं के निर्माण में विषय विशेषज्ञों से भी सहायता लेनी पड़ती है | किसी भी विषय के जो अधिकृत व्यक्ति होते हैं उनसे वार्तालाप करके तथा समस्या पर विवेचन कर के शोधकर्ता परिकल्पना का निर्माण कर सकता है | विषय विशेषज्ञ से मार्गदर्शन प्राप्त कर लेने पर समस्या समाधान की दिशा में अग्रसर होने एवं एक उपयुक्त परिकल्पना के निर्माण में शोधकर्ता को सुविधा मिलती है |

6. **सूझ या अचानक मिली प्रेरणा :** यदि शोधकर्ता किसी शोध समस्या को हल करना कहता है और अपने चिंतन मनन के द्वारा समाधान में लगा हुआ है तो कभी –कभी उसे अचानक प्रेरणा मिलती है और वह समस्या समाधान का प्रस्तावित उत्तर तलाश कर शोध को दिशा प्रदान करता है | ऐसा प्रायः अन्वेषी प्रयोग में देखने को मिलता है | न्यूटन के प्रयोग , आर्किमिडीज़ के प्रयोग अचानक मिली प्रेरणा या सूझ पर आधारित थे |

7. **अध्ययन में अनुरूपता :** कभी – कभी तुलनात्मक अनुभव से भी परिकल्पना के निर्माण में सहायता मिलती है | जैसे – पशु पक्षी के व्यवहार के अध्ययन से मानव व्यवहार की व्याख्या के लिए नए आधारों की खोज करना एक प्रकार से नवीन परिकल्पनाओं की ही खोज करना है | चिकित्सा विज्ञान , मनोविज्ञान आदि में आज भी बड़े पैमाने पर जानवरों , पक्षियों पर शोध कर के उसे मानव प्राणी पर लागू करने में इसी अनुरूपता के आधार पर परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है |

अभ्यास प्रश्न

परिकल्पना के प्रमुख स्रोत कौन-कौन से हैं ?

सूझ या अचानक मिली प्रेरणा से परिकल्पना का निर्माण किस प्रकार होता है ?

शोध-पुस्तकें, पत्रिकाएँ,जर्नल शोध-सार आदि परिकल्पना निर्माण में किस प्रकार सहायक होते हैं ?

9.4 अच्छी परिकल्पना की विशेषताएं (Characteristics of good hypothesis)

जब कोई शोधकर्त्ता किसी शोध समस्या (research problem) का प्रतिपादन कर उसका समाधान करने के लिए आगे बढ़ता है, तो उसके मन में समाधान के रूप में कई तरह के अस्थायी प्रस्ताव (tentative proposition) आते हैं | दूसरे शब्दों में ,शोधकर्त्ता के मन में कई तरह के परिकल्पनायें (hypotheses) बनती है | प्रश्न यह उठता है कि इन परिकल्पनाओं में से कौन अच्छा है और कौन अच्छा नहीं है ,इसका निर्णय शोधकर्त्ता कैसे करेगा ? मनोवैज्ञानिकों (Psychologists) ने इस तथ्य को महत्वपूर्ण समझकर उस पर एक जुट होकर प्रकाश डाला है और बतलाया है कि अच्छे शोध

परिकल्पना (a good research hypothesis) की पहचान उसकी कुछ कसौटियों (criteria) या विशेषताओं के आधार पर की जा सकती है जो निम्नांकित हैं –

(a) परिकल्पना को जाँचनीय होना चाहिए (Hypothesis should testable)-एक अच्छी शोध परिकल्पना की पहचान यह है कि उसका प्रतिपादन (formulation) इस ढंग से किया जाना सम्भव हो कि उसकी जाँच करने के बाद यह निश्चित रूप से कहा जा सके कि वह सम्भवतः सही है या सम्भवतः गलत है | इसके लिए यह आवश्यक है कि परिकल्पना की अभिव्यक्ति विस्तृत ढंग से (broad way)नहीं बल्कि विशिष्ट ढंग (specific way) से किया जाना चाहिए | विस्तृत परिकल्पना प्रभावशाली (impressive) तथा आकर्षक (attractive) भले ही लगे ,परन्तु उसकी जाँच (test) चूँकि ठीक ढंग से नहीं की जा सकती है,अतः वह एक अच्छी परिकल्पना (good hypothesis) नहीं हो सकती है | जाँचनीय परिकल्पना (testable hypothesis)से तात्पर्य वैसी परिकल्पना से होता है जिसे यह विश्वास के साथ के साथ कहा जाये कि वह सही है या गलत है | मैकग्यूगल(McGuigan,1990) ने इस पर टिप्पणी करते हुए कहा है, "एक परिकल्पना जिसे एक प्रस्ताव (proposition) के रूप में व्यक्त किया जाता है,को यदि यह निर्धारित करना सम्भव है कि वह सही या गलत है , तो वह परिकल्पना जाँचनीय (testable) मानी जाती है | अगर यह निर्धारित करना सम्भव नहीं है कि प्रस्ताव सही है या गलत है ,तो परिकल्पना को जाँचनीय नहीं माना जाता है और उसे विज्ञान के लिए गुणरहित समझकर छाँट दिया जाता है |"

(b) अध्ययन किए जाने वाले क्षेत्र की अन्य परिकल्पनाओं(hypotheses)का बनाई गयी परिकल्पना के साथ तालमेल (harmony)होना चाहिए (Formulated hypothesis should be in general harmony with other hypothesis of the field)-यदि शोधकर्त्ता द्वारा तैयार की गई परिकल्पना (hypothesis) क्षेत्र की अन्य परिकल्पनाओं के अनुकूल हो ,तो इसे एक अच्छी परिकल्पना समझा जाता है | हालाँकि इस ढंग की अनुकूलता कोई आवश्यक नहीं है ,परन्तु यदि परिकल्पना क्षेत्र के अन्य ज्ञानों (knowledge) एवं परिकल्पनाओं के विरोधी (contradictory) न होकर उसके अनुकूल होती है,तो उसे एक अच्छी परिकल्पना निश्चित रूप से माना जाता है | उदाहरण के लिए ,यदि कोई शोधकर्त्ता यह परिकल्पना तैयार करता है कि धनात्मक पुनर्बलन (positive reinforcement) से सिखाने की प्रक्रिया में बाधा पहुँचती है तो यह एक ऐसी परिकल्पना का उदाहरण होगा जो अपने क्षेत्र में अन्य परिकल्पनाओं तथा ज्ञान भण्डार के विरोधी (contradictory) होगा और इसे एक उत्तम परिकल्पना की श्रेणी में नहीं रखा जायेगा |

(c) परिकल्पना को मितव्ययी होना चाहिए (Hypothesis should be parsimonious)- एक अच्छी परिकल्पनाओं को मितव्ययी (Parsimonious) भी होना चाहिए | एक ही शोध समस्या (Research Problem) के समाधान के लिए परिकल्पनाएँ कई तैयार की जा सकती हैं| इनमे से जो सबसे मितव्ययी (Parsimonious) हो ,उसे अच्छा समझकर हमें चुनना चाहिए| परिकल्पना में मितव्ययिता से तात्पर्य इस बात से होता है कि उसका स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिसकी जाँच करने में कम-से–कम समय एवं धन की जरुरत हो तथा अधिक-से-अधिक सुविधा प्राप्त हो | कुछ परिकल्पनाएँ ऐसी होती हैं जिनकी जाँच करना मात्र इस लिए सम्भव नहीं हो पाता है कि उसमें अधिक समय ,श्रम,धन आदि की जरुरत होती है और साथ ही साथ

अनेकों तरह की कठिनाइयाँ सामने आ जाती है | इस तरह की परिकल्पना को श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है |

(d) **परिकल्पना में तार्किक पूर्णता तथा व्यापकता का गुण होना चाहिए (Hypothesis should have the trait of logical unity and comprehensiveness)-** परिकल्पना की यह विशेषता बहुत हद तक मितव्ययिता (Parsimony) की विशेषता से सम्बंधित है| मनोवैज्ञानिक शोध (Psychological Research) तथा शैक्षिक शोध (Educational research) में कुछ परिकल्पना तो ऐसी होती हैं जिनसे शोध समस्या (Research problem) का एक पर्याप्त उत्तर सीधे मिल जाता है क्योंकि वह अपने आप में तार्किक रूप से (logically)काफी व्यापक तथा पूर्ण होता है | परन्तु कुछ परिकल्पनाएँ ऐसी होतीं हैं जिनसे शोध समस्या का उत्तर तभी मिल जाता है जब अन्य कई उपपरिकल्पनाएँ (sub-hypothesis) तथा तदर्थ पूर्वकल्पनाएँ (adhoc assumptions) न तैयार कर लिए गए हो | ऐसा इसलिए होता है क्योंकि उनमें तार्किक पूर्णता एवं व्यापकता के आधार के आभाव होते हैं जिसके कारण वे स्वयं कुछ नयी समस्याओं को जन्म दे देते हैं और उनके लिए उपपरिकल्पनाएँ (sub-hypothesis) तथा तदर्थ पूर्वकल्पनाएँ (adhoc assumptions) तैयार कर लिए जाना आवश्यक हो जाता है | ऐसी परिस्थिति में हम ऐसी अपूर्ण परिकल्पना की जगह पर पहले तरह की परिकल्पना जिसमें तार्किक पूर्णता एवं व्यापकता होती है ,का ही चयन करते हैं |

(e) **परिकल्पना को क्षेत्र के मौजूदा सिद्धांत एवं तथ्यों से सम्बंधित होना चाहिए (Hypothesis should be related to the existing body of theory and facts)-** किसी परिकल्पना को एक उत्तम परिकल्पना कहलाने के लिए यह भी आवश्यक है कि उसे एक क्षेत्र के मौजूदा किसी सिद्धांत एवं तथ्य से सम्बंधित होना चाहिए | कभी –कभी ऐसा होता है कि शोधकर्त्ता एक ऐसी परिकल्पना विकसित कर लेता है जो उसे काफी दिलचस्प (interesting) दीख पड़ती है परन्तुं वह किसी सिद्धांत या तथ्य से सम्बंधित नहीं होती है |इस तरह की परिकल्पना एक रुचिकर परिकल्पना भले ही हो परन्तुं वैज्ञानिक रूप से एक उत्तम परिकल्पना नहीं हो सकता है | जैसे ,यदि कोई शोधकर्त्ता यह परिकल्पना तैयार करता है कि शरीर के रंग (गोरा ,काला ,साँवला आदि) में विभिन्नता होने से व्यक्ति की बुद्धि में परिवर्तन होता है तो शोधकर्त्ता के लिए यह एक रूचिकर परिकल्पना भले ही हो परन्तुं इसे वैज्ञानिक रूप से एक उत्तम परिकल्पना नहीं माना जा सकता है क्योंकि मनोवैज्ञानिक का कोई सिद्धांत या मॉडल ऐसा नहीं जिसमें ऐसी बात कही गयी हो |

(f) **परिकल्पना से अधिक-से-अधिक अनुमति (deduction)किया जाना सम्भव होना चाहिए तथा उसका स्वरूप सामान्य (general)होना चाहिए (Hypothesis should provide maxium deductions or consequences and it should be general in scope)-** एक अच्छी परिकल्पना की यह भी एक विशेषता है कि उसका स्वरुप बिल्कुल विशिष्ट (Specific) न होकर कुछ सामान्य (General) होना चाहिए हालांकि बहुत अधिक सामान्य (too broad) तथा बहुत अधिक विशिष्ट (too specific) दोनों ही तरह की परिकल्पनाएँ उत्तम नहीं मानी जाती है | यदि परिकल्पना बीचों-बीच की उत्तम मान जाता है क्योंकि इससे अधिकतम यथार्थ अनुमति (Relevant Deduction) प्राप्त हो जाती है जिससे एक ही और एक ही बारी में कई तथ्यों की व्याख्या सम्भव हो पाती है | इस तरह की

परिकल्पनाओं को बहुत अधिक सामान्य (too broad) तथा बहुत अधिक विशिष्ट (too specific) परिकल्पनाओं की तुलना में उत्तम मान जाता है | मैकग्यूगन (McGuigan,1990)ने इस पर टिप्पणी करते हुए कहा है ,"सामान्य रूप से वैसी परिकल्पनाएँ जिनसे बहुत से महत्वपूर्ण अनुमतियाँ (deductions)की जाती हैं ,अधिक गुणकारी परिकल्पना मानी जाती है |"

(g) परिकल्पना को प्राप्य वैज्ञानिक परीक्षणों से सम्बंधित होना चाहिए (Hypothesis should be related to available scientific test and apparatuses)- एक अच्छी शोध परिकल्पना को क्षेत्र में उपलब्ध वैज्ञानिक परीक्षणों से सम्बंधित होना आवश्यक है | दूसरे शब्दों में , परिकल्पना में प्रस्तावित चर (proposed variables) ऐसे हो जिनके मापने के लिए मनोवैज्ञानिकों के पास साधन उपलब्ध हो | यदि ऐसा नहीं होता है ,तो फिर उस परिकल्पना में प्रस्तावित चरों की माप नहीं की जा सकती है और तब परिकल्पना की सत्यता की भी जाँच सम्भव नहीं हो पायेगी | इस तरह की परिकल्पना को हमलोग अवैज्ञानिक घोषित कर देते हैं |

(h) परिकल्पना को सम्प्रत्यात्मक रूप से स्पष्ट होना चाहिए (Hypothesis should be conceptually clear)-शोध परिकल्पना(research hypothesis) को सम्प्रत्यात्मक रूप से(conceptually) स्पष्ट होने का मतलब यह है कि परिकल्पना में व्यवहृत सम्प्रत्यय (concepts) वस्तुनिष्ठ ढंग से (objectively) परिभाषित हो तथा परिभाषा ऐसी हो जिससे कुछ स्पष्ट अर्थ निकलता हो तथा वह अधिकतर लोगों को मान्य हो | परिभाषा तथा व्याख्या ऐसी नहीं हो जिसे शोधकर्त्ता की व्यक्तिगत दुनिया की उपज कहा जा सके तथा जिसका अर्थ वही समझता हो |

इस तरह से हम देखते हैं कि शोध मनोवैज्ञानिकों (research psychologists) ने शोध परिकल्पना (research hypothesis) की कुछ ऐसी कसौटियों (criteria)या विशेषताओं का वर्णन किया है जिनके आधार पर एक अच्छी शोध परिकल्पना की पहचान की जा सकती है |

अभ्यास प्रश्न

अच्छी परिकल्पना की किन्हीं पांच विशेषताओं को लिखिए |

परिकल्पना को क्षेत्र के मौजूदा सिद्धांत एवं तथ्यों से सम्बंधित होना चाहिए (Hypothesis should be related to the existing body of theory and facts) से आप क्या समझते हैं ? स्पष्ट करें |

"परिकल्पना को जाँचनीय होना चाहिए" कथन से आप क्या समझते हैं ?

9.5 परिकल्पनाओं के कार्य (Functions of Hypothesis)

मनोवैज्ञानिकों ने परिकल्पना के तीन महत्वपूर्ण कार्य बतलाये हैं जो निम्नलिखित हैं

1. सिद्धांतों की जांच करना (To test theories)
2. नए सिद्धांतों का प्रतिपादन करना (To suggest a new theory)
3. किसी घटना का वर्णन करना (To describe a phenomena)

1. **सिद्धांतों की जांच करना (To test theories):** शोध विशेषज्ञों का मत है कि परिकल्पना द्वारा भिन्न- भिन्न सिद्धांतों की जांच आसानी से होता है | मनोवैज्ञानिक तथा समाजशास्त्री अक्सर किसी घटना की व्याख्या की व्याख्या करने के लिए किसी सिद्धांत का विकास करते हैं और इसके बाद वे कुछ तरीकों द्वारा उसकी सत्यता की जांच करते हैं| इसके लिए सबसे सीधा तरीका परिकल्पना का निर्माण करके करना है | यदि परिकल्पना सही साबित हो गयी तब तो वह इस निहितार्थ पर पहुंचता है कि वह सिद्धांत जिससे परिकल्पना निर्गत की गयी है वह सही है | और यदि परिकल्पना यथार्थ साबित नहीं हुयी तो सिद्धांत का खंडन कर दिया जाता है |
2. **नए सिद्धांतों का प्रतिपादन करना (To suggest a new theory):** शोध में हम सिद्धांतों के आधार पर परिकल्पना बनाते हैं | परन्तु कभी –कभी प्रक्रिया इसके विपरीत हो जाती है जिससे हम विभिन्न परिकल्पना को एक साथ मिलाकर एक सिद्धांत को जन्म देते हैं | अतः परिकल्पना का एक कार्य यह भी है कि हम इसके आधार पर एक नए सिद्धांत का प्रतिपादन करते हैं |
3. **किसी घटना का वर्णन करना (To describe a phenomena):** परिकल्पना द्वारा वर्णनात्मक कार्य भी किये जाते हैं | जब किसी परिकल्पना की आनुभविक जांच की जाती है , तो यह निश्चित रूप से उन घटनाओं के बारे में एक निश्चित सूचना देती है जिससे वह सम्बंधित होती है | इस सूचना के आधार पर सम्बंधित घटना का संतोषजनक वर्णन करना आसान हो जाता है | आनुभविक जांच के बाद यदि परिकल्पना का खंडन हो जाता है तो इसके आधार पर शोधकर्ता को सम्बन्धित घटना के बारे में एक दूसरे ढंग से सूचना मिल जाती है जिससे कि वह कुछ सीखता है |

अभ्यास प्रश्न

परिकल्पना के प्रमुख कार्य कौन- कौन से हैं ?

परिकल्पना के तीन प्रमुख कार्यों के बारे में विस्तार से बतायें |

परिकल्पना किसी नए सिद्धांत का प्रतिपादन किस प्रकार से करता है ?

9.6 सारांश (Summary)

विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई विभिन्न परिभाषाओं एवं उसके विश्लेषण से यह तो स्पष्ट है कि परिकल्पना दो या दो से अधिक चरों के बीच ,सम्भावित सम्बन्धों के बारे में बनाया गया जाँचनीय कथन है | इसका निर्माण प्रयोगात्मक या अप्रयोगात्मक किसी भी प्रकार के शोध में समस्या के प्रस्तावित उत्तर के रूप में किया जाता है | यह साधारण, जटिल ,सार्वत्रिक, अस्तित्वात्मक,वैकल्पित, निराकरणीय या सांख्यिकीय रूप की हो सकती है | रूप इसका जो भी हो, परन्तु परिकल्पना का उद्देश्य सिद्धांत की जाँच करना ,नये सिद्धांतों का प्रतिपादन करना ,चरों के सांख्यिकीय विश्लेषण को बढ़ावा देना ,शोध को सही दिशा देना ,किसी घटना का वर्णन करना आदि होता है | विद्वानों ,शोधकर्त्ताओं ,विशेषज्ञों आदि ने निम्नलिखित महत्वपूर्ण स्त्रोतों की चर्चा की है जो किसी परिकल्पना के निर्माण में सहायक होते हैं –**1.** समाज का सांस्कृतिक मूल्य **2.** पूर्व में किए गए शोध **3.** शोध-पुस्तकें, पत्रिकाएँ, जर्नल, शोधसार आदि **4.** व्यक्तिगत अनुभव **5.** विशेषज्ञों वार्तालाप एवं विवेचन **6.** सूझ या अचानक मिली प्रेरणा **7.** अध्ययन में अनुरूपता जब कोई शोधकर्त्ता किसी शोध समस्या (Research problem) का प्रतिपादन कर उसका समाधान करने के लिए आगे बढ़ता हैं, तो उसके मन में समाधान के रूप में कई तरह के अस्थायी प्रस्ताव (Tentative proposition) आते हैं| दूसरे शब्दों में ,शोधकर्त्ता के मन में कई तरह की परिकल्पनायें (Hypotheses) बनती है | मनोवैज्ञानिकों (psychologists) ने इस तथ्य को महत्वपूर्ण समझकर उस पर एक जुट होकर प्रकाश डाला है और बतलाया है कि अच्छे शोध परिकल्पना (a good research hypothesis) की पहचान उसकी कुछ कसौटियों (criteria) या विशेषताओं के आधार पर की जा सकती है जो निम्नांकित हैं –

1. परिकल्पना को जाँचनीय होना चाहिए |

2. अध्ययन किए जाने वाले क्षेत्र की अन्य परिकल्पनाओं (hypotheses) का बनाई गयी परिकल्पना के साथ तालमेल (harmony) होना चाहिए परिकल्पना को मितव्ययी होना चाहिए
3. परिकल्पना में तार्किक पूर्णता तथा व्यापकता का गुण होना चाहिए |
4. परिकल्पना को क्षेत्र के मौजूदा सिद्धांत एवं तथ्यों से सम्बंधित होना चाहिए|
5. परिकल्पना को प्राप्य वैज्ञानिक परीक्षणों से सम्बंधित होना चाहिए |
6. परिकल्पना को सम्प्रत्यात्मक रूप से स्पष्ट होना चाहिए |

मनोवैज्ञानिकों ने परिकल्पना के तीन महत्वपूर्ण कार्य बतलाये हैं जो निम्नलिखित हैं

1. सिद्धांतों की जांच करना (To test theories)
2. नए सिद्धांतों का प्रतिपादन करना (To suggest a new theory)
3. किसी घटना का वर्णन करना (To describe a phenomena)

9.7 शब्दावली (Glossary)

- **शोध समस्या** : शोध समस्या दो या दो से अधिक चरों के बीच एकप्रश्नात्मक वाक्य या कथन (interrogative sentence or statement) होता है |
- **परिकल्पना :** दो या दो से अधिक चरों के बीच संभावित संबंधों के बारे में बनाए गए जांचे जाने योग्य कथन को परिकल्पना कहते हैं |
- **शोध परिकल्पना या कार्यरूप परिकल्पना (Research hypothesis or Working hypothesis)-** शोध परिकल्पना (research hypothesis) से तात्पर्य वैसी परिकल्पना से होता है जो किसी घटना या तथ्य के लिए बनाये गए विशिष्ट सिद्धांत (specific theory) से निकाली गई अनुमिति (deductions) पर आधारित होती है |
- **सांस्कृतिक मूल्य :** वह मूल्य जिसके कारण कोई समाज अपनी पहचान बनाता है, जिन विशेषताओं के आधार पर वह जाना जाता है , उसे सांस्कृतिक मूल्य कहते हैं |

9.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. परिकल्पना के प्रमुख स्रोत कौन-कौन से हैं ? विस्तार से समझाएं |
2. अच्छी परिकल्पना की विशेषताओं के बारे में विस्तार से बताएं |
3. परिकल्पना के प्रमुख कार्य कौन- कौन से हैं ? बताएं |

9.9 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची(Suggested Readings)

- Best, John W. , Kahn J James (2002)Research In Education, Allyn & Bacon; 9th Edition.

- Kerlinger, F.N. (1986) Foundation of Behavioral Research Holt, Rinehart and Winston, Inc., American Problem Series, New York, NY
- कपिल ,डा० एच० के ० (2010): अनुसंधान विधिया – व्यवहारिक विग्रानो में , हर प्रसाद भार्गव , पुस्तक प्रकाशक ,4/230, कचहरी घाट , आगरा |
- त्रिपाठी , जगपाल (2007): मनोविज्ञान एव शिक्षा में शोध पद्धतिया , एच० पी० भार्गव बुक हाउस , 4/230, कचहरी घाट आगरा |
- त्रिपाठी , प्रो० लाल बचन एव अन्य (2008): मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतिया, एच ० पी० भार्गव बुक हाउस, ४/२३०, कचहरी घाट, आगरा |
- सिह, अरुण कुमार (2009): मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधिया , मोतीलाल बनारसी दास , पटना एवं वाराणसी |
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) शिक्षा मनोविज्ञान, पटना, भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, वाराणसी, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) उच्चतर मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- Goode, W.J.&Hatt, P.K.(1981): Methods in Scoial Research.
- Festinger and Katz: Research method in Behavioural Sciences .
- Mc Guin, F.J.(1990): Experimental Psychology .
- Wiersma, W.,& Jurs, S.G.(2009) Research Methods in Education: An Introduction. New Delhi: Pearson Publication.

इकाई - 10

न्यादर्श का अर्थ, अच्छे न्यादर्श की विशेषताएँ, न्यादर्श का आकार, न्यादर्श की विश्वसनीयता

Meaning of sample, Characteristics of a good sample, sample size, reliability of sample

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 समष्टि/जनसंख्या की संकल्पना

10.4 न्यादर्श का अर्थ

10.4.1 न्यादर्श की परिभाषाएँ

10.4.2 जनसंख्या के मुख्य प्रकार

10.5 न्यादर्श संरचना

10.6 न्यादर्श प्रतिचयन की प्रक्रिया

10.7 न्यादर्श का आकार एवं विश्वसनीयता

10.8 उत्तम न्यादर्श की विशेषताएँ

10.9 सारांश

10.10 शब्दावली

10.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

10.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

10.1 प्रस्तावना

व्यवहार विज्ञानों के क्षेत्र में अनेक ऐसे महत्वपूर्ण अनुसंधान सम्पन्न होते हैं जो इकाइयों के एक छोटे समूह पर किए जाते हैं, परन्तु उस पर आधारित निष्कर्ष इकाइयों की वृहद समष्टि पर लागू माने जाते हैं। अनेक कारणों से वृहद समष्टि की सभी इकाइयों का अध्ययन करना संभव नहीं होता। अनेक कारणें से वृहद समष्टि की सभी छोटे समूह का ही अध्ययन करना पड़ता है। यदि समूची वृहद समष्टि का अध्ययन संभव हो भी तो ऐसा करना कोई बुद्धिमानी की बात नहीं है क्योंकि उसमें बहुत अधिक समय, धन एवं शक्ति का व्यय होता है और लाभ बहुत अधिक नहीं होता। थोड़ी सी त्रुटि के साथ वैसे ही परिणाम समष्टि के छोटे समूह को लेकर भी प्राप्त किये जा सकते हैं और समय, धन एवं शक्ति के अधिक व्यय का बचाया जा सकता है। इसे इस प्रकार समझिए कि एक बोरा चावल खरीदने के लिए यदि समूचे बोरे के प्रत्येक चावल की जांच परख करें तो कितना समय लगेगा और कितनी शारीरिक शक्ति का व्यय होगा। उससे बचने के लिए ही खरीददार बोरे में से केवल एक मुट्ठी चावल निकालकर उनकी जांच पड़ताल करता है तथा उन्हें उपयुक्त पाकर पूरा बोरा खरीदने का मन बना लेता है। एक मुट्ठी चावल की जांच पड़ताल के आधार पर ही वह यह निष्कर्ष निकाल लेता है कि बोरा अच्छा है और खरीदने का निर्णय कर लेता है। वास्तविक जीवन की अनेक परिस्थितियों में हम ऐसा ही करते हैं। एक प्रकार की बहुत सी वस्तुओं, सामग्री, इकाइयों में से केवल कुछ को लेकर उनकी जांच पड़ताल के आधार पर जो निष्कर्ष निकालते हैं उसे सभी के विषय में सही मान लेते हैं। इससे जांच पड़ताल का कार्य बहुत सरल हो जाता है। अनेक परिस्थितियों में अनुसंधान, समाजशास्त्र एवं शिक्षा के क्षेत्र में, इस प्रकार के अनुसंधान बहुत अधिक प्रचलित है। इनमें इकाइयों की किसी वृहद् समष्टि में से कुछ इकाइयों के समूह को लेकर उनका अध्ययन किया जाता है तथा उनके आधार पर जो निष्कर्ष निकलता है उसे सम्पूर्ण सूमष्टि की व्याख्या उसके आधार पर की जाती है। इसे छोटे समूह को ही समष्टि का न्यादर्श अथवा प्रतिदर्श कहते हैं।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

- समष्टि या जनसंख्या का अर्थ समझ सकेंगे।
- जनसंख्या के मुख्य प्रकारों के बारे में जान पायेंगे।
- न्यादर्श का अर्थ समझ पायेंगे।
- न्यादर्श संरचना को ज्ञान पायेंगे।
- न्यादर्श प्रतिचयन प्रक्रिया का अर्थ समझ सकेंगे।
- न्यादर्श का आकार एवं विश्वसनीयता को समझ सकेंगे।

- न्यादर्श की विशेषताओं को जान पायेंगे।

10.3 समष्टि की संकल्पना (Concept of Population)

समष्टि (Population) की संकल्पना एक सांख्यिकीय संकल्पना (Statistical concept) है जिसका अर्थ होता है बहुत सी इकाइयों का एक वृहद् समूह जिसमें कुछ इकाइयों को अध्ययन के लिए चुना जाता है। अनुसंधान के संदर्भ में समष्टि इकाइयों की एक निश्चित संख्या होती है। जिनके विषय में अध्ययनगत निष्कर्ष लागू होते हैं। इन इकाइयों की एक निश्चित रूप से सूची उपलब्ध होती है। समष्टि की परिभाषा भी विशिष्ट प्रकार से की जाती है। उसकी परिभाषा एवं व्याख्या उसकी कुछ स्पष्ट विशेषताओं के आधार पर की जाती है। अनुसंधान के संदर्भ में इस समष्टि को लक्ष्यगत समष्टि कहते हैं। लक्ष्यगत समष्टि को परिभाषा इस प्रकार की गई है - यह व्यक्तियों, घटनाओं, वस्तुओं अथवा अन्य प्रकार की इकाइयों का एक कल्पित अथवा वास्तविक समूह होती है। यह विस्तृत भौगोलिक भूभाग में दूर दूर तक फैली हुई भी हो सकती है अथवा एक छोटे समूह के रूप में सीमित भूभाग में भी समाई हो सकती है।

कभी कभी लक्ष्यगत समष्टि की सभी इकाइयां अनुसंधान हेतु उपलब्ध नहीं हो पाती तथा उनके विषय में शोध सामग्री एकत्र करना संभव नहीं हो पाता। उस स्थिति में उन इकाइयों को निकालकर जो समष्टि अनुसंधान हेतु उपलब्ध हो पाती है। उसे अभिगम्य अथवा प्राप्य समष्टि कहते हैं। इस प्रकार लक्ष्यगत समष्टि एवं अधिगम्य समष्टि के बीच अन्तर किया गया है। अभिगम्य समष्टि वह समष्टि होती है जिसकी सभी इकाइयों के विषय में शोध सामग्री एकत्र की जा सके। अनुसंधान में इन दोनों का अलग अलग उल्लेख करना चाहिए। परन्तु किसी शोध में लक्ष्यगत समष्टि की सभी इकाइयों के विषय में जानकारी प्राप्त करना संभव हो तो वही लक्ष्यगत समष्टि की सभी इकाइयों के विषय में जानकारी प्राप्त करना संभव हो तो बडी लक्ष्यगत एवं वही अभिगम्य समष्टि होगी। दोनों में अन्तर नहीं होगा।

एक दूसरे दृष्टिकोण से समष्टि के सम तथा विषय दो अन्य प्रकार भी होते हैं। जब सभी इकाइयों के बीच उनकी विशेषताओं के दृष्टिकोण से पर्याप्त समानता होती है तो उसे सम समष्टि समझा जाता है। परन्तु इकाइयों के समूह विभिन्न दृष्टिकोणों से पर्याप्त भिन्नता रखते हुए समष्टि में भिन्नता वाली इकाइयों के अलग अलग समूह बन जाते हैं। उन समूहों के बीच तो अन्तर होते हैं परन्तु प्रत्येक समूह के भीतर इकाइयों के बीच पर्याप्त समानता होती है अर्थात प्रत्येक सूह लगभग सम होता है।

स्मष्टि के सबसे छोटे भाग अथवा अंग को इकाई कहते हैं। अत: समष्टि इन इकाइयों अथवा व्यक्तियों का सामूहिक रूप होती है।

10.4 न्यादर्श का अर्थ (Meaning of Sample)

न्यादर्श की समस्त इकाइयों में से अध्ययन हेतु कुछ इकाइयों को एक निश्चित विधि द्वारा चुन लिया जाता है । उन संकलित इकाइयों के समूह को न्यादर्श कहते हैं । इस न्यादर्श के आधार पर ही अध्ययनगत निष्कर्ष घटित होते हैं तथा इन्हीं न्यादर्श आधारित निष्कर्षों के आधार पर समष्टि के विषय में उद्देश्यों के अनुरूप सामान्यीकरण किया जाता है । यों कहें कि न्यादर्श के झरोखे से समष्टि का अवलोकल एवं अध्ययनन किया जाता है । अवधारणा यह रहती है कि जो कुछ न्यादर्श के विषय में पाया गया है अथवा जो कुछ न्यादर्श के विषय में सही है वह समष्टि के विषय में भी वैसा ही होगा, उसके विषय में भी सही होगा । परन्तु यह बात सदैव ही सही नहीं होती । यह तभी कसौटी पर खरी उतरती है जब न्यादर्श का चयन वैज्ञानिक विधि से किया गया हो जो प्रतिनिधि न्यादर्श का अनिवार्य शर्त होती है । यदि इस विधि से न्यादर्श का चयन नहीं किया गया है तो वह समष्टि का प्रतिनिधित्व नहीं करेगा और उस स्थिति में जो अध्ययनरत निष्कर्ष निकलेगा वह समष्टि के विषय में सही नहीं होगा। उस स्थिति में चयनित न्यादर्श को अभिनत्यात्मक न्यादर्श कहा जाता है ।

अभिनत्यात्मक न्यादर्श की स्थिति में जो सांख्यिकीय न्यादर्शनमान प्राप्त होता है वह उस सांख्यिकीय मान से बहुत भिन्न होता है, जो सम्पूर्ण समष्टि के अध्ययन करने पर उपलब्ध होता। उदाहरणार्थ, यदि अध्ययन का उद्देश्य आठवीं कक्षा के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का सर्वेक्षण करना है और समष्टि की परिभाषा है मेरठ शहर के आठवीं कक्षा के विद्यार्थी । 25 विद्यालयों में से 10 विद्यालयों का न्यादर्श चुनकर अध्ययन करना है ।

अब यदि न्यादर्श इस प्रकार चुनते हैं कि जो अच्छे विद्यालय हैं उन्हें ले लिया जाता है तो इस प्रकार चयनित न्यादर्श अभिनत्यात्मक न्यादर्श की स्थिति में जो सांख्यिकीय न्यादर्शमान प्राप्त होता है वह उस सांख्यिकीय मान से बहुत भिन्न होता है, जो सम्पूर्ण समष्टि के अध्ययन करने पर शैक्षिक उपलब्धि का सर्वेक्षण करना है और समष्टि की परिभाषा है मेरठ शहर के आठवीं कक्षा के विद्यार्थी। 25 विद्यालयों में से 10 विद्यालयों का न्यादर्श चुनकर अध्ययन करना है । अब यदि न्यादर्श इस प्रकार चुनते हैं कि अच्छे विद्यालय हैं उन्हें ले लिया जाता है तो इस प्रकार चयनित न्यादर्श अभिनत्यात्मक न्यादर्श कहलायेगा । समष्टि के अन्दर अच्छे बुरे तथा सामान्य स्तर के सभी प्रकार के विद्यालय हैं । उन सभी का प्रतिनिधित्व होना चाहिए था । उपरोक्त न्यादर्श में सामान्य स्तर के तथा बुरे विद्यालयों का प्रतिनिधित्व होना चाहिए था । उपरोक्त न्यादर्श में सामान्य स्तर के तथा बुरे विद्यालयों का प्रतिनिधित्व नहीं हुआ। अत: वह अभिनति से ग्रसित हो गया । अभिनत्यात्मक न्यादर्श समष्टि के प्रतिनिधि नहीं होते ।

प्रतिनिधि न्यादर्श वह न्यादर्श होता है जिसमें समष्टि की सभी विशेषताओं, उसके सभी लक्षणों का सभी गुणो का न्यूनाधिक मात्रा में समावेश हो, जो समष्टि का प्रतिरूप अथवा उसकी प्रतिकृति हो । यदि न्यादर्श का चयन समसम्भविक विधि से किया जाता है तो उसमें अभिनति का कोई स्थान नहीं

रहता तथा वह समष्टि का प्रतिनिधित्व करने की क्षमता प्राप्त कर लेता है। समसंभाविक न्यादर्श की यह विशेषता होती है कि उसके आधार पर समष्टि के सांख्यिकीय मान का पूर्वानुमान अधिक सही सही किया जा सकता है। उसमें त्रुटि की संभावना कम होती है तथा जो त्रुटि होती है उसका भी अनुमान लगाया जा सकता है।

अत: व्यवहार विज्ञानों में क्षेत्र में अनुसंधान हेतु न्यादर्श का चयन करते समय प्राय: वह उद्देश्य रहता है कि न्यादर्श अभिनतिमुक्त, समसंभाविक एवं समष्टि प्रतिनिधि हो।

इस प्रकार के न्यादर्श का चयन करने हेतु एक न्यादर्श योजना तैयार करना आवश्यक होता है। इसका अर्थ है एक ऐसी योजना कि जिसके आधार पर समान आकार वाले बहुत से न्यादर्शों का चयन करके अध्ययन किए जाएं तो 90 प्रतिशत न्यादर्शों के परिणामों तथा उस परिणाम के बीच जो सम्पूर्ण समष्टि के अध्ययन से प्राप्त होता है 5 प्रतिशत से अधिक का अन्तर न हो। अर्थात 100 में से 90 न्यादर्श ऐसे हो जिनके परिणाम सम्पूर्ण समष्टि के परिणामें से 5 से अधिक ऊपर नीचे न हो।

यदि योजना पर्याप्त का प्रतिनिधित्व करेगा तो उसे प्रतिनिध न्यादर्श योजना कहते हैं। उसी स्थिति में उपरोक्त धारणा भी सही संभव होती है। इस प्रकार की योजना के अन्तर्गत यह निश्चित हो जाता है कि जो विभिनन प्रकार की इकाइयां न्यादर्श में चयनित हुई हैं वैसी ही समरूप इकाईयों समष्टि में भी समाविष्ट है तथा न्यादर्श में उनका समुचित प्रतिनिधित्व हुआ है।

10.4.1 न्यादर्श की परिभाषा

अनेक विद्धानों ने न्यादर्श की परिभाषा दी है, इसमें से कुछ प्रमुख परिभाषाओं का वर्णन निम्नलिखित है -

1 ''न्यादर्शन क्रिया, किसी पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार इकाइयों के ढेर या समूह मे से एक निश्चित प्रतिशत का चयन करता है - ई.एम. बोगाडर्स

"Sampling is the selection of certain percentage of a group of items according to predetermined plan"

2 एक सांख्यिकीय न्यादर्शन उस सम्पूर्ण समग्र अथवा योग का एक लघु चित्र है, जिससे न्यादर्श लिया गया है। - वी.पी. यंग

"A statistical sampling is a miniature picture or cross selection of the enrire group or aggereate form which the sample is taken – P.V. Young

3 ''जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि न्यादर्शन एक बड़े समग्र का छोटा प्रतिनिधि है।''

- गुड तथा हैट

."A Sampling as the name applied is a smaller representatyion of larger whole."

4 प्रत्येक विज्ञान की शाखा में हमारे साधन सीमित है। इसलिए सम्पूर्ण तथ्य के एक अंश से अधिक का अध्ययन नहीं कर पाते तथा उसके विषय में ज्ञान प्रस्तुत किया जाता है।

डब्ल्यू जी. कोकरन

In every branch of secience we take the resoureces to study more than a fragment of the phenomena that might our knowledge –

W.G. Kokran

कोकरन की इस परिभाषा के अंश को न्यादर्श माना है, सम्पूर्ण तथ्य को जनसंख्या की संज्ञा दी गयी है। सम्पूर्ण तथ्य के विषय में एक अंश के आधार पर ज्ञान दिया जाता है, जिसे न्यादर्शन की प्रक्रिया कहते हैं। न्यादर्शन की उपरोक्त परिभाषाओं में मुख्य धारणा सामने आती हैं, जिसका वर्णन निम्नलिखित है-

1 चर

2 इकाई

3 जनसंख्या

4 न्यादर्श

न्यादर्श (Sample) के सही रूप को समझने के लिए उपरोक्त धारणाओं को स्पष्ट रूप से समझना अति आवश्यक है। अत: उपरोक्त चारों की धारणाओं का विस्तृत विवरण निम्नलिखित है -

1 **चर -** प्राय: जिस रूप, गुण विशेषता अथवा अवस्था का अध्ययन करना हमारा मुख्य उद्देश्य है, उसे हम चर कहते हैं। ऊपर वर्णित रक्त के सैम्पल के उदाहरण में रक्त की गुणवत्ता की जांच सकारात्मक है अथवा नकारात्मक चर है। मानव व्यवहार के उदाहरण बुद्धिमानी अथवा मूर्खता चर है।

2 **इकाई -** चर की उस मात्रा को जो हमें किसी छोटे से छोटे घटक में ज्ञात है, उसे इकाई कहा जाता है। रक्त के उदाहरण में रक्त एक इकाई है, चावल के उदाहरण में चावल एक इकाई है।

3 **जनसंख्या -** अपने सामान्य अर्थ के अतिरिक्त, अनुसंधान में जनसंख्या का अर्थ पृथक होता है। यहां जनसंख्या का अर्थ इकाइयों के समूह से होता है अर्थात इकाइयों के पूर्ण समूह को जिसके लिए चर का मान निकालना अभीष्ट है, जनसंख्या कहते हैं। जैसे - चिकित्सक द्वारा एक परीक्षण में सम्पूर्ण शरीर का रक्त जनसंख्या है, चावल के उदाहरण में बर्तन का सम्पूर्ण चावल जनसंख्या है। यहां पर जनसंख्या का अर्थ अध्ययन की सम्पूर्ण

इकाइयों के समूह से लिया जाता है। प्राय: अध्ययन अथवा अनुसंधान की कोई भी इकाई हो सकती है जैसे मानव, पशु, कोई वस्तु अथवा कोई प्रयोग।

अनुसंधान अथवा न्यादर्श में जनसंख्या का अत्यधिक महत्व होता है। अत: जनसंख्या का स्पष्ट रूप से अर्थ समझना यहां आवश्यक होगा। जनसंख्या की परिभाषा पर ही उसकी अवयवी इकाइयों की परिभाषा निर्भर करती है।

उदाहरणार्थ - किसी बुद्धि परीक्षण के अध्ययन में ग्रामीण जनसंख्या के क्षेत्र के 12-14 वर्षीय वर्ग में आने वाले कक्षा 8 के 5 विद्यार्थी हो सकते हैं। हमें यहां पर यह भी स्पष्ट करना चाहिए कि ग्रामीण क्षेत्र से हमारा तात्पर्य है अर्थात कितनी जनसंख्या वाला क्षेत्र ग्रामीण कहा जायेगा। विद्यार्थी की आयु का क्या प्रमाण होगा ? बुद्धि परीक्षण का क्या पैमाना होगा। विद्यालयों का क्या स्तर होगा। इत्यादि हमारी परिभाषा यहां ऐसी होनी चाहिए कि हम कक्षा 8 के विद्यार्थियों अथवा किसी विद्यार्थी अथवा किसी मानव को स्पष्ट कर सकें कि हमारी जनसंख्या की इकाई है अथवा नहीं। इस प्रकार जनसंख्या की परिभाषा न्यादर्श में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

4 **न्यादर्श -** जैसा कि हम पूर्व में वर्णित कर चुके हैं कि न्यादर्श पूर्ण इकाई अथवा समूह से चुनी गयी इकाइयों का समूह है। परन्तु यह अधिक विस्तृत वर्णन है। इसे अधिक स्पष्ट रूप से समझाने के लिए संक्षिप्त रूप में कहा जा सकता है कि न्यादर्श समूचे इकाई अथवा समूह में से चुनी गयी कुछ ऐसी इकाइयों का समूह है जो कि सम्पूर्ण इकाइयों अथवा समूहों का पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व करती हो।

यहां चर, इकाई, न्यादर्श तथा जनसंख्या का आपस में घनिष्ठ संबंधहै। इनके परस्पर संबंध को समझना कठिन कार्य है क्योंकि इनका आकार तथा प्रवृत्ति अध्ययन में अनेक कठिनाइयां उत्पन्न करती है। अत: हम एक उदाहरण के माध्यम से इनके सरल रूप को समझने का प्रयास करेंगे।

उदाहरण - माना कि एक अनुसंधानकर्ता अपने अनुसंधान अथवा किसी अध्ययन के लिए x नगर का सर्वेक्षण करना चाहता है। इस नगर की जनसंख्या 1 लाख है, जिसमें 1000 छोटे छोटे क्षेत्र है। इन सभी क्षेत्रों में स्त्री पुरूष, शिशु तथ वृद्ध आदि सभी का पर्याप्त प्रतिनिधित्व है। अत: अनुसंधानकर्ता न्यादर्श के रूप में इनमे से 10 समान प्रतिनधित्व करने वाले व्यक्तियों के क्षेत्र का चयन करता है।

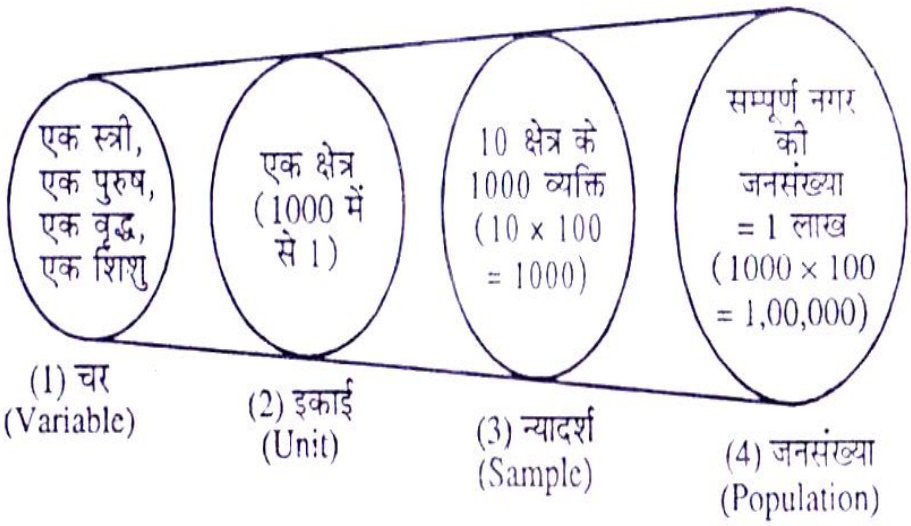

चित्र - चर, इकाई तथा न्यादर्श तथा जनसंख्या के मध्य संबंध

1 चर - एक स्त्री, एक पुरूष, एक वृद्ध, एक शिशु इत्यादि।

2 इकाई - 1 क्षेत्र (जिसमें सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व हो)

3 न्यादर्श - 10 क्षेत्र अथवा अनेक इकाइयां जिसमें सभी प्रकार के व्यक्तियों अथवा चरों का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्ति उपस्थित हों।

4 जनसंख्या - सूपर्ण नगर जहां कि सभी क्षेत्र (इकाइयों तथा सभी वर्ग के स्त्री पुरूष चर) की उपस्थिति है।

वह इस प्रकार वह एक लाख की जनसंख्या पर एक सौ (100) की जनसंख्या वाले दस क्षेत्रों का चयन करता है तथा इससे वह एक हजार (10x100) व्यक्ति का न्यादर्श के रूप में चयन करता हैं तथा उन पर अपना अध्ययन करता है। इस उदाहरण को हम उपरोक्त रेखाचित्र के माध्यम से उचित रूप से समझ सकते हैं।

10.4.2 जनसंख्या के मुख्य प्रकार

जैसा कि हमने उपरोक्त रेखाचित्र के माध्यम से समझा कि जनसंख्या न्यादर्शन में सबसे बड़ा घटक है। जनसंख्या का यह रूप इसके विभिन्न रूप तथा प्रकारों के कारण से है क्योंकि जनसंख्या में अनेक रूप, आकार तथा प्रकार के तत्वों का समावेश होता है, जिसके कारण जनसंख्या का आकार विस्तृत रूप धारण करता है। जनसंख्या के प्रमुख प्रकारों का वर्णन निम्नलिखित है -

1- समजातीय जनसंख्या

2- विषमजातीय जनसंख्या

3- सीमित जनसंख्या

4- असीमित जनसंख्या

5- वास्तविक जनसंख्या

6- काल्पनिक जनसंख्या

1- **समजातीय जनसंख्या -** अध्ययन के लिए चयनित किये गये गुण का मान प्रत्येक इकाई में एक ही होता है, समजातीय जनसंख्या कहलाती है। न्यादर्श में इस प्रकार की समजातीय जनसंख्या के लिए मात्र एक ही इकाई होना पर्याप्त है। रक्त तथा चावल के दाने पर इसका उदाहरण है। यहां न्यादर्श की आवश्यकता नहीं होती है।

2- **विषमजातीय जनसंख्या -** चर का मान जब विभिन्न इकाइयों में परिवर्तित होता है तो उसे विषमजातीय जनसंख्या कहा जाता है। जैसे 10 विद्यार्थियों में प्रत्येक की बुद्धि का स्तर निश्चय ही भिन्न भिन्न होता है। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में इस विषयजातीय जनसंख्या का ही अधिक प्रयोग किया जाता है।

3- **सीमित जनसंख्या -** किसी परिभाषित जनसंख्या की इकाइयों की गणना जब करना सरल होता है उसे सीमित जनसंख्या कहते हैं। जैसे - किसी कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या, पुस्तकालय में रखी पुस्तकों की संख्या इत्यादि। सीमित जनसंख्या को एक और रूप में परिभषित किया जाता है जैसे -भिन्न जनसंख्या न्यादर्श/ जनसंख्या अथवा ज-न/ज का मान सीमित में 1 से काफी कम होता है तब उसे सीमित जनसंख्या कहते हैं।

4- **असीमित जनसंख्या -** जब इकाइयों की गणना संभव न हो तो ऐसी स्थिति में असीमित जनसंख्या कहा जाता है।

असीमित जनसंख्या को भी समिज जनसंख्या के समान ही अन्य रूप में परिभाषित कर सकते हैं। सांख्यिकीय अर्थ में जनसंख्या असीमित कहलाती है।

यदि ज.न. ( ) का मान 1 के समीप अथवा सन्निकट होता है।

5- **वास्तविक जनसंख्या -** जनसंख्या की सभी इकाइयां बाहरी जानेन्द्रियों के माध्यम से ज्ञात करने योग्य होती हैं तो हम जनसंख्या को वास्तविक जनसंख्या कहते हैं।

6- **काल्पनिक जनसंख्या -** जब जनसंख्या का कोई भौतिक आधार नहीं होता है अथवा उसका अस्तित्व नहीं होता है तो उसे काल्पनिक जनसंख्या कहा जाता है। अस्तित्व नहीं होने के कारण यहां कल्पना की जाती है।

उदाहरण '' किसी छात्र के किसी परीक्षण पर वास्तविक प्राप्तांक जब हम ज्ञात करना चाहते हैं तो इसके लिए हमें उस परीक्षण को बार बार कराके देखते हैं। इस प्रकार प्राप्तांक छात्र के वास्तविक प्राप्तांक नहीं होते हैं क्योंकि हो सकता है कि अनुचित माध्यम का प्रयोग कर लिया हो। परन्तु हम यदि उसी परीक्षण को उसे अधिक बार दे तो त्रुटिपूर्ण प्राप्तांक, जो उसे परिस्थितिवश प्राप्त हुए हैं, अपने परिवर्तित व्यवहार के कारण औसत लेने पर समाप्त हो

जायेंगे तथा छात्र को वास्तविक प्राप्तांक ज्ञात हो जायेंगे। यहां पर परीक्षण को बार देना परीक्षण की ही जनसंख्या है, परन्तु व्यवहार के अन्तर्गत कोई परीक्षण बार बार नहीं दिया जाता है। इस कारण यह जनसंख्या काल्पनिक ही कहलाती है।

10.5 न्यादर्श संरचना (Construction of Samples)

न्यादर्श योजना तैयारी करने हेतु एक न्यादर्श संरचना अथवा न्यादर्श संदर्भ तैयार करना पड़ता है। इसका अर्थ होता है । न्यादर्श चयन हेतु एक ऐसी व्यवस्था करना कि उसके माध्यम से अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान हेतु अधिकतम वांछनीय इकाइयों की संख्या उपलब्ध हो जाए। इसके लिए ऐसी कल्पना की जाती हे कि समष्टि सीमित है तथा उसकी समस्त इकाइयों की एक सूची तैयार की जा सकती है । यह सूची ही न्यादर्श संदर्भ अथवा न्यादर्श संरचना कहलाती है । यह सूची उपलब्ध होने पर न्यादर्श का चयन सरल एवं संभव हो जाता है।

10.6 न्यादर्श प्रतिचयन की प्रक्रिया (Sampling Process)

न्यादर्श का प्रतिचयन करते समय अनुसंधानकर्ता को यह ध्यान में रखना पड़ता है कि कितने समय मे उसे शोध का सम्पूर्ण कार्य पूरा करना है, कितना धन वह उसमें व्यय कर सकता है, कितने प्रशिक्षित व्यक्ति इस कार्य में उसकी मदद कर सकते हैं आदि इन्हीं सब के आधार पर उसे यह निर्णय लेना होता है कि उसके न्यादर्श का आकार क्या होना चाहिए। यह निश्चित हो जाने पर वह चयन प्रक्रिया आरंभ करता है। चयन प्रक्रिया मे सामान्यतया निम्नलिखित पदक्रम रहता है -

1- लक्ष्यगत एवं अधिगम्य समष्टि का निर्धारण एवं उसकी व्याख्या करना।

2- न्यादर्श इकाई की परिभाषा करना।

3- न्यादर्श संरचना अथवा सूची तैयार करना।

4- न्यादर्श आकार निर्धारित करना।

5- न्यादर्श प्रतिचयन की विधि का निर्धारण करना।

6- योजना की क्रियान्वित करना तथा न्यादर्श इकाइयों का चयन करना।

10.7 न्यादर्श का आकार एवं विश्वसनीयता (Size of Sample & Reliability)

प्राय: शोधकर्ता यह प्रश्न पूछा करते हैं कि न्यादर्श का आकार कितना होना चाहिए। इस प्रश्न का सटीक उत्तर असंभव है क्योंकि यह बहुत सी बातों पर निर्भर करता है। यह सामान्य ज्ञान की बात है कि न्यादर्श जितना बड़ा होगा। अनुसंधान का परिणाम भी उतना ही अधिक विश्वसनीय होगा। परन्तु निश्चित शुद्धता, निश्चित विश्वसनीयता प्राप्त करने के लिए उसका आकार क्या होना चाहिए इस प्रश्न

का निश्चित उत्तर देना संभव नहीं है। समसंभाविक प्रतिचयन की स्थिति में तो मोटे तौर पर आकार संभव नहीं है। अत: यहां सहसभाविक प्रतिचसन के संदर्भ में ही आकार निर्धारण की विधि का उल्लेख किया जा रहा है।

यह बात पहले लिखी जा चुकी है कि न्यादर्श का आकार जितना बड़ा होगा परिणाम भी अधिक विश्वसनीय होगा। अत: स्पष्ट है कि न्यादर्श का आकार बड़ा होना चाहिए परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि उसका आकार अनावश्यक रूप से बड़ा हो।

वास्तविकता यह है कि उसका आकार न तो बहुत बड़ा होना चाहिए और न बहुत अधिक छोटा, वह अनुकूलतम होना चाहिए। अनुकूलतम आकार वह होता है जिससे अनुसंधान की विश्वसनीयता, नम्यता एवं प्रभाविता सुनिश्चित होती है तथा जो न्यादर्श को समष्टि का प्रतिनिधित्व करने की क्षमता प्रदान करता है। उसे उतना ही बड़ा होना चाहिए कि न्यादर्श त्रुटि के ग्राह्य सीमा के बाहर जाने से बचा जा सके। उसे उतना ही बड़ा होना चाहिए कि न्यूनतम व्यय के साथ तथा वांछनीय रूप से विश्वसनीय परिणाम उपलब्ध हो सकें।

न्यादर्श के आकार को कई कारक तत्व प्रभावित करते हैं। इनमें से कुछ हैं –

1 समष्टि का स्वरूप (विजातीय समष्टि के न्यादर्श का आकार बड़ा होना |

2 आंकड़ों का तालिकाकरण (यदि बहुत सी श्रेणियों में उन्हें बांटना हो तो बड़े न्यादर्श की आवश्यकता होगी।)

3 अनुसंधान सामग्री एकत्र करने हेतु शोधकर्ता का उपलब्ध संसाधन जैसे समय, धन, जनशक्ति आदि |

4 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की संख्या एवं उनके विस्तार |

5 न्यादर्श की इकाइयों का भौगोलिक प्रसार |

6 इकाइयों की उपलब्धि अर्थात कुछ इकाइयों का उपलब्ध न होना |

7 न्यादर्श चयन विधि |

8 मापांकों के सांख्यिकीय विश्लेषण की विधि |

9 अनियंत्रित चरों की संख्या (यदि परिणाम बहुत अधिक है तो न्यादर्श का आकार बड़ा होगा।)

10 वांछनीय परिणाम (यदि परिणाम बहुत अधिक शुद्ध एवं विश्वसनीय चाहिए तो न्यादर्श का आकार बड़ा होगा) आदि।

न्यादर्श आकार की गणना -

इस संबंधमें यह जानना आवश्यक है कि

1 न्यादर्श आकार की गणना केवल संभावित प्रतिचयन की स्थिति में ही संभव होती है।

2 यह गणना दो बातों पर आधारित होती है |

(क) समष्टि विचरण तथा

(ख) वांछनीय विश्वास सीमा

(3) यह कि गणना के जो सूत्र उपलब्ध कराते हैं।

इसी संदर्भ में यह भी जान लेना आवश्यक है कि न्यादर्श का आकार इतना महत्वपूर्ण नहीं होता जितना कि उसका प्रतिनिधिरूप होना महत्वपूर्ण होता है।

न्यादर्श के आकार निर्धारण की कुछ विधियां इस प्रकार हैं -

1 कुछ वैज्ञानिकों ने ऐसी तालिकाएं तैयार की है जिनके द्वारा समष्टि के आकार के अनुसार न्यादर्श के आकार का निर्धारण किया जा सकता है। ऐसी एक तालिका डॉ. आर.पी. सिंह ने 1973 में प्रस्तुत की थी। उसके अनुसार यदि समष्टि का आकार 10 इकाइयों का है तो न्यादर्श का आकार भी 10 इकाइयों का होना चाहिए। इसी प्रकार समष्टि का आकार यदि क्रमश:

15,30,50,100,200,400,500,600,800,1000,1500,3000,5000,10000,50000 तथा 100,000 हो तो न्यादर्श का आकार उसी क्रम से 14,28,44,80,132,196,217,234,260,278,306,341,357,370,380 तथा 384 होना चाहिए।

2 दूसरे प्रकार से न्यादर्श के आकार की गणना करने के लिए दो बातों की आवश्यकता होती है – 1. एक तो परिणाम की वांछनीय शुद्धता तथा 2. दूसरी समष्टिगत विचरण का परिणाम। वांछनीय शुद्धता का अर्थ है कि कितनी त्रुटि अनुसंधान के परिणाम से सहनीय है। एक, दो, तीन चार आदि कितने अंकों तक की त्रुटि सहनीय होगी यह स्वयं निश्चित करना होता है। समष्टि विचरण या तो एक छोटा सा प्रारंभिक अध्ययन करके पता लगाया जा सकता है अथवा पहले यदि कोई ऐसा अध्ययन हुआ है तो उससे जाना जा सकता है। यदि यह भी संभव नहीं है तो उसका केवल अनुमान लगाया जा सकता है। यदि इतना भी ज्ञात हो जाए या अनुमान लगाया जा सकें कि सम्पूर्ण समष्टि में अध्ययनगत चर का विस्तार क्या है अर्थात उसके प्रसार की निम्नतम और उच्चतम सीमाएं क्या हैं तो उन दोनों के अन्तर को लेकर उसे 6 से भाग देकर प्रमाप विचलन ज्ञान किया जा सकता है।

परिणाम की शुद्धता का दूसरे शब्दों में यह अर्थ भी होता है कि अनुसंधानगत चर पर समष्टि एवं न्यादर्श के मध्यमानों के बीच कितना अन्तर किसी स्थिति में सहनीय है। वह 2 प्रतिशत अथवा 5 प्रतिशत कुछ भी स्वीकार किया जा सकता है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि शोधकर्ता का लक्ष्य क्या है, वह कितना अधिक सही परिणाम चाहता है। यदि हृदय रोग की किसी औषधिक का परीक्षण किया जा रहा है तो निश्चिय ही शोधकर्ता चाहेगा कि

त्रुटि बहुत कम अर्थात 1 प्रतिशत अथवा उससे भी कम हो। यदि शिक्षण की दो कुछ अधिक त्रुटि को भी सहन किया जा सकता है । प्रमाप त्रुटि की संभावना एक ऐसा सांख्यिकीय मान है जो यह बता देता है कि किसी न्यादर्श के उस सीमा के भीतर होने की क्या संभावना है जो सहनीय त्रुटि की है तथा जिसका निर्धारित की जाती है तो 95 प्रतिशत न्यादर्श S.E. के बीच आयेंगे । प्रमाप त्रुटि न्यादर्श की विचरण सीमा का 1/4 ही मानी जाती है । इस प्रकार .95 स्तर पर विश्वास सीमा निर्धारित करने पर ऐसा न्यादर्श हमें चुनना होगा जिसका प्र.त्रु. सहनीय त्रुटि की 1/2 हो। यदि विश्वास सीमा इसमें भी उपर .99 स्तर पर निर्धारित की जाती है तो न्यादर्श की प्रमाप त्रुटि सहनीय त्रुटि का और भी छोटा प्रमाप होगी। इसी आधार पर यह भी माना जाता है कि यदि अनुसंधा के परिणाम की शुद्धता बढ़ानी हो अर्थात उसकी प्र.त्र. न्यादर्श के आकार के आकार को बढाना होगा । शुद्धता को भी दो गुणा बढ़ाने के लिए आकार को नौ गुणा बढ़ाना होगा । शुद्धता को दो गुणा बढाने के लिए आकार को नौ गुणा तथा चार गुणा बढाने के लिये न्यादर्श के आकार को सोलह गुणा बढाना होगा । इसका अर्थ हुआ कि परिणाम की शुद्धता की वृद्धि का गुणाक न्यादर्श के आकार की वृद्धि के गुणांक का वर्गमूल होता है ।

पार्टन (1965) ने न्यादर्श आकार ज्ञात करने के दो सूत्र प्रस्तुत किए हैं । एक प्रतिशत पर आधारित है तथा दूसरा मध्यमानों पर। ये इस प्रकार हैं -

क) $N = \frac{P.C.(100 - P.C.)Z^2}{T^2}$

इस सूत्र का प्रयोग तक किया जाता हैं जब समष्टि मान तथा न्यादर्श मान का अन्तर प्रतिशत में ही। इसमें P.C. का समष्टि का अनुमानित प्रतिशत मान होता है, Z प्रमाप त्रुटि S.E. की संख्या है जो .05 अथवा .01 आदि स्तरों पर तालिका में उपलब्ध होती है, T, सहनीय त्रुटि है जो 5 प्रतिशत अथवा 2 प्रतिशत कुछ भी हो सकती है। वास्तव में यह सूत्र प्र.त्रु. (S.E.) सूत्र का ही परिवर्तित रूप है।

ख) दूसरा सूत्र इस प्रकार है -

$$N = \left(\frac{\sigma \times S.E.Unit}{T}\right)^2 and \left(\frac{\sigma Z}{T}\right)^2$$

इस सूत्र में σ = समष्टि का अनुमानित प्रमाप विचलन

N= S.E. = की इकाई संख्या

T = σ सहनीय त्रुटि 5 प्रतिशत अथवा 2 प्रतिशत

उदाहरण - मान लीजिए एक औषधि की प्रभाविता का अध्ययन किया जा रहा है तथा शोधकर्ता को .95 संभावित स्तर 2 प्रतिशत से अधिक त्रुटि सहनीय नही तो कितने रोगियों के न्यादर्श पर उसे परीक्षण करना चाहिए वह जानना चाहता है। इस स्थिति में न्यादशर् का आकार होगा -

$$N = \left(\frac{\sigma \times S.E.}{T}\right)^2 and \left(\frac{10 \times 1.96}{2}\right)^2 = 96\,\%$$ लगभग

उपरोक्त में $\sigma = 10$ अनुमानित है।

वास्तव में सहनीय त्रुटि प्रमाप त्रुटि की इकाई (1.96 अथवा 2.58 आदि संभावित स्तर के अनुसार) तथा प्रमाप त्रुटि का आकार के गुणनफल के बराबर होता है। यदि .95 स्तर पर न्यादर्श का आकार जानना है तो इसका सूत्र होगा

सहनीय त्रुटि = 1.96 x S.E.

क्योंकि S.E.का सूत्र होता है $\frac{\sigma}{\sqrt{N}} (\sigma = S.D.)$

अत: सहनीय त्रुटि $1.96 = \frac{\sigma}{\sqrt{N}}$

यदि सहनीय त्रुटि 1 है तो $21.96 = \frac{\sigma}{\sqrt{N}}$

यदि अनुमानित S.D. 10 है तो 2 $=1.96 = \frac{\sigma}{\sqrt{N}}$ $1.96 = \frac{\sigma}{\sqrt{N}}$

इसे हल करने पर लगभग

इस प्रकार न्यादर्श का आकार की गणना करने पर यह नहीं समझना चाहिए कि इसके आधार पर जो परिणाम उपलब्ध होगा वह पूर्णतया वांछनीश् शुद्धता का प्रतीक होगा। ऐसया तभी संभव होगा जब न्यादर्श का चयन भी आदर्श हो जो प्राय: नहीं होता। तो भी न्यादर्श आकार निर्धारित करने की यह एक उपयोगी विधि है।

न्यादर्श का सही सही आकार निर्धारित करने की एक दूसरी विधि भी है। इसे प्रतिचयन स्थिर परीक्षण कहते हैं। इसके अन्तर्गत एक के बाद दूसरा न्यादर्श चुनकर तथा उस पर परीक्षण करते चले जाते हैं। जब बराबर दो तीन परीक्षणों पर परिणाम लगभग समान आने लगते हैं तो वहीं रूक जाते हैं तथा वही न्यादर्श का उपयुक्त आकार होता है। उदाहरणार्थ, पहले 10 इकाइयों के छोटे समूह पर परिणाम प्राप्त किया। फिर न्यादर्श 15 इकाइयों का लिर्या। उस पर परीक्षण किया तथा पहले और दूसरे न्यादर्श को मिलाकर परिणाम का अगणना किया और देखा कि परिणाम की शुद्धता कितनी बढ़ी । इस प्रकार पुन: तीसरा न्यादर्श 20 इकाइयों का लिया। उस पर परीक्षण किया और अब पहले दूसरे तथा तीसरे

न्यादर्शों को मिलाकर परिणाम का आगणन किया। यदि अब भी परिणाम वही रहा जो पहले था तो समझा जाएगा 10+15 25 इकाइयों वाला न्यादर्श पर्याप्त था।

गुल्फ प्रतिचयन -

प्रतिचयन की इस विधि में न्यादर्श की इकाई कोई एक व्यक्ति, एक घटना एक वस्तु न होकर उनका एक गुल्म अथवा समूह होता है, जैसे छात्रों की कक्षाएं, विद्यालय समुदाय आदि। संभावित एवं असंभावित दोनों प्रकार के प्रतिचयनों में इसका प्रयोग किया जा सकता है। यह अधिक सुविधाजनक होता है। यही इसकी विशेषता है। परन्तु इसके दोष कई एक है। इसमें त्रुटि की मात्रा अधिक होती है। संभावित प्रतिचयन की तुलना मे एक निश्चित शुद्धता हेतु इसमें पर्याप्त रूप से बड़े न्यादर्श की आवश्यकता होती है। समान आकार वाले समष्टि के प्रत्येक न्यादर्श के चयन की संभावना समान नहीं होती। जो लाभकारी विशेषताएं संभावित प्रतिचयन की होती हैं वे इससे नहीं पाई जाती। अत: संभावित प्रतिचयन की तुलना में यह कम उपयोगी होता है।

महलानवीय 1944 ने इस विधि में थोडा परिवर्तन करके एक नई विधि का विकास किया है जिसे उन्हां ने अतिच्छादी आयत संतल प्रतिचयन विधि की संज्ञा दी है।

10.8 उत्तम न्यादर्शन की विशेषताएँ (Characerstics of Best Sampling)

विशेष रूप से शैक्षिक अनुसंधान में न्यादर्शन का उपयोग जनसंख्या की विशेषता समष्टिज को ज्ञात करने के लिए किया जाता है । यहां समष्टिज उन चरों को कहा जाता है, जिनकी सहायता से चर के वितरण का जनसंख्या में स्वरूप निर्धारण किया जाता है ।

उदाहरण - कक्षा क के विद्यार्थियों की समष्टि (जनसंख्या) में यदि आवश्यक अथवा ऐच्छिक चर बुद्धि लब्धि है तो समष्टिज सम्पूर्ण जनसंख्या के लिए बुद्धि लब्धि है तो समष्टिज सम्पूर्ण जनसंख्या के लिए मध्यमान बुद्धि लब्धि तथा मानक विचलन होगे इसका मुख्य कारण है कि मध्यमान तथा मानक विचलन ज्ञान से जनसंख्सया में बुद्धि लब्धि का वितरण उचित रूप से बताया जाता है । किसी जनसंख्या में इसी प्रकार के दो चरों में पाये जाने वाले सह संबंध को निर्धारित करने के लिए आवश्यक समष्टिज M_1, M_2, D_1, D_2,तथा r_{12},हैं । तथा M_2 क्रमश: प्रथम तथा द्वितीय चरों के मध्यमान हैं । D_1 तथा D_2 उनके मानक विचलन तथा r_{12} उनके मध्य सहसंबंधगुणांक है ।

इसके उपरान्त न्यादर्शन से प्राप्त वर्णनात्मक, सांख्यिकीय जनसंख्या के समष्टिजों के अनुमान ही होते हैं । यहां समष्टिज हमें ज्ञात हैं, जबकि सांख्यिकीय अज्ञात हैं । इन्हीं ज्ञात मानों से अज्ञात मूल्यों का अनुमान लगाना ही मुख्य रूप से आगमन सांख्यिकी का उद्देश्य होता है । हम इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए ही न्यादर्शन की विभिन्न विधियों का प्रयोग में लाते हैं ।

उपरोक्त वर्णन के आधार पर न्यादर्शन में हम मुख्यत: दो प्रमुख विशेषता देखते हैं। इनका वर्णन निम्नलिखित है -

1 प्रतिनिधित्व 2 पर्याप्तता।

इनका विस्तृत विवरण समझना अधिक आवश्यक है, यह विवरण निम्नलिखित है -

1 प्रतिनिधित्व - यहां न्यादर्शन को हम प्रति निधि न्यादर्श कहते हैं। यदि उसमें चर के मूल्य के अनुरूप इकाइयों का वहीं अनुपात होता है, जो कि जनसंख्या के अन्तर्गत होता है।

उदाहरण - माना किसी जनसंख्या में बुद्धि लब्धि का वितरण निम्नलिखित है (स्तम्भ 2) में

150-159	10	1
130-139	40	4
120-129	160	16
110-119	300	30
100-109	240	24
90-99	150	15
80-89	40	4
70-79	30	3
60-69	20	2
50-59	10	1
कुल	1000	100

अब न्यादर्श में प्रतिनिधित्व का गुण अवश्य भी होगा। यदि प्रत्येक वर्ग (C.I) में आने वाली आवृत्तियां उसी अनुपात में हो, जिसमें वे जनसंख्या में है। उपरोक्त उदाहरण के स्तम्भ 3 में प्रतिनिधि न्यादर्श दिखाया गया है। न्यादर्श जब जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है तो ऐसे न्यादर्श से प्रापत होने वाली वर्णनात्मक सांख्यिकीय का मान समष्टिजयों के मान के बराबर ही होता है तथा समष्टिज का एक मात्रात्मक अनुमान अधिक पूर्ण तथा विश्वस्त होता है परन्तु व्यवहार में प्रतिनिधि न्यादर्श प्राप्त करना अत्यन्त कठिन अथवा असंभव ही होता है।

2 पर्याप्तता - प्राय: द्वितीय विधि के अन्तर्गत समष्टिज का अनुमान इस प्रकार स्पष्ट किया जाता है कि उसका मान किन दो मानों के मध्य में होगा। जैसे - किसी व्यक्ति को देखकर यह पूर्ण रूप से स्पष्ट करना कि उसकी आयु 40 वर्ष से 50 वर्ष के मध्य है। इस प्रकार का वर्ग अनुमान जब अनुमानित वर्ग का मान यहा 50-40 = 10 कम होता है तो अनुमान उच्च समझा जाता है, जैसे कि यदि कोई यह स्पष्ट करें कि उस व्यक्ति की आयु 45-58 वर्ष के मध्य हैं तो यहां इस प्रकार का अनुमान पहले से भी अधिक उच्च माना जाता है परन्तु अनुमानित वर्ग का मान करने से अनुमान में विश्वास कम हो जाता है अर्थात कोई व्यक्ति अधिक विश्वास से कह सकता है कि इस व्यक्ति की आयु 40 वर्ष से 50 मध्य के मध्य तथा बहुत कम व्यक्ति ही विश्वास के साथ यह कह सकते हैं कि इस व्यक्ति की आयु 45 वर्ष से 48 वर्ष के मध्य है।

सांख्यिकीय अनुमानों में वर्ग अनुमान प्राय: अभीष्ट सांख्यिकीय की मानक त्रुटि पर आश्रित रहता है। किसी सांख्यिकीय के न्यादर्शिय वितरण के मानक विचलन की उस सांख्यिकीय मानक त्रुटि कहा जाता है। किसी जनसंख्या में से किसी भी प्रकार अथवा आकार के बहुत से न्यादर्श प्राप्त किये जा सकते हैं। उन सभी न्यादशों में से यदि उस सांख्यिकी के मान निकाले जाये तो निश्चित ही व्यवहार में पृथक - पृथक न्यादर्शों से सांख्यिकीय का मान प्राप्त करना पूर्णतया असंभव है। इस कारण से मानक त्रुटि का मान भी व्यवहारिक रूप से नहीं आता। कुछ गणित के विद्वानों ने कुछ मान्यताओं के आधार पर मानक त्रुटि के सूत्र बताये हैं। इन सूत्रों का विवरण निम्नलिखित है -

1 माध्यिका की मानक त्रुटि (Standars Error of Median)

$$S.E.of\ M = \frac{1.25s}{\sqrt{N}}$$

2 माध्य की मानक त्रुटि (Standars Error of Mean)

$$S.E.of\ a\ or\ x = \frac{s}{\sqrt{N}}$$

3 मानक विचलन की मानक त्रुटि (Standars Error of Standard Deviation)

$$S.E.of\ a\ or\ x = \frac{s}{\sqrt{2N}}$$

4 सह संबंधगुणांक की मानक त्रुटि (Standars Error of Correlation Coefficient)

$$S.E.of\ C.C. = \frac{1-r^2}{\sqrt{N-1}}$$

5 औसत विचलन की मानक त्रुटि (Standars Error of Average Deviation)

$$S.E.of\ A.D.=\frac{.756N.A.}{\sqrt{N}}$$

6 चतुर्थांश विचलन की मानक त्रुटि (Standars Error of Quartile Deviation)

$$S.E.of\ S.D.=\frac{1.17}{\sqrt{N}}$$

S = न्यादर्श

N = न्यादर्श की इकाइयों की संख्या

R = सह संबंधगुणांक

A.D. = माध्य विचलन अथवा औसत विचलन

Q = चतुर्थाश विचलन

हम उपरोक्त सूत्रों के माध्यम से समझ सकते हैं कि मानक त्रुटि को न्यादर्श के आधार को अधिक करने के उपरान्त कम ही किया जा सकता है। मानक त्रुटि कम होने से समष्टि का मान अनुमानित करने के लिए स्पष्ट किये गये वर्ग का मान कम हो जाता है। उससे प्राप्त किसी सांख्यिकीय की मानक त्रुटि यदि कम हो तो हम न्यादर्श को पर्याप्त कहते हैं। परन्तु इसके लिए न्यादर्श का आकार निश्चित ही बड़ा होना चाहिए।

न्यादर्श के विभिन्न स्तर

न्यादर्श के मुख्यत: पांच स्तर माने जाते है, इनका विवरण निम्नलिखित है -

1 समग्र अथवा सम्पूर्ण

2 जनसंख्या

3 आमंत्रित न्यादर्शन

4 स्वीकृत न्यादर्शन

5 समंक प्रस्तुत करने वाला न्यादर्शन

उपरोक्त का विस्तृत विश्लेषण अथवा वर्णन निम्नलिखित है -

1 समग्र - इसका तात्पर्य उत्तरदाता अथवा उत्तर देने वाले व्यक्तियों से है, जैसे कक्षा 10 में पढ़ने वाले सभी विद्यार्थी |

2 जनसंख्या - जनसंख्या समग्र का वह भाग होता है, जहाँ तक अनुसंधानकर्ता की पहुँच हो सकती है। जनसंख्या में से न्यादर्श का चयन किया जाता है। इस चयन के आधार पर अनुसंधानकर्ता निष्कर्षों तथा परिणामों का सामान्यीकरण करता है।

3 आमंत्रित न्यादर्शन - यह जनसंख्या का वह पूर्ण अथवा सम्पूर्ण भाग होता है, जिसको अनुसंधान में प्रयाग करने के लिए आमंत्रित किया जाता है।

4 स्वीकृत न्यादर्शन - स्वीकृत न्यादर्शन को आमंत्रित न्यादर्श का वह भाग माना जाता है, जो कि आमंत्रण को स्वीकार कर लेता है और अनुसंधान कार्य में भी भाग लेने पर अपनी स्वीकृत प्रदान कर लेता है।

5 समंक प्रस्तुत करने वाला न्यादर्शन - यह स्वीकृत प्रदान करने वाले न्यादर्शन का वह भाग माना जाता है, जिसमें वास्तविक रूप से विभिन्न समंकों का संकलन किया जाता है।

इस प्रकार से उपराक्त स्तर पर एक न्यादर्शन चक्र का निर्माण करते हैं। इस चक्र को अग्रलिखित रेखाचित्र के माध्यम से समझा जा सकता है -

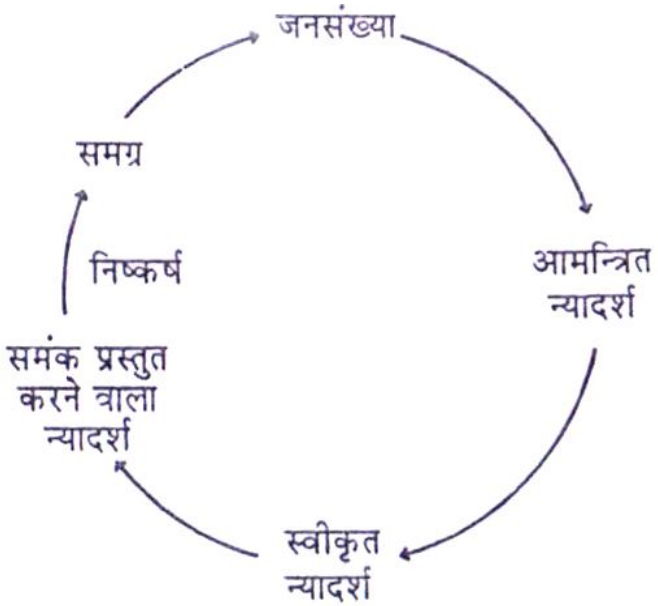

चित्र : न्यादर्शन चक्र (The Sampling Cycle)

10.9 सारांश

न्यादर्श का अनुसंधान में महत्वपूर्ण स्थान है। न्यादर्श के अभाव में कोई भी अनुसंधान कार्य पूर्ण नहीं हो सकता। मानव के जीवन के प्रत्येक पक्ष में प्राय: न्यादर्श अथवा सैम्पल की आवश्यकता होती है, जैसे मानव उबलते हुए चावल के एक दाने से उसके पकने का अनुमान लगा लेता है। वहीं एक चिकित्सक मनुष्य की रक्त की कुछ बूंदों से ही उसके सम्पूर्ण रक्त की स्थिति ज्ञात कर लेता है इसके अतिरिक्त कुछ ग्राम मिट्टी की उर्वरता की पहचान कर लेते हैं अर्थात जीवन के प्रत्येक पक्ष में न्यादर्श की सैम्पल पद्धति उपयोग में लायी जाती है। न्यादर्श की इसी उपयोगिता ने अनुसंधान में इसका महत्वपूर्ण स्थान बनाया है।

जब भी किसी जनसंख्या (इकाई, वस्तुओं अथवा मनुष्यों का समूह) में किसी चर का विशेष मान ज्ञात करने के लिए उसकी कुछ इकाइयों का चयन किया जाता है तो इसी चयन प्रक्रिया को न्यादर्शन कहा जाता है तथा चुनी गयी इकाई को न्यादर्श कहा जाता है। प्रस्तुत अध्याय में आपने यही समझा है।

10.10 शब्दावली

- **चर -** जिस रूप, गुण, विशेषता अथवा अवस्था का अध्ययन करना उद्देश्य है उसे हम चर कहते हैं।
- **इकाई -** चर की उस मात्रा को जो हमें किसी छोटे से छोटे घटक में ज्ञात है, उसे इकाई कहा जाता है।
- **जनसंख्या -** इकाइयों के पूर्व समूह को जिसके लिए चर को निकाला अभीष्ट है जनसंख्या कहलाता है।

10.11 स्वमूल्यांकनहेतु प्रश्न

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

निम्नलिखित का अर्थ बताइये -

1 जनसंख्या

2 न्यादर्श

3 चर

4 इकाई

लघुत्तरात्मक प्रश्न

निम्नलिखित को परिभाषित कीजिए -

अ) समजातीय जनसंख्या

ब) सीमित जनसंख्या

स) वास्तविक जनसंख्या

द) विसमजातीय जनसंख्या

य) असीमित जनसंख्या

र) काल्पनिक जनसंख्या

निबंधात्मक प्रश्न

1 न्यादर्श का आकार एवं विश्वसनीयता से आप क्या समझते है सविस्तार वर्णन कीजिए।

10.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियां, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
- बेस्ट, जे. उस्लयू (1963) : रिसर्च इन एजूकेश्न, नई दिल्ली, प्रेटिंय हॉल
- गुड, सी.वी. एवं स्केट्स डी.ई. (19510): मेथड्स ऑफ रिसर्च, न्यूयार्क एलिशन सेन्चुरी
- एच.के. कपिल (2001) : अनुसंधान विधियां, (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा
- एफ.एन. करलिंगर (19610) : फाउन्डेशन ऑफ विवेहरियल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं बिंसटन इंक, न्यूयार्क
- भट्नगार, आर.पी. (1995) : शिक्षा अनुसंधान : विधि एवं विश्लेषण लायल बुक डिपो, कॉलेज रोड, मेरठ
- शर्मा, आर.ए. (1995) : शिक्षा अनुसंधान, मरेठ इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ
- सुखिया एस.पी.महरोत्रा, पी.पी. एवं मेहरोत्रा आर.एन. (1973) : शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा
- सिद्धु के एस.(1985) : मेथड्स ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, नई दिल्ली, स्टरलिंग पब्लिशर्स
- रायजादा बी.एस. (1999) : शिक्षा के अनुसंधान के आवश्यक तत्व
- शर्मा, अरविन्द कुमार (2008) : शोध प्रविधियां एवं सूचना प्रौद्योगिकीएस एस पब्लिकेशनस, नई दिल्ली
- जैन, एम.के. (2007) : शोध विधियां, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली

इकाई 11

सम्भाव्य न्यादर्शन

Probability Sampling

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 न्यादर्शन की विधियां अथवा प्रकार

11.4 सम्भाव्य न्यादर्शन का अर्थ

11.5 सम्भाव्य न्यादर्शन के सिद्धान्त

11.6 सम्भाव्य न्यादर्शन

11.7 सम्भाव्य न्यादर्शन के प्रकार

11.7.1 साधारण अनियत न्यादर्शन

11.7.2 क्रमिक न्यादर्शन

11.7.3 वर्गबद्ध न्यादर्शन

11.7.4 बहुरूपी न्यादर्शन

11.7.5 गुच्छ न्यादर्शन

11.8 सम्भाव्य न्यादर्शन की सीमाएं

11.9 सारांश

11.10 शब्दावली

11.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

11.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

11.1 प्रस्तावना

पिछले अध्याय में आपने समष्टि अथवा जनसंख्या को समझते हुए उसमें से न्यादर्शन की प्रक्रिया को समझा न्यादर्श का अर्थ, प्रक्रिया संरचना की समझा, न्यादर्शन का आकार एवं विश्वसनीयता को जानते हुए उसकी विशेषताओं को भी जाना लेकिन प्रत्येक अनुसंधान की आवश्यकता एवं प्रकृति

होती है उसी अनुरूप उसके न्यादर्श चयन की प्रक्रिया अपनानी होती है। अत: न्यादर्श के चयन की प्रक्रिया अपनानी होती है। अत: न्यादर्शन के प्रकारों को जानना आवश्यक होता है। प्रस्तुत अध्याय में न्यादर्शन के प्रकार एवं उसमें से एक प्रमुख प्रकार सम्भाव्य न्यादर्शन एवं उसकी विभिन्न प्रणालियों का अध्ययन करेंगे।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

- न्यादर्शन की विभिन्न विधियों/प्रकारों के बारे में जान पायेंगे।
- सम्भाव्य न्यादर्शन का अर्थ, विशेषताएं समझ सकेंगे।
- सम्भाव्य न्यादर्शन के विभिन्न प्रकारों की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- सम्भाव्य न्यादर्शन की सीमाओं की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

11.3 न्यादर्शन की विधियाँ अथवा प्रकार

न्यादर्शन एक महत्वपूर्ण अनुसंधानिक घटक है। अत: इसमें अनेक प्रारूपों का प्रयोग किया जाता है। इनमें से प्रमुख प्रारूपों को उनकी प्रकृति आधार पर दो भागों में विभाजित किया जाता है। यह विभाजन निम्नलिखित है -

1 संभाव न्यादर्शन

2 असम्भाव न्यादर्शन

इन दोनों प्रारूपों के कुछ भाग होते हैं, इनका वर्णन निम्नलिखित है -

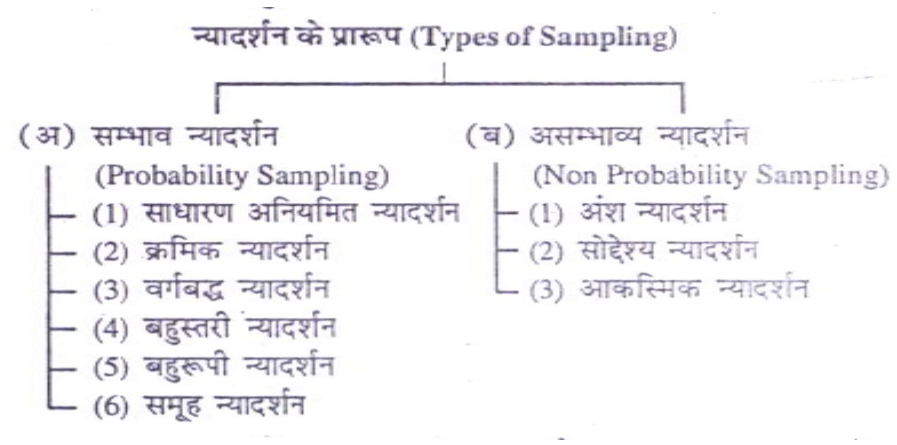

11.4 सम्भाव्य न्यादर्शन का अर्थ

संभाव्य न्यादर्शन

जब किसी न्यादर्शन के चयन में अनुसंधानकर्ता ऐसी विधि का प्रयोग करता है, जिसमें जनसंख्या के प्रतिनिधिव की संभावना रहती है, ऐसी स्थिति में उसे संभाव्य न्यादर्शन कहा जाता है।

11.5 सम्भाव्य न्यादर्शन के सिद्धान्त (Theory of Probability Sampling)

इसमें दो प्रमुख सिद्धान्त होते हैं। इन सिद्धान्तों का वर्णन निम्नलिखित है -

1 सांख्यिकीय नियमिताओं का सिद्धान्त

2 बड़े न्यादर्शन की शक्ति का सिद्धान्त

इन दोनों सिद्धान्तों का विस्तृत विवरण निम्नलिखित है -

1 **सांख्यिकीय नियमिताओं का सिद्धान्त** - संभाव्य न्यादर्शन इसी में सम्मिलित माना जाता है। एक अपेक्षाकृत छोटे न्यादर्शन को यदि अनियमितीकरण विधि से चयन किया गया हो तो वह जनसंख्या का अवश्य प्रतिनिधित्व करता है। इस प्रकार के न्यादर्शन से प्राप्त परिणामों से सामान्यीकरण किया जा सकता है। यहां न्यादर्शन की सांख्यिकीय के आधार पर जनसंख्या के विभिन्न मानकों का अनुमान लगाया जाता है। इसमें सार्थकता के लिए परीक्षण की भी सुविधा है।

2 **बड़े न्यादर्शन की शक्ति का सिद्धान्त** - वस्तुत: यह सिद्धान्त उपरोक्त सिद्धान्त का ही एक भाग माना जाता है। एक बड़ा न्यादर्श छोटे न्यादर्शन की अपेक्षा, जनसंख्या का अच्छा प्रतिनिधित्व माना जाता है। बड़े न्यादर्शन में त्रुटि की संभावना भी कम ही रहती है। इसे निम्नलिखित सूत्र के माध्यम से समझा जा सकता है -

मध्यमान की प्रमाणिक त्रुटि $[SE_m] = \frac{\sigma}{\sqrt{(N)}}$

उपरोक्त सूत्र में ‚N‘ में जहां न्यादर्शन का आकार का तो σ में जनसंख्या का प्रामाणिक विचलन S.D. प्रयोग किया गया है। यहां न्यादर्शन का आकार यदि बड़ा कर दिया जाये तो न्यादर्शन की त्रुटि अवश्य ही दूर हो जाती है। इस स्थिति को हम निम्नलिखित सूत्र के माध्यम से मसझ सकते हैं -

मध्यमान की प्रमाणिक त्रुटि $[SE_m] = \frac{\sigma}{\sqrt{(N)}} = \frac{\sigma}{\pi} = 0$

यहां निष्कर्षों के लिए परा सांख्यिकीय का उपयोग किया गया है।

11.6 सम्भाव्य न्यादर्शन की विशेषताएँ

सम्भाव्य न्यादर्शन की मुख्य विशेषताओं का विवरण निम्नलिखित है -

1- यह जनसंख्या का अच्छा प्रतिनिधित्व करती है।

2- जनसंख्या के प्रत्येक सदस्य के चयन किये जाने की समान संभावना इस न्यादर्शन में होती है।

3- इसका सामान्यीकरण किया जा सकता है।

4- इसमें सामान्यीकरण के लिए परा सांख्यिकीय परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है।

5- इस न्यादर्शन से संकलित किये गये प्राप्तांकों का वितरण सामान्य रूप में होता है। यहां वितरण स्वतंत्र नहीं होता है।

11.7 सम्भाव्य न्यादर्शन के प्रकार

इसके मुख्यत: छ: प्रकार के होते हैं, जिनका वर्णन निम्नलिखित है-

1 साधारण अनियमित न्यादर्शन

2 क्रमिक न्यादर्शन

3 वर्गबद्ध न्यादर्शन

4 बहुरूपी न्यादर्शन विधि

5 समूह अथवा गुच्छ न्यादर्शन

6 बहुस्तरीय न्यादर्शन

उपरोक्त का विस्तृत विवरण निम्नलिखित है -

11.7.1 साधारण अनियमित न्यादर्शन (Simple Random Sampling)

अनियमित विधि के माध्यम से इस न्यादर्शन का चुनाव किया जाता है। इसके अन्तर्गत जनसंख्या अथवा समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति के न्यादर्शन में चयन के लिए समान अवसर प्राप्त होते हैं। इस न्यादर्शन मे एक व्यक्ति, दूसरे व्यक्ति के चयन पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकता है।

अनियमित की विधि में चयन करने की मुख्यत: पांच विधियों का प्रयोग किया जाता है, इसका विवरण निम्नलिखित है -

1 पासा उछालकर

2 सिक्का उछालकर

3 टिपिट तालिका द्वारा

4 लॉटरी विधि से

5 अन्य विधि से

1 पासा उछालकर

इसके अन्तर्गत पासा उछालकर जो अंक आता है, उस अंक के व्यक्ति को सम्मिलित कर लिया जाता है।

2 सिक्का उछालकर

प्राय: जनसंख्या के प्रत्येक व्यक्ति को लेकर उसके लिए सिक्का उछालकर यह निश्चित कर लिया जाता है कि सिक्के ने किस पक्ष का चयन किया है। उसके नाम पर यदि वही पक्ष आये तो उसका चयन कर लिया जाता है। इस चयन से न्यादर्श प्राप्त हो जाता है।

3 टिपिट तालिका द्वारा

अनियमित संख्याओं की एल.एच.सी. टिपिट ने एक तालिका तैयार की है। टिपिट की इस तालिका में कुल 41600 अंक हैं, इसके अतिरिक्त इसमें चार अंकों वाली 10400 संख्याएं है। इन्हीं संख्याओं को लेकर जनसंख्या को उसी नम्बर के अनुरूप व्यक्ति का चयन किया जाता है।

4 लॉटरी विधि से

इस विधि के अन्तर्गगत मात्र कागत पर व्यक्ति का नाम लिखते हैं तथा उसे आंख बन्द कर उठाते हैं, जिस व्यक्ति का नाम इसमें आता है, उसे न्यादर्श में सम्मिलित कर लिया जाता है।

5 अन्य विधि से –

यह विधि भी लॉटरी विधि के समरूप है। इसमें मात्र कागज पर नाम लिखकर आंख बन्द करके कागज की पर्ची को उठाते जाते हैं तथा उन्हें न्यादर्श में सम्मिलित करते जाते हैं।

साधारण अनियमित न्यादर्शन चयन का महत्व

इसमें प्रमुख महत्व का वर्णन निम्नलिखित है -

1 प्राय: अनियमित न्यादर्शन व्यक्तिगत पक्षपात से मुक्त होता है।

2 इस विधि का प्रयोग प्राय: सभी प्रकार के अनुसंधानों तथा प्रयोगों में किया जा सकता है।

3 यह जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती है।

4 यह विधि न्यादर्श की त्रुटियों को सुगमता से बता देती है।

5 इसका प्रयोग सर्वेक्षण में भी किया जा सकता है।

6 सह विधि अत्यन्त ही सरल है।

7 अनुसंधानकर्ता को चयन करने में किसी सोच विचार की आवश्यकता नहीं होती है।

11.7.2 क्रमिक न्यादर्शन (Systematic Sampling)

मुख्यत: यह साधारण अनियमित न्यादर्शन चयन विधि का संशोधित किया हुआ रूप है। इस विधि के अन्तर्गत जनसंख्या का प्रयोग अनिवार्य होता है। इस विधि में सभी व्यक्तियों के नामों की सूची को या तो वर्णमाला के अनुसार अथवा अन्य किसी विधि से तैयार कर लेते है। इसके पश्चात इनको एक ही विधि से लिख लेते हैं। इसके उपरान्त सूची में से एक क्रम से व्यक्ति अथवा इकाई को चयनित कर लिया जाता है।

इस विधि में निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है।

$\frac{N}{n} th$ वां व्यक्ति का चयन किया जाता है -

यहां $N =$ कुल जनसंख्या

$n =$ न्यादर्श की इकाइयों की संख्या

हमने माना कि 10000 की जनसंख्या में से 1000 व्यक्तियों को न्यादर्श के लिए चयन किया जाना है।

अर्थात $N = 10,000$
$n = 1000$

$\frac{N}{n} th$ वां $\frac{10,000}{1000}$ व्यक्ति का चयन किया जाता है -

इस प्रकार इस पद्धति में प्रत्येक 10वें व्यक्ति को न्यादर्शन के रूप में चयनित किया जाता है।

इसका विस्तृत निम्नलिखित है -

1 इसमें धन की बचत होती है।

2 यह एक सरल विधि है।

3 इस विधि से प्राप्त परिणामों से निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

4 इस विधि से प्राप्त निष्कर्षों तथाद सामान्यीकरण किया जा सता है।

5 इसमें न्यादर्शन का रूप व्यापक तथा प्रतिनिधित्व स्वरूप में हो सकता है।

11.7.3 वर्गबद्ध न्यादर्शन (Stratified Sampling)

हम यह जानते हैं कि न्यादर्शन को जनसंख्या का पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व करना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि न्यादर्श का मानक विचलन अथवा अन्य विचलन कम हो। इस कारण से पूर्ति के लिए कभी कभी जनसंख्या को समावयी भागों में विभाजित कर देते हैं। यहां प्रत्येक स्तर अथवा भाग में आने वाली इकाइयों का एक ढांचा में से ही न्यादर्शन विधि का चयन कर लिया जाता है।

इसमें किस स्तर अथवा भाग में कितने व्यक्तियों का चयन किया जाये? इसके लिए मुख्यत: निम्नलिखित तीन परिस्थितियों का चयन किया जाता है -

1- **अ-अनुपतिक -** इसमें सभी वर्गों में जितना चाहे इकाइयों का चुनाव किया जा सकता है।

2- **अनुपतिक -** इसके अन्तर्गत प्रत्येक भाग से एक निश्चित अनुपात में इकाइयों का चुनाव किया जा सकता है।

3- **महतम विभाजन -** इसके अन्तर्गत प्रत्येक भाग अथवा स्तर में से कुल जनसंख्या का एक निश्चित चयन ही किया जा सकता है।

हम एक तालिका के माध्यम से उपरोक्त तीनों परिस्थितियों को स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं -

वर्ग - बद्ध न्यादर्शन के भाग अथवा स्तर

स्तर अथवा भाग	**अ-आनुपतिक चयन**	**आनुपतिक चयन**	**जनसंख्या के अनुरूप न्यादर्शन**	
उच्च स्तर	310	270	2400	260
मध्य स्तर	460	510	4100	390
निम्न स्तर	230	220	3500	350
न्यादर्श का आकार	1000	1000	10000	1000

वर्ग बद्ध न्यादर्शन का महत्व

इसका वर्णन निम्नलिखित है -

1 यह वस्तुनिष्ठ न्यादर्शन विधि है।

2 यह जनसंख्या का सर्वोत्तम रूप से विभाजन करती है।

3 स्तरों का विभाजन वस्तुनिष्ठ रूप से होता है।

4 इस विधि से प्राप्त परिणाम अधिक शुद्ध तथा अधिक वैध माने जाते हैं।

5 यह एक लचीला न्यादर्शन है।

11.7.4 बहुरूपी न्यादर्शन विधि (Multiple Sampling Method)

न्यादर्शन की इस विधि मे दो अथवा दो से अधिक न्यादर्श का चयन किया जाता है। इस कारण इसे बहुरूपी अथवा द्विश: न्यादर्शन भी कहा जाता है। इसका मुख्य कारण है कि कभी कभी जनसंख्या

के स्तरीकरण के लिए कोई आधार ज्ञात नहीं होता है। अत: मुख्य चर से संबंधितकिसी चर के लिए न्यादर्शन का लिया जाता है। अपेक्षाकृत यह एक विस्तृत न्यादर्शन है। इसके अन्तर्गत बड़े न्यादर्शन से संबंधितचर का आवृत्ति विवरण पढ़कर उसे स्तरीकृत कर लिया जाता है। इस प्रकार स्तरीकृत बड़े न्यादर्श में से समानुपाती स्तरीकृत न्यादर्श लिया जाता है। यह न्यादर्श अपेक्षाकृत छोटा होता है। इस छोटे न्यादर्श में से ही मुख्य चर के लिए अध्ययन किया जाता है।

कभी कभी जबकि मुख्य चर का मूल्य ज्ञात करना अपेक्षाकृत कठिन होता है तो मुख्य चर के मान को संबंधितचर के मान की सहायता से ही अनुमानित करने के लिए रिग्रेशन समीकरण स्थापित किया जाता है।

बहुरूपी न्यादर्शन विधि का महत्व

इसका वर्णन निम्नलिखित है -

1 यह त्रुटियों की संभावना को घटा देती है।

2 इससे तुलना अध्ययन में सहायता प्राप्त होती है।

3 इसके द्वारा न्यादर्शन की विश्वसनीयता का परीक्षण तथा वांछनीय परिणामों की प्राप्ति में उचित निर्देशन प्राप्त होता है।

11.7.5 समूह अथवा गुच्छ न्यादर्शन(Cluster Sampling)

यह न्यादर्शन न्यादर्शन का ही संशोधित किया हुआ रूप है। इसमें जनसंख्या के अनेक स्तर होते हैं। यहाँ ये सभी स्तर एक दूसरे में समावेशित रहते हैं। इस प्रकार विभिन्न स्तरों की एक श्रृंखला का निर्माण हो जाता है फिर इस श्रृंखला में से यादृच्छि की न्यादर्श का चयन कर लिया जाता है। इसके उपरन्त चुने गये न्यादर्श की प्रत्येक इकाई का अध्ययन किया जाता है। इस न्यादर्श के अन्तर्गत न्यादर्शन को उप न्यादर्शन भी कहते हैं।

उदाहरण - यदि हमें कक्षा 7 के विद्यार्थियों का न्यादर्श लेना है तो हम स्कूल को न्यादर्शन की इकाई मानेंगे तथा उसका ढांचा तैयार करेंगे। इसके पश्चात इनमें कुछ स्कूलों को यादृच्छिक अथवा नियमित न्यादर्शन विधि के माध्यम से चुनेंगे। इसके उपरान्त या तो चयनित स्कूलों के कक्षा 7 के सभी विद्यार्थियों का अध्ययन किया जायेगा अथवा उन स्कूलों के कक्षा 7 के सभी विद्याथ्रियों का ढांचा तैयार करके उसमें से आवश्यक संख्या में विद्यार्थियों अथवा यादृच्छिक का चयन किया जायेगा।

यह विधि उस समय अधिक लाभदायक होती है जब इकाई तक पहुंचने में व्यय अधिक आ रहा हो तथा इकाई में अध्ययन का व्यय कम होता हो।

11.7.6 बहुस्तरीय न्यादर्शन (Multistage Sampling)

यह न्यादर्शन बहुरूपी न्यादर्श का ही एक संशोधित संस्करण है। इसमें जनसंख्या के विभिन्न स्तरों का निर्माण किया जाता है। ये सभी स्तर प्राय: एक दूसरे में समाहित रहते हैं, जैसे यदि हम शाहूजी

विश्वविद्यालय के बी.एड. तथा एम.एड. के विद्यार्थियों का एक न्यादर्श चुनना चाहते हैं तब हम उनमें से कुछ स्नातकोत्तर उपाधि है। परन्तु इस स्तर के साथ एक और स्तर भी संबंधितहै, जैसे एम.एस. सी., एम.कॉम तथा एम.ए. इत्यादि। इन स्तरों में छात्र तथा छात्राएं दोनों ही सम्मिलित है, जैसे एम.एस.सी.एम. कॉम तथा एम.ए. इत्यादि। इन स्तरों में छात्र तथा छात्राएं दोनों ही सम्मिलित होते हैं। यही प्रक्रिया अथवा स्थिति स्नातक स्तर पर बी.एड. की स्थिति में भी होती है। जनसंख्या में यह स्तर उपलब्ध होते हैं, जबकि वर्गबद्ध न्यादर्शन में किसी मानदण्ड के आधार पर जनसंख्या का विभाजन किया जाता है। उपरोक्त वर्णन को हम रेखाचित्र से समझ सकते हैं।

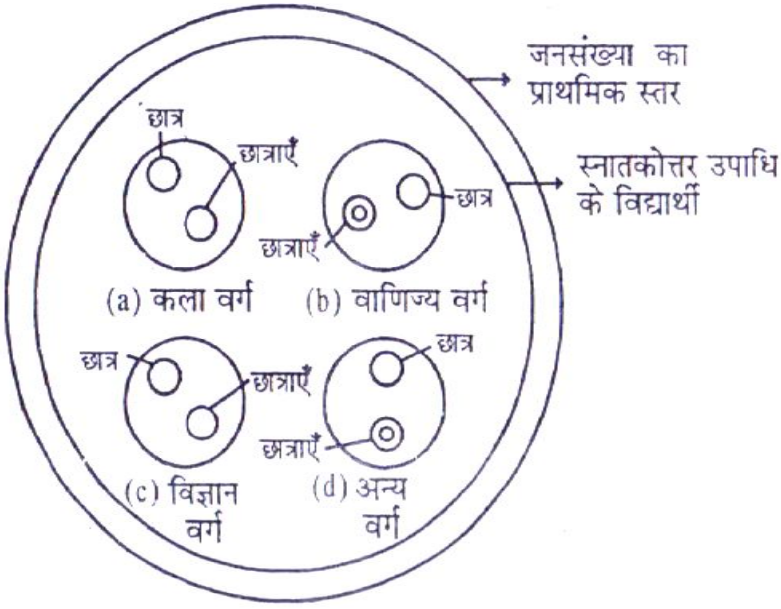

चित्र : बहु स्तरीय न्यादर्शन (Multi Stages Sampling)

बहुस्तरीय न्यादर्शन का महत्व

इसका वर्णन निम्नलिखित है -

1- इसमें विभिन्न स्तरों के कारण त्रुटि की संभावना कम रहती है।

2- यह एक वस्तुनिष्ठ विधि है।

3- इसका रूप सरल है।

11.8 सम्भाव्य न्यादर्शन की सीमाएं

अनेक विशेषताओं के साथ इसकी कुछ सीमाएं भी है, जिनका विवरण निम्नलिखित है -

1- यहां प्राप्तांकों का वितरण स्वतंत्र रूप से नहीं किया जा सकता है।

2- सम्भाव्य न्यादर्शन में प्रतिनिधित्व का निश्चिन्तता नहीं होती है।

3- प्राय: शैक्षिक परिस्थितियों में इस न्यादर्शन का चुनाव व्यवहारिक नहीं किया जा सकता है।

4- यहां किये गये सामान्यीकरण में त्रुटि रहने की संभावना रहती है।

11.9 सारांश

इस प्रकार प्रस्तुत न्यादर्श की विविध विधियों प्रकारों का उल्लेख करते हुए समझाने का प्रयास करता है | अनुसंधानकर्ता के समष्टि का प्रत्येक तत्व यह संभावना रखता है कि उसका भी चयन हो सकता है अथवा वह भी संपूर्ण समष्टि का प्रतिनिधित्व कर सकता है अर्थात उसमें संपूर्ण समष्टि के गुण है अत: उसके भी चयन होने की संभावना है।

11.10 शब्दावली

- **सम्भाव्य -** ऐसा चर जिसके चयन होने की हमेशा संभावना बनी रहे।
- **सोद्देश्य -** उद्देश्य युक्त प्रतिचयन

11.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

1 सम्भाव्य न्यादर्श किसे कहते है ?

2 सम्भाव्य न्यादर्श कितने प्रकार का होता है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न

निम्नलिखित को परिभाषित कीजिए

1. साधारण अनियमित न्यादर्शन
2. क्रमिक न्यादर्शन
3. वर्गबद्ध न्यादर्शन
4. बहुस्तरी न्यादर्शन
5. समूह न्यादर्शन

निबंधात्मक प्रश्न

1 सम्भाव्य न्यादर्शन के विभिन्न प्रकारों का विस्तार से वर्णन कीजिए।

2 सम्भाव्य न्यादर्शन की विशेषताओं एवं सीमाओं पर प्रकाश डालिये।

11.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली |

- बेस्ट, जे. डब्ल्यू (1963) : रिसर्च इन एजूकेश्न, नई दिल्ली, प्रेटिंय हॉल |
- गुड, सी.वी. एवं स्केट्स डी.ई. (1954): मेथड्स ऑफ रिसर्च, न्यूयार्क एलिशन सेन्चुरी |
- एच.के. कपिल (2001) : अनुसंधान विधियां, (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा |
- एफ.एन. करलिंगर (1964) : फाउन्डेशन ऑफ विवेहरियल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं बिंसटन इंक, न्यूयार्क |
- भट्नगार, आर.पी. (1995) : शिक्षा अनुसंधान : विधि एवं विश्लेषण लायल बुक डिपो, कॉलेज रोड, मेरठ |
- शर्मा, आर.ए. (1995) : शिक्षा अनुसंधान, मरेठ इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ |
- सुखिया एस.पी.महरोत्रा, पी.पी. एवं मेहरोत्रा आर.एन. (1973) : शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा |
- सिद्धु के एस.(1985) : मेथड्स ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, नई दिल्ली, स्टरलिंग पब्लिशर्स|
- रायजादा बी.एस. (1999) : शिक्षा के अनुसंधान के आवश्यक तत्व |
- शर्मा, अरविन्द कुमार (2008) : शोध प्रविधियां एवं सूचना प्रौद्योगिकीएस एस पब्लिकेशनस, नई दिल्ली |
- जैन, एम.के. (2007) : शोध विधियां, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली |

इकाई - 12

असम्भाव्य न्यादर्शन

Non-Probability Sampling

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 असम्भाव्य न्यादर्शन का अर्थ

12.4 असम्भाव्य न्यादर्शन की विशेषताएं

12.5 असम्भाव्य न्यादर्शन की सीमाएँ

12.6 असम्भाव्य न्यादर्शन के प्रकार

12.7 न्यादर्शन की त्रुटियाँ तथा उनका निस्तारण

12.8 न्यादर्शन की प्रमुख समस्यायें एवं उनके उपाय

12.9 सारांश

12.10 शब्दावली

12.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

12.12 संदर्भग्रंथसूची

12.1 प्रस्तावना

पिछले अध्याय में आपने संभाव्य न्यादर्शन के बारे में पढ़ा, जिसके अन्तर्गत समष्टि के प्रत्येक अवयव के चयन होने की बराबर संभावना रहती है। लेकिन कभी कभी अनुसंधान की प्रकृति ऐसी होती है कि हमें सम्पूर्ण समष्टि की आवश्यकता नहीं होती ऐसी स्थिति में अनुसंधानकर्ता उसी न्यादर्श की ओर ध्यान आकर्षित करता है जो उसके उद्देश्य की पूर्ति करता है इस प्रकार की न्यादर्श चयन प्रणाली असम्भाव्य न्यादर्शन के अन्तर्गत आती है। प्रस्तुत अध्याय में इसी का विस्तार से अध्ययन कर रहे हैं।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

- असम्भाव्य न्यादर्शन का अर्थ समझ सकेंगे।
- असम्भाव्य न्यादर्शन की विशेषताओं एवं प्रकार की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- सोद्देश्य प्रतिचयन आकस्मिक प्रतिचय की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- न्यादर्शन त्रुटियों एवं उनके निराकरण का अध्ययन कर सकेंगे।

12.3 असम्भाव्य न्यादर्शन का अर्थ

जब न्यादर्शन के चयन में संभावना का कोई भी स्थान शेष नहीं रहता है, तब ऐसी स्थिति में उसे असंभाव्य न्यादर्शन कहा जा सकता है। इसके अन्तर्गत न्यादर्शन तथा जनसंख्या एक ही साथ होते हैं। प्राय: स्थानीय अनुसंधान में इसका उपयोग किया जाता है। इस विधि के अन्तर्गत सामान्यीकरण संभव नहीं होता है।

12.3.1 यादृच्छिक तथा गैर - यादृच्छिक प्रतिचयन में अंतर

जैसा कि हमने ऊपर देखा, यादृच्छिक तथा गैर यादृच्छिक प्रतिचयन में आवश्यक अतर यह है कि यादृच्छिक योजना में प्रतिदर्श के सदस्यों का चुनाव यादृच्छिक विधि से किया जाता है जबकि गैर यादृच्छिक विधि में प्रतिदर्श के सदस्यों का चुनाव उनकी उपलब्धता और शोधकर्ता की सुविधा पर निर्भर करता है। अर्थात शोधकर्ता प्रतिदर्श में उन्हीं सदस्यों को रखते हैं जिन्हें वह आसानी से प्राप्त कर सकता है। इससे प्रतिदर्श में अधिक सदस्य शामिल किए जा सकते हैं तथा यादृच्छिक प्रतिचयन डिजाइनों की अपेक्षा शोध की लागत कम होती है। परन्तु ऐसे गैर यादृच्छिक प्रतिदर्श पर अनुमानिक सांख्यिकी नहीं लगाई जा सकती है इसलिए समष्टि के प्राचलों के प्राक्ककलन में त्रुटि की मात्रा का पता नहीं लगाया जा सकता। किफायत या यादृच्छिक चुनाव में मजबूरी के कारण ही हुई गैर यादृच्छिक योजनाओं का चुनाव करना पड़ता है।

12.4 असंभाव्य न्यादर्शन की विशेषताएं

इसकी मुख्य विशेषताओं का विवरण निम्नलिखित है -

1- इसके परिणाम अधिक हानिकारक नहीं होते हैं।

2- इसके अन्तर्गत समंकों के विश्लेषण के लिए सरल सांख्यिकीय का प्रयोग किया जाता है।

3- इसमें किसी सदस्य के चयन करने की संभावना का अस्तित्व नहीं होता है।

4- इस प्रकार के न्यादर्शन का चयन करना सरल होता है।

5- इसमें जनसंख्या तथा न्यादर्शन एक ही होता है।

6- यहां प्राप्तांकों का वितरण स्वतंत्र होता है। प्राप्तांकों का वितरण किसी भी विधि से किया जा सकता है।

12.5 असंभाव्य न्यादर्शन की सीमाएं

इसकी प्रमुख सीमाओं का विवरण निम्नलिखित है -

1 इसका प्रयोग स्थानीय स्तर पर ही होता है।

2 इसमें सामान्यीकरण संभव नहीं है।

3 इसके अन्तर्गत प्राप्तांकों के विश्लेषण में परासांख्यिकीय का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

4 यह अत्यधिक सरल होने के कारण इसमें कभी कभी अनुसंधानकर्ता लापरवाह हो जाता है।

5 इसका प्रयोग सीमित होता है।

12.6 असंभाव्य न्यादर्शन के प्रकार

इसके तीन प्रकार होते हं, जोकि निम्नलिखित है -

1 अंश न्यादर्शन

2 सोद्देश्य न्यादर्शन

3 आकस्मिक न्यादर्शन

इसका विस्तृत विवरण अग्रलिखित है -

1 अंश न्यादर्शन

इसके अन्तर्गत जनसंख्या का स्तरीकृत उसी प्रकार किया जाता है जैसा कि वर्गबद्ध न्यादर्शन में किया जाता है परन्तु अनुसंधानकर्ता प्रत्येक स्तर से आवश्यक अंश में इकाइयों का चुनाव अपने विवेक के अनुसार करता है।

2 सोद्देश्य न्यादर्शन

इसके अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता जनसंख्या के उस समूह की इकाइयों का अध्ययन करता है, जिससे कि वह अपने पूर्व के ज्ञान के आधार पर उस जनसंख्या का प्रतिनिधि है तो वह उसी विद्यालय के विद्यार्थियों का अध्ययन करेगा। कभी कभी ही समझे जाने वाले प्रतिनिधि समूह की वस्तुस्थिति प्राय: परिवर्तित हो जाती है तथा इस कारण से न्यादर्शन हो जाता है।

3 आकस्मिक न्यादर्शन

इसके अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता को जो कोई भी इकाई सुविधाजनक लगती है अथवा उपलब्ध होती है, वह उसी का अध्ययन कर लेता है। यहां पर अनुसंधानकर्ता की सुविधा मुख्य विचारणीय तथ्य होता है।

प्राय: असंभावना न्यादर्शन में जनसंख्या के मान का अनुमान लगाना अत्यधिक कठिन कार्य होता है। सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग यहां उचित नहीं होता है, परन्तु व्यवहार में प्राय: ऐसा ही किया जाता है। इस प्रकार निष्कर्ष निकालने तथा उनकी रिपोर्ट तैयार करने में अनुसंधानकर्ता को विशेष सावधानी बरतनी चाहिए।

12.6.1 सोद्देश्य प्रतिचयन (Purposive Sampling)

इस विधि की विशेषता यह है कि यहां शोधकर्ता अपने विवेक के अनुसार अपर प्रतिदर्शक समष्टि का प्रतिनिधिक बनाने के लिए जानबूझकर उसमें सोद्देश्य कुछ प्रकल्पित रूप से टिपिकल क्षेत्रों या समूहों को स्थान देते हैं। यह विधि दो स्थितियों में अधिक उपयोगी है।

अ) जबसमष्टि में उपक्षक्षक इकाइयाँ बहुत कम होती हैं ओर शोधकर्ता उनके आवश्यक विशेषताओं के बारे में अच्छी तरह जानता है जिससे प्रतिदर्श की इकाइयों का इकाई प्रकार चयन करके यह सुनिश्चित किया जा सके कि शोध की दृष्टि से समष्टि की सभी महत्वपूर्ण विशेषताएं उसके प्रतिदर्श में आ गई हैं। उदाहरण के लिए शोधकर्ता को यह पता कि अजमेर शहर में एक मेयो कॉलेज है जो अन्य स्थानीय कॉलेजों से अपनी विशेषताओं का कारण निराला है। इसलिए अजमेर शहर के छात्रों के किसी शोध में यदि यादृच्छिक विधि के प्रतिचयन में कॉलेज छूट जाता है तो उस अध्ययन की व्याख्या अधूरी रह जाएगी। सोद्देश्य प्रतिचयन विधि में इस कॉलेज को प्रतिदर्श में जानबूझकर शामिल किया जायेगा जिससे प्रतिदर्श समष्टि का अधिक प्रतिनिधिक बन सके।

ब) जब कुछ निर्णय शीघ्र लेने होते हैं -

सभी स्थिति में यादृच्छिक विधि से प्रतिचयन के लिए पर्याप्त समय नहीं होता है। सोद्देश्य प्रतिचयन विधि का सहारा लेना पड़ता है जिससे ऐसे अनुमान लगाए जा सके दुतगामी होने के साथ साथ उपयोगीभी हों।

विधि का मूल्यांकन

इस विधि का एक सकारात्मक पक्ष यह है कि यह समष्टि के बारे में उपलब्ध ज्ञान का भरपूर उपयोग करता है। अध्ययन के प्रमुख चरों पर अच्छा नियंत्रण रखता है। इसमें प्रतिदर्श समूहों की रचना में प्रयुक्त प्रदत्तों का आसानी से जांच की जा सकती है।

परन्तु यदि समष्टि में बहुत अधिक संख्या में उपलक्षक इकाइयाँ है तो यह विधि अधिक उपयोगी नहीं होगी। इसी प्रकार यदि नियंत्रण विवेकपूर्ण नहीं हुए या जिन विशेषताओं का मापन करना है, उनसे संबंद्धनहीं हुए तो इस विधि पर आधारित परिणाम भ्रामक हो सकते है, अक्सर ऐसे निरर्थक कारक जैसे सुविधा तथ्यों के प्राप्त करने में आसानी इत्यादि चयन के

निर्णय को प्रभावित करते हैं। यह स्थिति तब भी हो सकती है यदि समष्टि या उसके किसी स्तर से संबंधित सूचना अधूरी या त्रुटिपूर्ण है।

126.2 कोटा प्रतिचयन (Quota Sampling)

जैसा कि इसके नाम से ही विदित है, कोटा प्रतिचयन में साक्षात्कारकर्ताओं को कुछ व्यक्तियों का कोट या प्रतिशत दे दिया है जिस पर उसे प्रेक्षण करना है। साक्षात्कारकर्ता न केवल साक्षात्कार करता है या आंकड़े इक्ट्ठा करता है वह यह भी निश्चित करता है कि किन व्यक्तियों का साक्षात्कार करना है या कौन से आंकड़े इक्कट्ठे करने हैं। उसको केवल यह निर्देश होता है कि किस लोकेलिटी से कितने लोगों का साक्षात्कार करना है, कैसे करना है और उस लोकेलिटी के सदस्यों में सक्षात्कार किस प्रकार वितरित करना है जैसे कितने है कितने शहरी इत्यादि। इस प्रकार साक्षात्कारकर्ता को यह निर्देश होता है कि उसे अपने अनुपात में वे समष्टि में है। उसके बाद इस बात के लिए स्वतंत्र छोड दिया जाता है कि आवंटित घटकों के प्रतिदर्श के लिए निर्धारित संख्या में सदस्य किस प्रकार चुनता है।

विधि का मूल्यांकन

कभी कभी उन अवस्थाओं मे यह विधि काफी संतोषप्रद परिणाम प्रदान करती है,जहाँ भेंटकर्ता भलीभांति प्रशिक्षित होता है तथा प्रतिदर्श के तत्वों के चुनाव काफी सतर्कतापूर्वक करता है तथापि यह विधि अब इतनी लोकप्रिय नहीं रह गई जितना वह उस समय थी जब प्रतिचयन सिद्धान्त में इतनी अधिक आधुनिक प्रगति नहीं हुई थी क्योंकि -

अ) भेंटकर्ता को दी हुई स्वतंत्रता का दुरूपयोग होने की आशंका है। वह साक्षात्कार के लिए ऐसे व्यक्तियों को चुन सकता है जिनसे वह पूर्व परिचित है जिनके साथ वह आसानी से साक्षात्कार कर सकता है या जो ऐसी जगहों में रहते हैं जहां वह आसानी से पहुँच सकता है।

ब) इस प्रकार की उपर्युक्त पक्षपातपूर्ण चुनाव विधि से उत्पन्न अध्ययन परिणामों की त्रुटियों को आकस्मिक त्रुटियां नहीं कहा जा सकता और सामान्यत: उनके साथ यादृच्छिक चरों के समान व्यवहार नहीं किया जा सकता। इसलिए परिणामों में ऐसे विचलन उत्पन्न हो सकते हैं जिनका कोई लेखा जोखा नहीं दिया जा सकता।

स) संयोग से, ऐसी संभावना अधिक हो सकती है जिन लक्षणों के आधार पर भेंटकर्ता अपने प्रतिदर्श में किसी व्यक्ति या तत्व को शामिल करने के लिए लालायित होता है, उनका उन विशेषताओं से कोई संबंधनहीं हो जिनका उसको मापन करना है।

12.63 सुविधा या आकस्मिक प्रतिचयन (Convenience or Accidental Sampling)

यहाँ शोधकर्ता समूहों को समष्टि के प्रतिदशों के रूप में इसलिए चुनता है क्योंकि वे आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं या प्रतिदर्श के चुनाव में वह और अधिक स्वीकार्य विधि का प्रयोग नहीं कर सकता। पूरी पूरी कक्षाएं, टेलीफोन डायरेक्टरी से चुने हुए नाम या संस्थानों की लिस्ट से चुने नाम इत्यादि इसी प्रकार के समूह हैं जो प्रतिदर्श के लिए चुने जाते है। McAshan, 1964 p 66)

यह विधि किसी क्रियात्मक अनुसंधान में काफी स्वीकार्य हो सकती है क्योंकि इस प्रकार के अनुसंधान में जिस समूह पर शोध करना है उसके आगे किसी समष्टि पर उसको

सामान्यीकरण की आवश्यकता नहीं होती। यहाँ परिणामों के विश्लेषण के लिए अप्राचल सांख्यिकी का प्रयोग किया जा सकता है।

यह प्रतिचयन की सबसे कमजोर योजना विधि है परन्तु कदाचित सबसे अधिक प्रयोग में लाई जाती है। इसकी प्रतिरक्षा करना बहुत कठित है। परन्तु अनुभवी शोधकर्ता के हाथों में यह इतनी खराब नहीं है जितना इसको समझा जाता है। इसलिए सेवा कारलिंगर का मत है आकस्मिक प्रतिदर्शों से बचिए जब तक आप दूसरे प्रकार के प्रतिदर्श प्राप्त कर सकते हैं - यादृच्छिक प्रतिदर्श सामान्यत: काफी खर्चीले होते हैं तथा बडी मुश्किल से प्राप्त होते हैं - और यदि आप उनका प्रयोग करते ही हैं तो आंकड़ों के विश्लेषण और व्याख्या में अत्यधिक सावधानी बरतिए।''

126.4 विचारानुसार न्यादर्शन (Judgement Sampling) - विचारानुसार न्यादर्शन में जनसंख्या में से इकाइयों का चयन शोधार्थी अपने विचारनुसार करता है। चूंकि इसमें इकाइयों का चयन विचारपूवर्कक किया जाता है, इसलिए इसे विचारानुसार न्यादर्शन कहते हैं। इस तरह के न्यादर्शन की तकनीक का उपयोग उन अध्ययनों में किया जाता है जहां पर अध्ययन की जा रही जनसंख्या या समग्र का स्थिति निर्धारण कठिन होता है।

126.5 अन्य न्यादर्शन (Other Sampling)

अ) हिम कंदुक (Snowball Sampling) - हिम कंदुक न्यादर्शन में शोधार्थी अपने न्यादर्श में पहले उन्हें चयनित करता है जिन्हें वह जानता है या जो उपलब्ध होते हैं। उसके बाद न्यादर्श का आकार धीरे धीरे बढ़ता जाता है और जो उत्तरदाता पहले जुड़े थे वे अन्य संभावित उत्तरदाताओं के नाम बताते हैं। शोधार्थी अपने मानदण्डों के अनुरूप उन उत्तरदाताओं को अपने न्यादर्श में सम्मिलित करता जाता है जब तक कि अभीष्ट लक्ष्य प्राप्त न हो जाए। वस्तुत: शोधार्थी इस विधि में उत्तरदाताओं की छोटी संख्या की पहचान करता है और यह छोटी संख्या धीरे धीरे अन्य इकाइयों तक पहुंच जाती है। यह विधि उस अवस्था में सर्वाधिक उपयोगी है जब समग्र की कुल संख्या अज्ञात है उसकी इकाइयों तक सहज अभिगम न हो।

ब) संतृप्ति न्यादर्शन (Saturation Sampling) - संतृप्ति न्यादर्शन में समग्र की समस्त इकाइयों का अध्ययन किया जाता है। वस्तुत: जिस न्यादर्शन विधि में संपूर्ण समग्र या जनसंख्या का अध्ययन आवश्यक होता है उसे संतुप्ति न्यादर्शन कहते हैं। लेकिन कई तरह के अध्ययनों में संपूर्ण जनसंख्या में से एक भी इकाई छूटती है तो विकृत परिणाम प्राप्त होते हैं।

12.7 न्यादर्शन त्रुटियां तथा उनका निवारण

शैक्षिक अनुसंधान कार्यों में न्यादर्शन जनसंख्या का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं क्योंकि न्यादर्शन में यहां दो प्रकार की त्रुटियां पायी जाती है, ये निम्नलिखित हैं -

1- अनियमित त्रुटि

2- सुव्यवस्थिति त्रुटि

हम त्रुटियों को भी दो भागों में विभाजित कर सकते हैं , जो कि निम्नलिखित हैं -

अ) न्यादर्श त्रुटि

ब) मापना त्रुटि

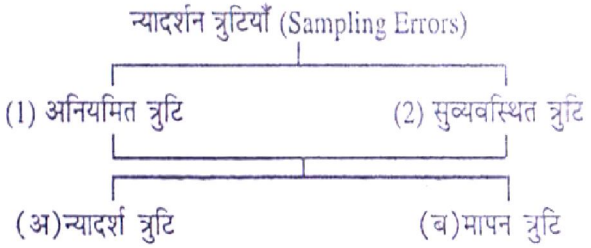

इन त्रुटियों को स्पष्ट रूप से समझने के लिए इन्हें चार वर्गों द्वाराभी प्रदर्शित किया जा सकता है, यह प्रदर्शन निम्नलिखित है -

	(1) अनियमित त्रुटि	(2) सुव्यवस्थित त्रुटि	
(अ) न्यादर्श	(अ)	(ब)	Sampling Error
(ब) मापन	(स)	(द)	Measurment Error
	Random	Systematic	

इन त्रुटियों का वर्ग के अनुसार व्यवस्थित विवरण निम्नलिखित रूप से है -

वर्ग अ - की त्रुटि तथा समाधान

इस प्रकार की त्रुटि को प्राय: समाधान नहीं किया जा सकता है । यहां न्यादर्शन का चयन जब अनियमित विधि अथवा रूप से किया जाता है तो सजातीय सदस्यों के चयन की संभावना रहती है । इसका त्रुटि का समाधान यह है कि इसमें बड़े न्यादर्श का ही चयन किया जाये ।

वर्ग ब की त्रुटि तथा समाधान

इस वर्ग की त्रुटि को न्यादर्श की त्रुटि कहा जाता है । इस प्रकार की त्रुटि का मुख्य कारण अनुसंधानकर्ताओं के सदस्यों के चयन की विधि का गलत चयन होना है । यह त्रुटि सामान्यीकरण को भी अवश्य ही प्रभावित करती है । अत: वर्ग अ तथा वर्ग ब न्यादर्श की त्रुटि का प्रदर्शन करती है । इस प्रकार का मुख्य समाधान अनुसंधानकर्ता के चयन में उपयुक्त विधि के चयन से हो सकता है ।

वर्ग स की त्रुटि का समाधान

इस वर्ग की त्रुटियां मुख्यत: मापन के कारण से ही होती है। मापन की त्रुटि न्यादर्श की त्रुटि से भिनन होती है क्योंकि दोनों का स्वरूप प्राय: पृथक होता है। यहां प्राय: कोई आदर्श मापन विधि नहीं होती है । इस कारण से वर्ग स की त्रुटि परीक्षण की विश्वसनीयता के कारण होती है, जिसे मापन त्रुटि कहा जाता है। एक बड़े न्यादर्श का चयन करके अनुसंधानकर्ता इस वर्ग तथा मापन की त्रुटियों को दूर कर सकता है। यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि बड़े न्यादर्श के सदस्यों के मापन की त्रुटि का योग सदा ही शून्य ही होता है।

वर्ग द की त्रुटि तथा समाधान

इस त्रुटि का मुख्य कारण व्यवस्थित रूप से मापन विधि है। किसी परीक्षण में यदि परीक्षा को देने वाला अधिक विद्यार्थियों को अधिक समय प्रदान करता है तो वह उनके प्राप्तांको पर अवश्य ही अपना प्रभाव डालेंगे। यहां निर्देशन में भी अन्तर होने के कारण प्राप्तांक अवश्य ही प्रभावित होते हैं । ऐसी परिस्थिति में न्यादर्श की सांख्यिकी, जनसंख्या के मापकों से अधिक होती है। यह त्रुटि का एक गंभीर रूप है। यह त्रुटि मापन तथा न्यादर्श दोनों को ही पूर्ण रूप से प्रभावित करती है। इस प्रकार की त्रुटि का मुख्य कारण व्यक्तिगबत पक्ष माना जाता है।

इसका मुख्य समाधान है कि अनुसंधानकर्ता को अपने तथा सदस्यों के व्यक्तिगत पक्ष पर अधिक ध्यान देना चाहिए तथा सदस्यों के चयन में सावधानी भी अवश्य बरतनी चाहिए।

12. 8 न्यादर्शन की प्रमुख समस्यायें एवं उनके उपाय

1- **आकार की समस्या -** आकार के छोटे या बड़े होने का प्रत्यक्ष संबंध समय, धन, शुद्धता की मात्रा तथा संगठन से है। बड़े बड़े निदर्शनों का संगठन कठिन होने के कारण वे अध्ययन कके उपयुक्त नहीं रहते। गुडे तथा हट्ट के अनुसार, ''एक न्यादर्शन को केवल प्रतिनिधिपूर्ण होना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उसमें पर्याप्तता भी होनी चाहिए। एक न्यादर्शन उस समय पर्याप्त होता है जब उसका आकार उसके लक्षणों की स्थिरता में विश्वास स्थापित करने के लिए पर्याप्त हो।'' छोटे आकार में पूर्ण प्रतिनिधित्व न होने की त्रृटि रहती है तथा बड़े आकार में भी कई कठिनाइयों जैसे श्रम, पैसा व समय इत्यादि की हैं। न्यादर्शन को निर्धारित करने में अग्रांकित तत्वों का प्रमुख प्रभाव पड़ता है -

अ) समग्र की प्रकृति - सजातीय इकाइयों वाले समग्र में थोड़े से न्यादर्शन से भी प्रतिनिधित्व पर्याप्त हो सकता है । विभिन्न इकाइयों वाले समग्र में बड़ा न्यादर्शन उपयुक्त रहता है।

ब) अध्ययन की प्रकृति - अध्ययन की प्रकृति के आधार पर ही न्यादर्शन का आकार निर्धारित करता होता है । अत: यदि इकाइयों के गहन अध्ययन की आवश्यकता अधिक समय के लिए न हो तो छोटे न्यादर्शन को अपनाना उपयुक्त होगा। यदि अध्ययन विस्तृत हो तो न्यादर्शन बड़ा चुनना होगा।

स) वर्गों की संख्या - यदि समग्र में विभिन्न प्रकार के वर्गों का समावेश है, उनमें काफी विविधतायें हैं तो स्वाभाविक रूप से ही न्यादर्शन का आकार बड़ करना पड़ेगा, परन्तु यदि वर्गों की संख्या कम है और साथ में इकाइयों में भी एकरूपता है तो छोटा न्यादर्शन उपयुक्त हो सकता है।

द) उपलब्ध साधन स्रोत - अनुसंधानकर्ता के पास समय, धनकार्यकर्ताओं, आवागमन के साधन व अन्य सामग्री पर्याप्त है तो बड़े न्यादर्शन का चुनाव किया जा सकता है, लेकिन इसके विपरित जितने साधन स्रोत कम होंगे, उस न्यादर्शन का आकार उसी अनुपात में छोटा होगा।

य) न्यादर्शन पद्धति - यदि दैव न्यादर्शन प्रणाली का प्रयोग करना है तो न्यादर्शन का आकार बड़ा होना चाहिए जिससे अधिक संख्या में विभिन्न गुणों वाली इकाइयों के चुनाव का अवसर प्राप्त हो सके। सविचार या वर्गीय न्यादर्शन से कम इकाइयों का चुनाव भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व कर सकता है।

र) परिशुद्धता की मात्रा - यद्यपि छोटे आकार के न्यादर्शन भी काफी विश्वसनीयता तथा प्रतिनिधित्वपूर्ण हो सकते हैं तथापितद सामान्यत: बड़े निदर्शन में परिशुद्धता की मात्रा अधिक होती है।

ल) चयनित इकाइयो की प्रकृति - न्यादर्शन का आकार इकाइयों की प्रकृति पर बहुत कुछ निर्भर करता है । यदि इकाइयां अधिक बिखरी हुई हैं तो उनसे सम्पर्क स्थापित करने में कठिनाई के अलावा समय व धन भी अधिक खर्च होता है । ऐसी स्थिति में यदि न्यादर्शन का आकार छोटा हो तो उत्तम रहेगा, इसके विपरीत अवस्था में न्यादर्शन का आकार बड़ा लेना चाहिए।

व) अध्ययन के उपकरण - यदि प्रत्येक के घर जाकर अनुसूचियां तैयार करनी है तो छोटा न्यादर्शन उपयुक्त रहेगा और यदि डाक द्वारा ही प्रश्नावलियां भेजनी हैं तो बड़ा न्यादर्शन भी उपयुक्त होगा। यदि प्रश्न छोटे संख्या में कम व सरल है तो बड़ा न्यादर्शन उपयुक्त रहता है अन्थता छोटे न्यादर्शन अपनाना चाहिए।

अत: न्यादर्शन के आकार के संबंध में कोई निश्चित नियम व सिद्धान्त नहीं है बल्कि परिस्थितियां ही उसके आकार को निर्धारित करती है। पार्टेन के मतानुसार, अनावश्यक खर्चे से बचने के लिए न्यादर्शन को काफी छोटा और असहनीय अशुद्धि से बचने के लिए उसे पर्याप्त बड़ा होना चाहिए।

2 **अभिनति या पक्षपातपूर्ण न्यादर्शन -** न्यादर्शन के चुनाव पर पक्षपात का प्रभाव पड़े से न्यादर्शन प्रतिनिधित्वूर्ण नहीं हो सकता, ऐसे न्यादर्शन को अभिनति या पक्षपातपूर्ण न्यादर्शन की संज्ञा दी जाती है । न्यादर्शन में अभिनति निम्नलिखित कारणों से उत्पन्न हो सकती है -

अ) आकार छोटा होने पर - न्यादर्शन का आकार छोटा होने के कारण बहुत सी इकाइयों को चुने जाने का अवसर नहीं मिलता है। ऐसी अनेक महत्वपूर्ण इकाइयां हो सकती है।

जिन्हें सम्मिलित नहीं किया गया है, ऐसी स्थिति में न्यादर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो पाता।

ब) उद्देदश्यपूर्ण न्यादर्शन - सविचार या उद्देश्यपूर्ण न्यादर्शन प्रणाली में अनुसंधानकर्ता को निदर्शनों के चुनने की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। फलत: पक्षपात या प्रवेश सरल हो जाता है दूसरी स्थिति यह भी है कि अनुसंधानकर्ता जिन इकाइयों से सम्पर्क स्थापित करने में कठिनाई महसूस करता है उनको छोड़ देता है और वह केवल उन्हीं के न्यादर्शन में स्थान देता है जो कठिन व असुविधाजनक न हो, परन्तु ऐसी स्थिति में भी न्यादर्शन निष्पक्ष नहीं हो पाता है।

स) दोषपूर्ण वर्गीकरण - वर्गीय न्यादर्शन विधि के अंतर्गत दोषपूर्ण वर्गीकरण न्यादर्शन को अभिनति या पक्षपातपूर्ण बना देता है। यदि वर्ग अस्पष्ट व असमान होंगे तो न्यादर्शन पक्षपतापूर्ण हो जाएगा। इसी प्रकार यदि वर्ग में असमान संख्या में इकाइयां है और उन्हें न्यादर्शन में समान रूप प्राप्त नहीं है तो वह न्यादर्शन भारयुक्त भी हो जायेगा। इकाइयों को गलत वर्ग में रखने से चुनाव भी अनुचित रूप से होता है।

द) अपूर्ण स्रोत सूची - यदि साधन सूची अधूरी, पुरानी या अनुपयुक्त है तो स्वभावत: न्यादर्शन का चुनाव अनुसंधानकर्ता की इच्छानुसार होगा । इससे न्यादर्शन अभिनतिपूर्ण हो जाता है।

य) कार्यकर्ताओं द्वारा चयन - जब इकाइयों के चयन की अनुमति कार्यकर्ताओं को दी जाती है तो उनकी लापरवाही के कारण चयन में पक्षपात प्रवेश कर जाता है। यदि इकाइयों में एकरूपता पाई जाती है तो इसकी सभावना कम रहती है अन्यथा न्यादर्शन अभिनतिपूर्ण होगा क्योंकि इकाइयों का चुनाव कार्यकर्ताओं ने अपनी इच्छानुसार किया है।

र) सुविधानुसार न्यादर्शन - इसके अंतर्गत अनुसंधानकर्ता को पूर्ण छूट रहती है कि वह सुविधानुसार निदर्शनों का चुनाव कर सकता है, ऐसी स्थिति में न्यादर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो पाता और उसमें पक्षपात का प्रवेश होना स्वाभाविक हो जाता है।

ल) दोषपूर्ण दैव न्यादर्शन - त्रुटिपूर्ण ढंग से इस पद्धति को प्रयोग में लाने से मिथ्या झुकाव का प्रवेश अनजाने में ही हो जाता है। यदि गोलियों को बनाने में असावधानी बरती गयी जो गोलियां छोटी बडी हो सकती है, क्योंकि बड़ी गोली हाथ में जल्दी आती है। इसी प्रकार पर्चियों को अच्छी तरह हिलाकर या घुमाकर नहीं मिलाया गया तो उपर की पर्ची आ सकती है जो सबका प्रतिनिधित्व नहीं करती है।

3 **विश्वसनीयता -** परीक्षण की समस्या - यदि न्यादर्शन में किसी तरह पूर्वाग्रह मिथ्या - झुकाव आने की आशंका हो तो उसका परीक्षण किया जा सकता है। इसके तीन तरीके हैं - 1 समानान्तर, समग्र से तुलना तथा 3 न्यादर्शन का न्यादर्शन।

1- **समानान्तर न्यादर्शन** - इसका अर्थ यह है कि उसी समग्र से उसी आकार का किन्तु किसी दूसरी प्रणाली से न्यादर्शन ले लिया जाये तथा उसकी मूल न्यादर्शन से तुलना की जाये। यह तुलना सांख्यिकीय रीतियों से की जाती है। यदि इनमे बहुत अधिक अन्तर आ जाता है तो मूल न्यादर्शन को दोषपूर्ण मानकर रद्द कर देना चाहिए।

2- **समग्र से तुलना** - शोधकर्ता अपने पूर्व ज्ञान या अनुभव के आधार पर न्यादर्शन की तुलना करके अपना निर्णय दे सकता है। पर्याप्त समानता होने पर उसे कार्यकर न्यादर्शन माना जा सकता है।

3- **न्यादर्शन का न्यादर्शन** - इसमें मूल न्यादर्शन में से कुछ इकाइयों का चयन दैव न्यादर्शन से कर लिया जाता है। इस न्यादर्शन की समग्र से लिये हुए मूल न्यादर्शन के साथ तुलना की जाती है। मूल न्यादर्शन से उप न्यादर्शन की तुलना करके देख लिया जाता है कि वह कहां तक विश्वसनीय है।

4- **सामाजिक** - राजनीतिक मानकों के अध्ययन की समस्या - अनेक राजनीतिक विषयों एवं समस्याओं की तरह न्यादर्शन पद्धति से सामाजिक एवं राजनीतिक मानकों का भी अध्ययन नहीं किया जा सकता। जिन इकाइयों को न्यादर्शन में शामिल किया जाता है, वे अपने संकुचित क्षेत्र, व्यवहार एवं कार्य को ही समझती हैं। समझत संगठन या व्यवस्था के उद्देश्यों, लक्ष्यों या नैतिक मानकों के विषय में उनका ज्ञान बहुत सीमित होता है। यही बात बड़े समूहों, नौकरशाही संगठनों आदि पर भी लागू होती है। पीटर ब्लाउ, डाल्टन, गोल्डनर आदि ने संगठनों का अध्ययन करने में संभावना न्यादार्शों का प्रयोग नहीं किया है। इसका एक कारण, सोबर्ज एवं नैट के अनुसार यह हो सकता है कि वे सभी संगठन प्राय: अलोकतंत्रात्मक ढंग से गठित होते तथा काम करते हैं। विभिन्न स्तर पर ज्ञान, अधिकार, दायित्व आदि असमान ढंग से बिखरे होते हैं। केवल शीर्षस्थ व्यक्ति या नेता ही संगठनों को समग्र दृष्टिकोण से देख पाते हैं। अन्य लोगों के लिए निष्पक्ष होकर तथा मानकीय दृष्टि से समग्र संगठन को देखना कठिन होता है। यह कार्य केवल एक महत्वपूर्ण एवं केन्द्रीय व्यक्तियों को सूचनादाता बनाकर ही किया जा सकता है। ऐसे महत्वपूर्ण व्यक्तियों का पता न्यादर्शन से नहीं लगाया जा सकता है। ऐसी समस्याओं का समाधान अन्य प्रविधियों को अपनाकर किया जाना चाहिए, किन्तु राजनीतिक तथ्य इतने समरूप, सरल, मूर्त अथवा बोधगम्य नहीं हैं कि इन पद्धतियों एवं प्रविधियों मात्र से ही समझ लिये जाएं। अनेक राजनीतिक तथ्यों, इकाइयों आदि का गहन अध्ययन करना आवश्यक होता है।

अत: यह आवश्यक हो जाता है कि कुछ विशेष प्रयत्नों के द्वारा न्यादर्शन की विश्वसनीयता की जांच अवश्य की जाए । इस हेतु कुछ महत्वपूर्ण उपाय निम्नलिखित हैं -

1- **समानान्तर न्यादर्शन** - प्राप्त न्यादर्शन कहाँ तक विश्वसनीय है, इसकी परीक्षा करने के लिए एक समानान्तर उप न्यादर्शन को प्राप्त करना अक्सर बहुत उपयोगी होता है । यदि समानान्तर न्यादर्शन के अन्तर्गत आने वाली इकाइयों की विशेषताएं मुख्य न्यादर्शन से संबंधितइकाइयों की विशेषताओं से मिलती जुलती होती है तो न्यादर्शन को विश्वसनीय माना जा सकता है ।

2- **समग्र से तुलना** - समग्र को विभिन्न इकाइयों की सूची बनाते समय अध्ययनकर्ता समग्र की अनेक विशेषताओं को ज्ञात कर लेता है | उदाहरण के लिए, समग्र में स्त्री -पुरूषें के अनुपात, व्यावसायिक स्वरूप जाति विभाजन तथा परिवार का स्वरूप आदि इसी प्रकार की कुछ प्रमुख विशेषताएं है । किसी भी विधि से प्राप्त न्यादर्शन से संबंधित इकाइयाँ यदि अवलोकन पर आधारित विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करती हैं तो न्यादर्शन को विश्वसनीय माना जा सकता है ।

3- **महत्व का परीक्षण** - न्यादर्शन की विश्वसनीयता की जांख् करने के लिये यह तरीका सबसे कम वैज्ञानिक होते हुए भी व्श्यावहारिक जीवन में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है । न्यादर्शन के उपयोग द्वारा प्राप्त सूचनाओं का जब प्रथम स्तर पर प्रमापीकरण किया जाता है, उस समय अध्ययनकर्ता तनिक सी अन्तदृष्टि द्वारा यह ज्ञात कर सकता है कि प्राप्त सूचनाएं किस सीमा तक उपयोगी हैं । इस प्रकार यदि सूचनायें अवलोकन के आधार पर भी सही प्रतीत होती हैं तो न्यादर्शन की विश्वसनीयता स्पष्ट हो जाती है ।

12.9 सारांश

इस प्रकार आपने इस अध्याय में यह जाना कि किसी विशिष्ट उद्देश्य से किये जाने वाले अनुसंधानों में जब सम्पूर्ण समष्टि की आवश्यकता नहीं होती है तब सोद्देश्य, आकस्मिक एवं काटा प्रतिचयन किस तरह से प्रभावी रहते है । साथ ही अपने स्नोबाल एवं संतुष्टि न्यादर्शन के बारे में जानकारी प्राप्त की।

12.10 शब्दावली

- **असम्भाव्य न्यादर्शन :** यह प्रतिदर्शन/न्यादर्शन की एक ऐसी विधि है जिसमें समष्टि का कौन सा सदस्य प्रतिदर्श में सम्मिलित किया जाएगा यह ज्ञात नहीं होता है ।

12.11 स्वमूल्यांकनहेतु प्रश्न

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

1 असामान्य प्रतिदर्शन किसे कहते हैं?

2 असामान्य प्रतिदर्शन कितने प्रकार का होता है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न

निम्नलिखित को परिभाषित कीजिए

1 सोद्देश्य प्रति चयन 2 कोटा प्रतिदर्शन 3 आकस्मिक प्रतिदर्शन 4 हिमकंदुक प्रतिदर्शन

निबंधात्मक प्रश्न

1- न्यादर्शन का अनुसंधान में क्या महत्व है? संक्षेप में लिखें।
2- न्यादर्शन के अर्थ को सामान्य शब्दों में समझाइए। अपने अर्थ के परिपेक्ष्य में किसी परिभाषा का उल्लेख करें।
3- न्यादर्शन की अनिवार्य अवधारणा में कौन कौन सी है ? व्याख्या करें।
4- न्यादर्शन का आयोजन कितने चरणों में किया जाता है ? प्रत्येक का संक्षिप्त वर्णन करें।
5- एक श्रेष्ठ न्यादर्शन की क्या क्या विशेषताएं होती है ? अपने शब्दों में लिखें।
6- असम्भाव्य न्यादर्शन का अर्थ, विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
7- असम्भाव्य न्यादर्शन के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिए।
8- न्यादर्शन की प्रमुख समस्यायें एवं इनके उपायों का वर्णन कीजिए।

12.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियां, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली |
- बेस्ट, जे. उस्लयू (1963) : रिसर्च इन एजूकेश्न, नई दिल्ली, प्रेटिंय हॉल |
- गुड, सी.वी. एवं स्केट्स डी.ई. (1954): मेथड्स ऑफ रिसर्च, न्यूयार्क एलिशन सेन्चुरी |
- एच.के. कपिल (2001) : अनुसंधान विधियां, (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा |
- एफ.एन. करलिंगर (1964) : फाउन्डेशन ऑफ विवेहरियल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं बिंसटन इंक, न्यूयार्क |
- भटनागर, आर.पी. (1995) : शिक्षा अनुसंधान : विधि एवं विश्लेषण लायल बुक डिपो, कॉलेज रोड, मेरठ |

- शर्मा, आर.ए. (1995) : शिक्षा अनुसंधान, मरेठ इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ |
- सुखिया एस.पी.महरोत्रा, पी.पी. एवं मेहरोत्रा आर.एन. (1973) : शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा |
- सिद्धु के एस.(1985) : मेथड्स ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, नई दिल्ली, स्टरलिंग पब्लिशर्स|
- रायजादा बी.एस. (1999) : शिक्षा के अनुसंधान के आवश्यक तत्व |
- शर्मा, अरविन्द कुमार (2008) : शोध प्रविधियां एवं सूचना प्रौद्योगिकीएस एस पब्लिकेशनस, नई दिल्ली |
- जैन, एम.के. (2007) : शोध विधियां, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली |

इकाई - 13

चर का अर्थ एवं उसके प्रकार

Meaning of Variables and their types

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 चर का अर्थ

13.4 चरों की प्रकृति

13.5 चरों के प्रकार

13.6 स्वतंत्र चर

13.7 आश्रित चर

13.8 संगत चर या बहिरंग चर

13.8.1 प्रयोज्य संगत चर

13.8.2 परिस्थितिगत संगत चर

13.8.3 अनुक्रम संगत चर

13.9 चरों के कुछ अन्य प्रकार

13.10 सारांश

13.11 शब्दावली

13.12 निबन्धात्मक प्रश्न

13.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

13.1 प्रस्तावना

चरों के मध्य अंतर्संबंध को जानना ही शोध कहलाता है | चर वह है जिसके मूल्यों में स्थिरता ना हो अर्थात जिसमें बदलाव हो, जिसका स्वभाव परिवर्तित होने वाला हो | चर को मापनीय होना आवश्यक है। चरों का मापन परिमाणात्मक रूप में भी हो सकता है, गुणात्मक रूप में भी। चरों को तीन वर्गो में विभक्त किया जा सकता है- स्वतंत्र चर, आश्रित चर तथा बहिरंग या संगत चर।

किसी भी वैज्ञानिक शोध में चर , जिसे परिवर्त्य (variable) के नाम से भी जानते हैं, अपना विशेष महत्व रखता है। इसके बिना कोई भी प्रायोगिक अध्ययन असंभव है। अतः आपको चर तथा इसके प्रकार को समझना आवश्यक है | चरों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने से आपको यह लाभ होगा कि आप विभिन्न चरों का वर्गीकरण कर किसी शोध में उपयुक्त चरों का चयन करने एवं आवश्यक

चर का हस्तचालन करने में सक्षम हो सकेंगे। प्रस्तुत इकाई में आप चर का अर्थ एवं प्रकार, किसी शोध में चर की आवश्यकता, आश्रित चर एवं स्वतंत्र चर में अन्तर, स्वतंत्र चर क हस्तचालन के तरीके आदि पर विशेष जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

13.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप -

- चरों का अर्थ एवं महत्व बतला सकेंगे।
- स्वतंत्र एवं आश्रित चरों का अर्थ एवं महत्व बतला सकेंगे।
- स्वतंत्र एवं आश्रित चरों मेंअंतर कर सकेंगे।
- स्वतंत्र चरों के विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- बहिरंग चरों के विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट कर सकेंगे।

13.3 चर का अर्थ (Meaning of Variables)

चर को परिवर्त्य (Variable) भी कहते हैं | परिवर्त्य, किसी वस्तु, व्यक्ति, चीज या जीव का वह गुण होता है जिसके मान में परिवर्तन संभव है। शैक्षिक शोधों अथवा अनुसंधानों तथा प्रयोगों में व्यवहृत होने वाले चरों के कई प्रकार होते हैं | जिनमें मुख्य हैं- स्वतंत्र चर (Independent Variable, IV), आश्रित चर (Dependent Variable, DV), असंबद्ध चर (Extraneous Variable, EV) आदि। चर का मान परिवर्तनीय होता है। दूसरे शब्दों में, किसी वस्तु, घटना, व्यक्ति या किसी जीव का वह गुण जिसे मापा जा सके, चर कहलाता है। चर में दो विशेषतायें होती हैं -

1. उसमें मात्रात्मक परिवर्तन संभव हो, तथा
2. उस परिवर्तन को मापा जा सके

जैसे अधिगम या सीखना एक चर है क्योंकि उसकी मात्रा एक चर है क्योंकि इसकी मात्रा में परिवर्तन होता रहता है | कभी सीखने की मात्रा ज्यादा हो सकती है तो कभी कम। सीखने की मात्रा मापनीय है। इसी प्रकार अभिवृत्ति, अभिक्षमता, बुद्धि, समायोजन, रूचि इत्यादि शैक्षिक शोध क्षेत्र में चरों के उदाहरण हैं।

दूसरे शब्दों में, वैज्ञानिक शोध में वैसे तथ्यों का संकलन आनुभविक रूप से किया जाता है जिसकी जाँच की जा सके, जिसे सत्यापित किया जा सके। यही तथ्य हमारे ज्ञान-भण्डार में वृद्धि करता है और सिद्धांत के निर्माण में सहायक होता है। तथ्य तक पहुँचने के लिए वैज्ञानिक प्रक्रियाओं का सहारा लिया जाता है। वैज्ञानिक प्रक्रिया वह प्रक्रिया है जिसमें नियंत्रित परिस्थिति में घटनाओं का क्रमबद्ध निरीक्षण करते हैं। क्रमबद्ध निरीक्षण से तात्पर्य है कि घटना जिस रूप में घटित हो उस रूप में उसका अध्ययन हो। यानी, घटना का अध्ययन जैसे-तैसे न करके यह देखा जाये कि उस पर किन-किन कारकों का प्रभाव पड़ रहा है और किन-किन कारकों को नियंत्रित रखने की आवश्यकता है। एक शोधकर्ता जब वैज्ञानिक शोध करता है तो वह एक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करता है जिसमें वैसे सभी कारक, जिनके अध्ययन की जरूरत नहीं है, नियंत्रित कर लिए जाते हैं और सिर्फ उन्हीं कारकों में बदलाव किया जाता है या बदलाव का निरीक्षण किया जाता है जिनका प्रभाव शोधकर्ता देखना चाहता है। ये सभी कारक व्यावहारिक विज्ञान में चर की कोटि में आते हैं क्योंकि चर का मतलब ही

होता है- जिसमें बदलाव हो, जो स्थिर न रहे या जिसका स्वभाव परिवर्तित होने वाला हो । यही कारण है कि चर को परिवर्त्य भी कहते हैं । चर के सम्बन्ध में एक और आवश्यक बात याद रखना चाहिए कि चर सिर्फ बदलते रहने वाला ही नहीं होता, बल्कि यह मापने योग्य भी होता है । इसीलिए कहा जाता है कि चर किसी वस्तु, व्यक्ति या चीजों का वह गुण है जिसे मापा जा सके। यानी, जो मापने योग्य नहीं है, वह चर नहीं कहला सकता। मनोविज्ञान में अवगम, अधिगम, संवेग, बुद्धि, व्यक्तित्व, व्यक्तित्व के विभिन्न आयाम या गुण, व्यक्तियों के अन्तर्सम्बन्ध, यौन, शिक्षा, सामाजिक-आर्थिक स्तर विभिन्न सामाजिक पहलू आदि चर के कुछ उदाहरण हैं । एक शोधकर्ता अभिप्रेरणा का अधिगम पर प्रभाव देखना चाहता है तो वह अभिप्रेरणा के विभिन्न स्तर निर्धारित कर उसे में माप सकता है तथा इसके विभिन्न स्तरों का क्या प्रभाव व्यक्ति के अधिगम पर पड़ता है इसे भी अधिगम की माप कर बता सकता है । अतः अभिप्रेरणा और अधिगम दोनों ही चर कहलायेंगे, परन्तु दोनों ही चरों का प्रकार अलग-अलग होगा जिसकी चर्चा हम आगे करेंगे ।

चरों का मापन दो तरह से हो सकता है-परिमाणात्मक रूप में और गुणात्मक रूप में । यह चरों के स्वरूप पर निर्भर करता है । कुछ चर ऐसे होते हैं जिनका मापन सिर्फ परिमाणात्मक रूप से ही संभव है, जैसे- आयु, प्रयास, रक्तचाप, नाड़ी-गति, बुद्धि-लब्धि, लम्बाई, भार, तापमान आदि। दूसरी तरफ, कुछ चर ऐसे होते हैं जिन्हें गुणात्मक रूप से मापा जाता है, जैसे- सेक्स, धर्म, जाति, भाषा आदि। मनोविज्ञान, शिक्षा, योग, चिकित्सा आदि के क्षेत्र में प्रयुक्त होने वाले चर ज्यादातर परिमाणात्मक श्रेणी के होते हैं ।

13.4 चर की प्रकृति (Nature of Variable)

चरों की परिभाषा के आधार पर इनकी प्रकृति को निम्न प्रकार से समझा सकता है -

1. चर वह विशेषता या गुण है जिसके कई मूल्य हो सकते हैं ।
2. किसी प्रयोग परिस्थिति या नियंत्रित अवस्थाओं के एक अंश को चर कहते हैं ।
3. किसी प्राणी, वस्तु या घटना के मापने योग्य गुण को चर कहा जा सकता है ।
4. चर वह घटना या अवस्था है, जिसके भिन्न-भिन्न मूल्य हेा सकते हैं, प्रयोगों में इस घटना या अवस्था को मापा जा सकता है तथा उसमें मात्रात्मक परिवर्तन हो सकता है ।
5. चर में मापे जाने का गुण मौजूद होता है ।
6. चर परिवर्तनशील होता है ।
7. चर में प्रभावित करने तथा प्रभावित होने का गुण पाया जाता है ।

अभ्यास प्रश्न

1. चर को परिभाषित कीजिये |
2. चर की प्रकृति का संक्षेप वर्णन कीजिये |
3. चर की प्रकृति के आधार पर उदाहरणों को लिखिए |

13.5 चरों के प्रकार (Types of Variable)

मनोविज्ञान, शिक्षा, योग आदि व्यावहारिक विज्ञान के क्षेत्र में जो शोध होते हैं उनमें कई तरह के चरों का प्रयोग होता है। कुछ चर तो ऐसे होते हैं जिनके प्रभाव का अध्ययन करना शोधकर्ता का उद्देश्य होता है। दूसरे चर ऐसे होते हैं जिनका अध्ययन शोधकर्ता विस्तृत रूप में करना चाहता है और इन पर अन्य चरों के प्रभाव का अवलोकन करना उसका उद्देश्य होता है। प्रभाव डालने वाले और प्रभावित होने वाले चरों के अतिरिक्त भी कुछ ऐसे चर होते हैं जिनके प्रभाव को रोकने के लिए शोधकर्ता उन्हें नियंत्रित कर लेता है। चरों की इन्हीं विशेषताओं के परिप्रेक्ष्य में उन्हें निम्नलिखित तीन वर्गों में विभक्त किया गया है-

1. स्वतंत्र चर
2. आश्रित चर
3. संगत चर या नियंत्रित चर

13.6 स्वतंत्र चर (Independent Variable)

स्वतंत्र चर वह चर होता है जिसमें प्रयोगकर्ता अपनी तरफ से जोड़-तोड़ (Manipulation) या परिवर्तन करता है। स्वतंत्र चर किसी भी प्रभाव या घटना के लिए कारण (cause) की भूमिका में होता है। दूसरे शब्दों में, स्वतंत्र चर वह चर है जिसके मूल्यों (Values) या मात्राओं में प्रयोगकर्ता परिवर्तन करता है और इस परिवर्तन का प्रभाव आश्रित चर (dependent variables) पर क्या पड़ता है , यह देखना है। किसी भी शैक्षिक या मनोवैज्ञानिक शोध का मुख्य उद्देश्य स्वतंत्र चर के प्रभावों का अध्ययन करना ही है। उदाहरण के लिए यदि आप किसी छात्र के अकादमिक उपलब्धि (Academic Achievement) पर चिंता (Anxiety) का प्रभाव देखना चाहते हैं । यहां 'अकादमिक उपलब्धि' प्रभाव है जिसे हम आश्रित चर भी कहते हैं तथा उस प्रभाव (effect) के लिए चिंता एक कारण (cause) है। जिसे हम स्वतंत्र चर की श्रेणी में रखते हैं। अत: प्रभाव को आश्रित चर तथा कारण को स्वतंत्र चर कहते हैं।

दूसरे शब्दों में वैसा चर जिसके प्रभाव का अध्ययन शोधकर्ता करना चाहता है और अध्ययन करने हेतु उसमें अपनी इच्छानुसार जोड़-तोड़ या हस्तचालन करना है, स्वतंत्र चर कहलाता है। अर्थात , शोधकर्ता किसी प्रयोगात्मक परिस्थिति में जिस चर के मूल्यों में/मात्राओं में परिवर्तन करके उस परिवर्तन का दूसरे चर पर असर देखना चाहता है, उसे स्वतंत्र चर कहते हैं। इसे एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। मान लीजिए कि कोई शोधकर्ता कार्य के घंटे का प्रभाव कर्मचारियों के कार्य तनाव पर देखना चाहता है। इस अध्ययन में शोधकर्ता पहले कर्मचारियों का कार्य तनाव उपयुक्त मनोवैज्ञानिक परीक्षण द्वारा माप लेगा, फिर कर्मचारियों को अलग-अलग कार्य अवधि में कार्य करने को कहेगा तथा पुनः कुछ दिनों बाद उसके कार्य तनाव का मापन करेगा। यहाँ कार्य के घंटे एक स्वतंत्र चर के रूप में कार्यरत है क्योंकि शोधकर्ता उसका हस्तचालन कर रहा है। शोधकर्ता नित्य 6 घंटे, 7 घंटे, 8 घंटे की कार्य अवधि तय कर फिर कर्मचारियों के समान समूहों को अलग-अलग अवधियों (उपर्युक्त तय घंटों) में कुछ दिनों तक कार्य करवा कर देखेगा कि कितने घंटे नित्य कार्य करने पर कार्य तनाव कम होता है । जिस स्वतंत्र चर में प्रयोगकर्ता जोड़-तोड़ करता है उसे प्रयोगात्मक चर भी कहते हैं।

स्वतंत्र चर को कारणीय चर (Causative Variable), प्रयोगात्मक चर (Experimental Variable), स्थिर चर (Constant Variable) तथा नियंत्रित चर (Controlled Variable) भी कहते हैं।

स्वतंत्र चर की विशेषतायें निम्नवत हैं

i. स्वतंत्र चर अपना प्रभाव किसी दूसरे चर पर डालता है।
ii. स्वतंत्र चर किसी घटना का कारण होता है।
iii. स्वतंत्र चर किसी परिणाम की पूर्ववर्ती घटना होती है।
iv. स्वतंत्र चर को प्रयोगकर्ता अपनी आवश्यकतानुसार परिचालित कर सकता है।

हस्तचालन के तरीके के आधार पर प्रयोगात्मक चर या **स्वतंत्र चर** दो प्रकार के होते हैं-

A. **Type E स्वतंत्र चर (Type E Independent Variable)-** जब प्रयोगकर्ता स्वतंत्र चर में प्रत्यक्ष (Directly) रूप से परिवर्तन या जोड़-तोड़ करता है तो इसे Type E IV कहा जाता है।
B. **Type S (Type S Independent Variable)-** वैसे चर जिसमें जोड़-तोड़ या परिवर्तन प्रयोगकर्ता सीधे न करके चयन द्वारा करता है उसे Type S IV कहते हैं। जैसे- लिंग, उम्र, धर्म आदि Type S स्वतंत्र चर के उदाहरण हैं।

जब प्रयोगकर्ता किसी प्रयोगात्मक परिस्थिति में किसी स्वतेंत्र चर में जोड़-तोड़ सीधे या प्रयोगात्मक ढंग से करता है तो इसे 'टाइप-ई' स्वतंत्र चर कहते हैं। इसे सक्रिय स्वतंत्र चर भी कहते हैं। उपर्युक्त उदाहरण में कार्य की अवधि का हस्तचालन (जोड़-तोड़) प्रयोगकर्ता सीधे करता है, जैसे - नित्य 6 घंटे की अवधि, 7 घंटे की अवधि, घंटे की अवधि। इसी प्रकार, सीखने की प्रक्रिया पर विषय या पाठ की लम्बाई का प्रभाव देखना, जैसे- पाँच शब्दों की सूची, दस शब्दों की सूची, बीस शब्दों की सूची आदि। इस तरह का जोड़-तोड़ प्रयोगात्मक ढंग से सीधे प्रयोगकर्ता अपनी योजनानुसार कर लेता है, अतः यह 'टाइप-ई' स्वतंत्र चर कहलाता हैं।

'टाइप-एस' स्वतंत्र चर वैसे चर को कहा जाता है जिसमें प्रयोगकर्ता जोड़-तोड़ सीधे न करके चयन द्वारा करता है। इसे गुण भी कहा जा सकता है। यदि प्रयोगकर्ता किसी आश्रित चर पर व्यक्ति की बुद्धि, अभिक्षमता, जाति, धर्म, आयु, यौन आदि का प्रभाव देखना चाहे तो इनमें से किसी भी चर का स्वतंत्र चर के रूप में प्रयोग एवं इनका हस्तचालन प्रयोगात्मक ढंग से या सीधे नहीं किया जा सकता क्योंकि एक ही व्यक्ति या समूह की जाति, धर्म, आयु, सेक्स आदि में प्रयोगकर्ता अपनी इच्छानुसार परिवर्तन नहीं ला सकता। ऐसी परिस्थिति में वह प्रयोज्यों का दो समूह बनायेगा-एक समूह में एक तरह की जाति, धर्म या आयु आदि वाले प्रयोज्य होंगे जबकि दूसरे समूह में इससे भिन्न जाति , धर्म या आयु आदि वाले प्रयोज्य होंगे। स्पष्ट है कि यहाँ प्रयोगकर्ता द्वारा दोनों ही समूह का निर्माण चयन पर आधारित होगा न कि उसमें सीधे या प्रयोगात्मक रूप से परिवर्तन करके, जैसे कि ऊपर 'टाइप-ई' के केस में किया गया।

स्वतंत्र चर 'ई' टाइप का हो या 'एस' टाइप का, प्रयोगकर्ता ऐसे चरों को कारण के रूप में व्यवहार करके उनके प्रभावों का पता लगाने का प्रयास करता है। अतः हम कह सकते हैं कि स्वतंत्र चर ऐसा

चर है जिसे शोधकर्ता प्रयोगात्मक परिस्थिति में कभी तो सीधे हस्तचालित करके तो कभी चयन के द्वारा हस्तचालित करके इनके प्रभाव का अध्ययन आश्रित चर पर करता है। डी. एमैटो (1970) नामक मनोवैज्ञानिक ने स्वतंत्र चर को इसी रूप में परिभाषित करते हुए कहा है कि ''सामान्यतः स्वतंत्र चर वह कोई भी चर है जिसके प्रभावों को व्यवहार सम्बन्धी माप पर निर्धारित करने हेतु, प्रयोगकर्ता द्वारा उसका हस्तचालन सीधे तौर पर या चयन के द्वारा किया जाता है।''

प्रयोग के समय उसकी सक्रियता के परिप्रेक्ष्य में स्वतंत्र चर के तीन प्रकार बतलाये गए हैं - प्राणी चर, उद्दीपन चर तथा अनुक्रिया चर। प्राणी चर ऐसे स्वतंत्र चरों को कहते हैं जिनका सम्बन्ध प्रयोज्य के यौन, बुद्धि, प्रेरणा, थकान, अभ्यास, चिन्ता आदि से होता है। उद्दीपन चर ऐसे स्वतंत्र चरों को कहते हैं जिनका सम्बन्ध अध्ययन-विषय या अध्ययन-सामग्री से होता है। अधिगम में ऐसे चरों की भरमार है, जैसे - अध्ययन-सामग्री की कठिनाई, सरलता, जटिलता, लम्बाई, निरर्थकता, अर्थपूर्णता आदि उद्दीपन चर के उदाहरण हैं। अनुक्रिया चर ऐसे स्वतंत्र चर को कहते हैं जिनका सम्बन्ध उस प्रयोगात्मक परिस्थिति से है जिसमें प्रयोज्य अनुक्रिया करता है। प्रायोगिक वातावरण में उपस्थित शोरगुल, तापमान, आर्द्रता आदि अनुक्रिया चर के उदाहरण हैं।

स्वतंत्र चरों का हस्तचालन -

चाहे किसी भी प्रकार का स्वतंत्र क्यों न हो, प्रयोगकर्ता का उद्देश्य उसका हस्तचालन करके, यानी उसका विभिन्न मूल्य या स्तर तैयार करके आश्रित चर पर उसके प्रभाव का निरीक्षण या रिकार्डिंग करना होता है। प्रयोगकर्ता स्वतंत्र चर में हस्तचालन का कार्य निम्नलिखित तीन तरह से करता है -

(i) **'हा-नहीं' हस्तचालन-** इस तरह का हस्तचालन शोधकर्ता तब करता है जब स्वतंत्र चर का प्रकार ऐसा हो कि उसे एक अवस्था में उपस्थित किया जाये तथा दूसरी अवस्था में अनुपस्थित रखा जाये। इसे उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। मान लीजिए कि शोधकर्ता परिणाम के ज्ञान का प्रभाव व्यक्ति के निष्पादन पर देखना चाहता है। अतः वह दो अवस्थाओं में प्रयोग करेगा। पहली अवस्था में वह प्रयोज्य को कार्य पूरा करने पर यह नहीं बतायेगा कि उसने कोई गलती भी की या कार्य सही तरह से पूरा किया। इसे ''बिना परिणाम के ज्ञान'' की अवस्था कहेंगे। दूसरी अवस्था में वह प्रयोज्य को प्रत्येक प्रयास के बाद किए गये कार्य को दिखा देगा ताकि उसे अपनी गलतियों का पता चल जाये। इसे ''परिणाम के ज्ञान'' की अवस्था कहा जायेगा। इस प्रकार, उपर्युक्त उदाहरण में शोधकर्ता ने ''परिणाम के ज्ञान'' को, जो कि एक स्वतंत्र चर है ''हा-नहीं हस्तचालन'' के द्वारा हस्तचालित किया और उसके दोनों ही स्तरों के आश्रित चर, यानी, निष्पादन पर पड़ने वाले प्रभावों का निरीक्षण किया। अधिगम पर अभिप्रेरणा का प्रभाव, कक्षा कार्य पर शोर-गुल का प्रभाव आदि में शोधकर्ता स्वतंत्र चरों (क्रमशः अभिप्रेरण एवं शोस्गुल) का हस्तचालन ''हाँ-नहीं'' हस्तचालन द्वरा करेगा।

(ii) **'यह-वह' हस्तचालन-** इस तरह का हस्तचालन शोधकर्ता तब करता है जब उसे प्रयोग की विभिन्न स्थितियों में अलग-अलग प्रकार के स्वतंत्र चर के मूल्यों को प्रस्तुत करना होता है। उदाहरण के लिए, यदि शोधकर्ता अधिगम पर पुरस्कार-प्रकार का प्रभाव देखना चाहता है तो उसका शोध डिजाइन इस प्रकार का होगा कि प्रयोग की एक अवस्था में वह प्रयोज्य को एक खास तरह का पुरस्कार देगा (जैसे-रूप्या) जबकि दूसरी अवस्था में दूसरी तरह का

(जैसे-शाबाशी) और फिर निरीक्षण करेगा कि किस प्रकार के पुरस्कार का कैसा प्रभाव प्रयोज्य के अधिगम पर पड़ता है। इसे ही 'यह-वह' हस्तचालन की संज्ञा दी जाती है।

(iii) **'अधिक-कम' हस्तचालन-** जब शोधकर्ता को स्वतंत्र चर के विभिन्न स्तरों या मूल्यों का प्रभाव आश्रित चर पर देखना होता है तो वह प्रयोग की एक अवस्था में अधिक मूल्य का स्वतंत्र चर तथा दसरी अवस्था में कम मूल्य का स्वतंत्र चर प्रस्तुत करके उसके प्रभाव का निरीक्षण आश्रित चर पर करता है। पृष्ठोन्मुख अवरोध पर अति-अधिगम का प्रभाव इसका एक अच्छा उदाहरण है।

अभ्यास प्रश्न

1. स्वतंत्र चर को परिभाषित कीजिये |
2. स्वतंत्र चर की प्रकृति का संक्षेप वर्णन कीजिये |
3. स्वतंत्र चर के हस्तचालन विधियों को लिखिए |

13.7 आश्रित चर (Dependent Variable)

आश्रित चर वह चर होता है जो स्वतंत्र चर के परिणाम या फल के रूप में उत्पन्न होता है तथा जिसके बारे में शोधकर्ता कुछ पूर्व कथन करता है। शोध या प्रयोग में किसी स्वतंत्र चर में तोड़-मोड़ या परिवर्तन लाकर उसके प्रभावों को देखने का प्रयास किया जाता है जिसे आश्रितचर की संज्ञा दी जाती है। सामान्यतया आश्रितचर के बारे में हम पूर्व कथन करते हैं। आश्रित चर का प्रयोगकर्ता द्वारा निरीक्षण व रिकार्ड किया जाता है। उदाहरणस्वरूप "क्या बच्चों के बुद्धि स्तर का उनके अधिगम (learning) पर प्रभाव पड़ता है ?" में अधिगम आश्रित चर है। इसे आश्रित चर की संज्ञा इसलिए दी जाती है क्योंकि यह स्वतंत्र चर (बुद्धि स्तर) में परिवर्तन का परिणाम हो सकता है अर्थात यह स्वतंत्र चर पर आश्रित रहता है। आश्रित चर को प्रतिक्रिया चर भी कहते हैं।

दूसरे शब्दों में आश्रित चर वह चर होता है जिसके बारे में प्रयोगकर्ता कुछ पूर्वकथन करना चाहता है, जिस पर वह स्वतंत्र चर का प्रभाव देखना चाहता है। वह स्वतंत्र चर के मूल्य में परिवर्तन लाकर यह देखना चाहता है कि इस परिवर्तन का क्या प्रभाव आश्रित चर पर पड़ रहा है। वास्तव में, आश्रित वह चर होता है जिसे प्रयोगकर्ता सावधानीपूर्वक निरीक्षण करता है और उसे रिकॉर्ड करता है। इसे एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। मान लीजिए कि एक प्रयोगकर्ता शोर-गुल का प्रभाव व्यक्ति के अवसाद पर देखना चाहता है तो यहाँ शोरगुल स्वतंत्र चर होगा जिसका हस्तचालन प्रयोगकर्ता स्वयं करेगा, परन्तु अवसाद आश्रित चर होगा क्योंकि यह शो-गुल की मात्रा और अवधि से प्रभावित होगा। प्रयोगकर्ता व्यक्ति के अवसाद का मापन करके उसका स्तर नोट कर लेगा तथा फिर उसे कुछ दिनों तक शोर-गुंल वाली परिस्थिति में रखकर उसके अवसाद का मापन करके यह देखेगा कि किस प्रकार शोर-गुल से अवसाद में बृद्धि या कमी होती है। यहाँ प्रयोगकर्ता का काम अवसाद का निरीक्षण करना एवं उसे रिकार्ड करते चलना है। इसीलिए करलिंगर (1986) ने स्वतंत्र चर को एक पूर्व-कल्पित कारण तथा आश्रित चर को एक पूर्वकल्पित प्रभाव माना है।

कैण्टोविज तथा रोडिगर (1984) का मानना है कि एक अच्छे आश्रित चर में विश्वसनीयता तथा संगतता अधिक पाई जाती है। यदि पूर्व में किये गए प्रयोग को हु-ब-हु दोहराया जाये, यानी, दूसरी बार में भी वही प्रयोज्य हो, वही स्वतंत्र चर हो तथा वही डिजाइन हो तो आश्रित चर पर ठीक वही

प्राप्तांक आयेगा जो पहले आया है। यही आश्रित चर की विश्वसनीयता एवं संगतता होती है और ऐसे आश्रित चर को एक अच्छा चर माना जाता है।

आश्रित चर की विशेषतायें निम्नवत हैं -

i. आश्रित चर वास्तव में किसी स्वतंत्र चर का प्रभाव या परिणाम होता है, यह एक या अधिक स्वतंत्र चरों के मूल्यों में परिवर्तन का परिणाम होता है।
ii. आश्रित चर के संबंध में प्रयोगकर्ता भविष्यवाणी करता है।
iii. आश्रित चर का अस्तित्व स्वतंत्र चर पर निर्भर करता है।

अभ्यास प्रश्न

1. आश्रित चर से आप क्या समझते हैं ?
2. आश्रित चर का उदाहरण दीजिए |
3. आश्रित चर की विशेषताओं को लिखिए |

13.8 संगत चर या नियंत्रित चर या असंबद्ध चर(Relevance Variable or Control Variable or Extraneous Variable)

संगत चर को नियंत्रित चर(Control Variable) एवं असंबद्ध चर(Extraneous Variable) भी कहा जाता है। शोधकर्ता संगत चर के प्रभावों का आश्रित चर पर पड़ने से रोकता है। क्योंकि वास्तव में सभी संगत चर स्वतंत्र चर के स्वरूप के ही होते हैं और स्वतंत्र चर की तरह ही इनका प्रभाव भी आश्रित चर पर पड़ता है, परंतु चूंकि शोधकर्ता इनके प्रभावों का अध्ययन करना नहीं चाहता इसलिए वह इनको नियंत्रित करके रखता है। इस कारण इसे नियंत्रित चर कहते हैं, अर्थात नियंत्रित चर एक प्रकार का समान्य स्वतंत्र चर (Potential Independent Variable) होता है जिसे प्रयोग के दौरान स्थिर रखा जाता है। प्रयोगात्मक परिस्थिति में स्वतंत्र चर की तरह के ही कुछ और चर होते हैं जिन्हें यदि प्रयोगकर्ता नियन्त्रित न करे तो वे आश्रित चर को प्रभावित कर सकते हैं। इस तरह के चर को संगत चर कहते हैं। प्रयोगकर्ता नियन्त्रण के विभिन्न उपायों के द्वारा संगत चर के प्रभाव को आश्रित चर पर पड़ने से रोकता है। संगत चर को बाह्य चर, बहिरंग चर या नियंत्रित चर भी कहते हैं। दरअसल, किसी भी आश्रित चर को प्रभावित करने वाले कई कारक हो सकते हैं जो प्रयोगात्मक परिस्थिति में चर के रूप में कार्यरत होते हैं। इनमें से प्रयोगकर्ता जिनके प्रभाव का अध्ययन करना चाहता है उन्हें वह हस्तचालित करता है- अतः वैसा चर स्वतंत्र चर के रूप में कार्य करने लगता हैं। शेष चरों को प्रयोगकर्ता उस प्रयोगात्मक परिस्थिति में नियंत्रित कर लेता है ताकि उनका अनचाहा व अनावश्यक प्रभाव आश्रित चर पर न पड़े। यही नियंत्रित चर संगत चर या बाह्य चर कहलाते हैं। चूँकि ये सभी बाहर से आश्रित चर को प्रभावित करते हैं (यदि इन्हें नियंत्रित नहीं किया जाय तो) इसीलिए इन्हें बहिरंग चर भी कहते हैं। इसे एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। एक प्रयोगकर्ता अधिगम की प्रक्रिया का अध्ययन करना चाहता है। वह अधिगम पर पाठ्य-सामग्री के स्वरूप का प्रभाव देखना चाहता है। यहाँ पर अधिगम एक आश्रित चर होगा तथा पाठ्य-सामग्री का स्वरूप एक स्वतंत्र चर होगा। पाठ्य-सामग्री के अतिरिक्त अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक, जैसे- प्रयोज्य की उम्र, यौन, स्वास्थ्य, बुद्धि, कमरे का तापमान, शोरगुल, समय, सीखने की

विधि, पाठ्य-सामग्री की लम्बाई आदि सभी बहिरंग या संगत चर हैं जिन्हें यदि नियंत्रित न किया जाय तो वे आश्रित चर, यानी, अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित कर सकते हैं, फलतः प्रयोग की वैधता घट सकती है।

संगत चर निम्नलिखित तीन प्रकार के होते हैं -

प्रयोज्य संगत चर (Subject Relevant Variable)- प्रयोज्य के व्यक्तिगत गुणों से संबंधित चरों को प्रयोज्य संगत चर कहते हैं जैसे प्रयोज्य का आयु, लिंग, बुद्धि आदि। वैसे संगत चर जो प्रयोज्य के व्यक्तिगत गुणों, जैसे- उम्र, यौन, बुद्धि, अभिप्रेरणा आदि, से सम्बन्धित होते हैं, प्रयोज्य संगत चर कहलाते हैं। इनमें से कुछ चर टाईप-एस श्रेणी के तथा कुछ टाईप-ई श्रेणी के होते हैं। यदि इन चरों को किसी प्रयोग या शोध में प्रयोगात्मक चर या स्वतंत्र चर के रूप में प्रयोग में नहीं लाया जाना हो तो इन्हें नियन्त्रित करना अत्यावश्यक होता है, वरना ये आश्रित चर पर अवांछित प्रभाव डाल सकते हैं।

स्थितिगत संगत चर (Situational Relevant Variable)- स्थितिगत संगतचर का संबंध शोध की परिस्थिति या प्रयोगात्मक परिस्थिति से होता है जैसे वातावरण का प्रकाश, ताप, शोरगुल इत्यादि। इसलिए इन्हें पर्यावरणीय चर (Environmental Variable) भी कहा जाता है। अर्थात वैसे संगत चर जो उन परिस्थितियों या पर्यावरण से सम्बन्धित होते हैं जिनमें प्रयोग या शोध किया जा रहा हो, परिस्थितिगत संगत चर कहलाते हैं। प्रयोग के समय वातावरण का तापमान, शोरगुल, प्रकाश, आर्द्रता आदि परिस्थितिगत संगत चर के रूप में प्रयोग या शोध को प्रभावित कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, प्रयोग के उपकरण, कार्य की प्रकृति आदि भी परिस्थितिगत चर या पर्यावरणीय चर के रूप में आश्रित चर को प्रभावित कर सकते हैं। अतः प्रायोगिक परिस्थिति में प्रयोगकर्ता इन परिस्थितिगत या पर्यावरणीय संगत चरों को नियंत्रित करने का प्रयास करताहै।

अनुक्रम संगत चर (Sequence Relevant Variable)- अनुक्रम संगत वैसे चर होते हैं जो प्रयोग की अलग-अलग अवस्थाओं में एक ही प्रयोज्य या प्रयोज्यों के समूह या समूहों के उपयोग करने से उत्पन्न होते हैं। ऐसी स्थिति में जब शोध कई अवस्थाओं में अर्थात पहली अवस्था, दूसरी अवस्था, तीसरी अवस्था और अन्य अवस्थाओं में एक ही प्रयोज्यों पर किये जाते हैं जिसकी वजह से प्रयोज्यों में अभ्यास, थकान, अनुकूलन का प्रभाव अलग-अलग अवस्थाओं में भिन्न-भिन्न प्रकार से पड़े जिसका प्रभाव आश्रित चर पर भी पड़ता है। अत: शोधकर्ता के लिए इन अनुक्रम संगत चरों को नियंत्रित करना आवश्यक हो जाताहै। दूसरे शब्दों में, वैसे संगत चर जो प्रयोग की विभिन्न अवस्थाओं में एक ही प्रयोज्य या प्रयोज्य के एक ही समूह की जाँच करने से उत्पन्न होते हैं, अनुक्रम संगत चर कहलाते हैं। किसी भी प्रयोग में एक अवस्था के बाद दूसरी अवस्था, दूसरी के बाद तीसरी अवस्था आदि क्रम से आती रहती हैं और यदि इन अवस्थाओं में एक ही प्रयोज्य या प्रयोज्य-समूह को कार्यरत रखा जाय तो प्राप्त परिणाम अभ्यास, थकान आदि जैसे कारकों से प्रभावित हो सकते हैं। ऐसा विभिन्न अवस्थाओं के अनुक्रम के कारण होता है। उदाहरणस्वरूप, प्रथम अवस्था में प्रयोज्य जहाँ तरोताजा रहता है, अन्तिम अवस्था में वहीं थका-थका महसूस कर सकता है; इसी प्रकार, प्रथम अवस्था में प्रयोज्य प्रायोगिक परिस्थिति में नया रहता है जबकि अन्तिम अवस्था तक वह परिस्थिति से रू-ब-रू हो चुका होता है। स्पष्ट है कि विभिन्न प्रायोगिक अवस्थाएं

परिस्थितिगत संगत चर के रूप में कार्य करते हैं और प्रयोगकर्ता इनके कुप्रभाव को रोकने के लिए उचित नियंत्रण का प्रयास करता है।

अभ्यास प्रश्न

1. संगत चर को परिभाषित कीजिये|
2. अनुक्रम संगत चर से आप क्या समझते हैं ? इसका उदाहरण दीजिए|
3. स्थितिगत संगत चर से आप क्या समझते हैं ? इसका उदाहरण दीजिए|
4. प्रयोज्य संगत चर से आप क्या समझते हैं ? इसका उदाहरण दीजिए|
5. संगत चर के विभिन्न प्रकारों का उदाहरण दीजिए|
6. संगत चर की विशेषताओं को लिखिए|

13.9 चरों के कुछ अन्य प्रकार (Some other types of variables)

1. **सक्रिय चर (Active Variable)** – कोई भी चर जिसमें जोड़-तोड़ किया जाता है, सक्रिय चर कहलाता है।
2. **गुण चर (Attribute Variable)-** गुण चर वैसे चर को कहा जाता है जिसमें जोड़-तोड़ या परिचालन किया जाना संभव नहीं है। जैसे लिंग, बुद्धि, सामाजिक-आर्थिक स्थिति आदि चरों में जोड़-तोड़ करना संभव नहीं हो पाता है। ये सभी गुण चरों के उदाहरण है।
3. **गुणात्मक चर (Qualitative Variable)**- गुणात्मक चर वह चर है जिसे मात्रा या परिमाण के रूप में व्यक्त नहीं किया जा सकता। ऐसे चरों की व्याख्या मात्रा के आधार पर नहीं बल्कि प्रकार के आधार पर की जाती है। अर्थात गुणात्मक चर वे चर हैं जिसमें प्रकार का अंतर होता है मात्रा का नहीं। दूसरे शब्दों में, गुणात्मक चर में वैसे चरों को रखा जाता है जिसमें ऐसी श्रेणियॉं होती है जिन्हें मात्रा के रूप में सुव्यवस्थित नहीं किया जा सकता। (Qualitative Variables are composed of categories that cannot be ordered with respect to magnitude),जैसे लिंग, धर्म, प्रजाति, पेशा इत्यादि गुणात्मक चर के उदाहरण है।
4. **मात्रात्मक चर (Quantitative Variable)** – मात्रात्मक चर वह होता है जिसका मापन परिमाण या मात्रा में संभव है। अर्थात मात्रात्मक चर को मात्रा के क्रम में रखा जा सकता है। दूसरे शब्दों में, मात्रात्मक चर वे चर हैं जिन्हें परिमाण या मात्रा या मात्रा के क्रम में एक सतत रेखा पर सजाया जा सके। जैसे बुद्धि, उपलब्धि, रूचि, अभिक्षमता इत्यादि मात्रात्मक चर के उदाहरण हैं। मात्रात्मक चर को मुख्यत: दो भागों में बांटा जाता है-
   A. **सतत चर (Continuous Variable)** - सतत चर वे चर हैं जिन्हें छोटी से छोटी मात्राओं में मापा जा सकता है। इसे केवल पूर्ण संख्या में ही नहीं व्यक्त किया जा सकता बल्कि दशमलव संख्या में भी व्यक्त किया जाता है। जैसे उम्र, समय, उपलब्धि, भार, लंबाई इत्यादि सतत चर के उदाहरण है।
   B. **असतत चर (Discrete Variable)** – असतत चर वे चर हैं जिनके परिमाण या मात्रा को केवल पूर्ण संख्याओं में ही व्यक्त किया जा सकता है। जैसे परिवार के सदस्यों की संख्या, पुस्तक में पृष्ठों की संख्या, पुस्तकों की संख्या इत्यादि असतत चर के उदाहरण हैं। इनकी मात्रा को दशमलव में व्यक्त नहीं किया जा सकता।

5. **प्राणी चर (Organism Variable)**- प्राणी चर का संबंध प्राणी या प्रयोज्यसे होता है। बुद्धि, चिंता, थकान, लिंग आदि चर प्रयोज्य या प्राणी में होते हैं। इसलिए इन्हें प्राणी चर भी कहते हैं। दूसरे शब्दों में, प्राणी चर वह चर है जो प्राणी के भीतर मौजूद होता है। प्राणी चर, स्वतंत्र चर, आश्रित चर तथा मध्यवर्ती चर (Intervening Variable) तीनों ही हो सकता है । प्राणी चर के अंतर्गत शारीरिक शीलगुण (उम्र, वजन, शक्ति, आदि) व मनोवैज्ञानिक शीलगुण (बुद्धि, थकान,चिंता इत्यादि) को शामिल किया जाता है इसलिए इन्हें प्रयोज्य चर (Subject Variable) भी कहते हैं क्योंकि ये अपेक्षाकृत स्थायी होते हैं।
6. **मध्यवर्ती चर (Intervening Variable)**- मध्यवर्ती चर, स्वतंत्रचर तथा आश्रित चर के बीच घटित होता है। एक तरफ यह स्वयं किसी स्वतंत्र चर का परिणाम होता है और दूसरी तरफ यह किसी आश्रित चर का कारण होता है। यह कल्पित होता है। इसका निरीक्षण प्रत्यक्ष रूप से संभव नहीं होता है, बल्कि स्वतंत्र चर में परिवर्तन लाकर आश्रित चर पर पड़ने वाले प्रभावों के रूप में इसका अनुमान लगाया जाता है। मध्यवर्ती चर एक आन्तरिक चर है जो प्रत्यक्ष रूप से मापनीय नहीं होता बल्कि जिसके गुणों का अनुमान तथा विवेचन स्वतंत्र चर में व्यवस्थित परिचालन और आश्रित चर में सहवर्ती परितर्वनों के निरीक्षण के आधार पर किया जा सकता है। "Intervening Variable is an internal variable not directly assessable but whose properties can be inferred and interpreted on the basis of systematic manipulations in an independent variable and observations of the concomitant changes in a dependent variable). सामान्यतया मध्यवर्ती चर का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता है। प्रयोगात्मक अवस्थाओं में केवल उसका अप्रत्यक्ष रूप से निरीक्षण किया जा सकता है।
7. **उद्दीपन चर (Stimulus Variable)-** उद्दीपन चर का संबंध प्राणी या प्रयोज्य से नहीं रहता बल्कि उद्दीपन वस्तु से होता है। अर्थात उद्दीपन चर का तात्पर्य उद्दीपन में ऐसे परिवर्तनों से है जिन्हें मापा जा सके। उत्तेजन या उद्दीपन चर का संबंध बाह्य वातावरण, कार्य परिस्थिति तथा कार्य विशेष से होता है। इस आधार पर उद्दीपन चर के तीन प्रकार होते हैं-

   i. **कार्य चर(Task Variable)**- कार्य चर का संबंध उस कार्य से होता है जिस पर प्रयोग किया जाताहै।
   ii. **परिवेश चर (Environmental Variable)**- परिवेश चर वे चर हैं जिनका संबंध उस परिवेश से होता है जिसमें प्रयोग किया जा रहाहै।
   iii. **निर्देशन चर (Instructional Variable)**-निर्देशन चर वह चर है जिसका संबंध प्रयोगकर्ता या शोधकर्ता द्वारा प्रयोज्यको दिए गए निर्देशन से रहता है।

13.10 अभ्यास प्रश्न

1. उद्दीपन चर को परिभाषित कीजिये |
2. मध्यवर्ती चर से आप क्या समझते हैं ? इसका उदाहरण दीजिए |
3. प्राणी चर से आप क्या समझते हैं ? इसका उदाहरण दीजिए |

4. मात्रात्मक चर से आप क्या समझते हैं ? इसका उदाहरण दीजिए |
5. मात्रात्मक चर के विभिन्न प्रकारों का उदाहरण दीजिए |
6. गुणात्मक चर की विशेषताओं को लिखिए |

13.11 सारांश

- चर वह है जो स्थिर न रहे, जिसमें बदलाव हो, जिसका स्वभाव परिवर्तित होने वाला हो और सबसे बढ़कर, जो मापने योग्य हो।
- चरों का मापन परिमाणात्मक तथा गुणात्मक रूप में भी रूप में भी हो सकता है।
- चरों को तीन वर्गो में विभक्त किया जा सकता है- स्वतंत्र चर, आश्रित चर तथा बहिरंग या संगत चर।
- जिस स्वतंत्र चर में प्रयोगकर्ता जोड़-तोड़ या हस्तचालन करता है उसे प्रयोगात्मक चर भी कहते हैं।
- स्वतंत्र चर दो प्रकार का होता है- टाइप-ई स्वतंत्र चर तथा 'टाइप-एस' स्वतंत्र चर।
- स्वतंत्र चर का हस्तचालन तीन तरीके से किया जाता है - हाँ-नहीं, यह-वह, अधिक-कम।
- बहिरंग चर के तीन प्रकार होते हैं- प्रयोज्य चर, परिस्थितिगत चर तथा अनुक्रम चर। इन चरों को संगत चर भी कहते हैं और यदि इन्हें नियंत्रित न किया जाय तो स्वतंत्र चर के साथ मिलकर प्रयोगात्मक परिस्थिति में आश्रित चर को प्रभावित कर सकते हैं।

13.12 शब्दावली

- **चर:** चर वह है जो स्थिर न रहे, जिसमें बदलाव हो, जिसका स्वभाव परिवर्तित होने वाला हो और सबसे बढ़कर, जो मापने योग्य हो।
- **स्वतंत्र चर:** वह चर जिसके प्रभाव का अध्ययन प्रयोगकर्ता करना चाहता है और जिसमें जोड़-तोड़ करके उसके विभिन्न स्तर का मूल्य का निर्धारण प्रयोगकर्ता द्वारा किया जाता है, स्वतंत्र चर कहलाता है।
- **आश्रित चर**: वह चर जो स्वतंत्र चर से प्रभावित होता है और जिसे प्रयोगकर्ता प्रायोगिक परिस्थिति में मापता है, उसमें स्वतंत्र चर के विभिन्न स्तरों/मूल्यों के प्रभाव से आये बदलाव को रिकार्ड करता है, आश्रित चर कहलाता है।
- **बहिरंग चर:** वह चर जिन्हें प्रयोगात्मक परिस्थिति में स्वतंत्र चर के साथ मिलकर आश्रित चर को प्रभावित करने से प्रयोगकर्ता नियंत्रण विधियों का प्रयोग कर रोकता है, बहिरंग चर कहलाता है।

13.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. चर क्या है? चर की प्रकृति का उल्लेख कीजिये|
2. परिमाणात्मक एवं गुणात्मक चरों में विभेद कीजिये|

3. चर को परिभाषित करें। चरों के विभिन्न प्रकार की संक्षिप्त व्याख्या कीजिये ।
4. स्वतंत्र चर किसे कहते है? स्वतंत्र चर के विभिन्न प्रकारों की व्याख्या कीजिये
5. चर कितने प्रकार के होते है? वैज्ञानिक शोध में बाह्य चरों का नियंत्रण के महत्व को लिखें |
6. बहिरंग चरों के विभिन्न प्रकारों को उदाहरण के साथ समझाये ।

13.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) मनोविज्ञान,समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल-बनारसीदास, दिल्ली ।
- एच.के. कपिल (2001) अनुसंधान विधियां (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा ।
- एफ.एन. करलिंगर (2002) फाउण्डेशन्स ऑफ विहैवियरल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं विंसटन, इंक, न्यूयार्क ।
- राम आहूजा (2009) रिसर्च मेथड्स, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर ।
- स्वअनुदेशन सामग्री (एम.ए.मनोविज्ञान), उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी |

इकाई - 14

चरों का नियंत्रण

Control of Variables

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 चरों का नियंत्रण

14.4 चरों के नियंत्रण की विधियां

14.4.1 विलोपन

14.4.2 स्थिरता

14.4.3 संतुलन

14.4.4 प्रतिसंतुलन

14.4.5 बहिरंग चर को स्वतंत्र चर के रूप में बदलना

14.4.6 यादृच्छीकरण

14.5 सारांश

14.6 शब्दावली

14.7 निबन्धात्मक प्रश्न

14.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

14.1 प्रस्तावना (Introduction)

इससे पूर्व की इकाई (इकाई 13) में आपने चरों का अर्थ एवं चरों के प्रकार के सम्बन्ध में विस्तृत अध्ययन किया । आपने यह अध्ययन किया कि किस प्रकार स्वतंत्र चर को हस्तचालित (manipulate) कर आश्रित चर (dependent variable) पर उसके प्रभाव (effect) का निरीक्षण किया जाता है । आपने यह भी अध्ययन किया कि बहिरंग चर (extraneous variable) किस प्रकार स्वतंत्र चर (independent variable) के साथ मिलकर प्रयोगात्मक परिस्थिति को बाधित करते हैं तथा इन दोनों चरों के मध्य अंतर्संबंध जानना कितना मुश्किल हो जाता है।

इस इकाई में आप स्वतंत्र चर (independent variable) तथा आश्रित चर (dependent variable) के मध्य पाए जाने वाले चर जिसे मध्यवर्ती चर कहा जाता है अथवा ऐसे चर जो बाहरी रूप से इन दोनों के मध्य अंतर्संबंध को प्रभावित करता है जिसे बहिरंग चर कहा जाता है के नियंत्रण के विविध तरीकों का विस्तृत अध्ययन कर सकेंगे । इस इकाई के माध्यम से आप जान सकेंगे कि

प्रयोगात्मक प्रसरण (experimental variance) को कम करने के लिए अनावश्यक चरों का नियंत्रण किन-किन विधियों द्वारा किया जा सकता है तथा आप चरों के नियंत्रण की विभिन्न तकनीकों को जान सकेंगे जिससे किसी प्रायोगिक अध्ययन में इन बहिरंग चरों के अनावश्यक प्रभाव से स्वतंत्र चर को मुक्त रखा जा सके ताकि स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर के मध्य अंतर्संबंध को त्रुटि मुक्त रूप से समझा सके।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

- चरों के नियंत्रण के संप्रत्यय को समझ सकेंगे।
- नियंत्रण के विभिन्न तरीकों को वर्गीकृत कर सकेंगे।
- नियंत्रण के विभिन्न तरीकों की व्याख्या कर सकेंगे।
- बहिरंग चरों के स्वरूप के अनुरूप नियंत्रण की विधियों का प्रयोग कर सकेंगे|
- किसी प्रयोग की सही योजना बनाकर नियंत्रण की सही प्रविधियों के सहारे परिकल्पना की जांच करने के योग्य हो सकेंगे।

14.3 चरों का नियंत्रण (Control of Variables)

जब भी हम कोई वैज्ञानिक शोध या अध्ययन करते हैं तो वहाँ हमें अनावश्यक चरों यथा संगत चर अथवा बहिरंग चर के प्रभाव को रोक देने की आवश्यकता होती है। अनावश्यक चरों यथा संगत चर अथवा बहिरंग चर के प्रभाव को रोक देने की विधि को चरों का नियंत्रण कहते हैं ताकि स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर के मध्य अंतर्संबंध को स्थापित किया जा सके।

किसी भी प्रयोगकर्ता या शोधकर्ता का मुख्य उद्देश्य आश्रित चर पर स्वतंत्र चर के प्रभाव का अध्ययन करना होता है। स्वतंत्र चर के अतिरिक्त अन्य चरों को, जो आश्रित चर को प्रभावित कर सकते हैं, प्रयोगकर्ता नियंत्रित करने का प्रयास करता है ताकि उनसे उत्पन्न प्रसरण की मात्रा पर रोक लगाई जा सके। बहिरंग चरों के नियंत्रण से सभी अवांछित प्रसरण नियंत्रित हो जाते हैं जो वैसे चरों के प्रभाव से उत्पन्न होते हैं जिनके अध्ययन में शोधकर्ता की कोई रूचि नहीं होती। अतः नियंत्रण का अर्थ इस ढंग से प्रयोग करना है कि प्राप्त परिणाम को निश्चित रूप से केवल प्रयोगात्मक चर या उस स्वतंत्र चर का प्रभाव माना जा सके जिसके प्रभाव को देखने के लिए प्रयोग किया गया है।

अर्थात, किसी भी वैज्ञानिक प्रयोग में प्रयोगकर्ता उन सभी चरों का पता लगाता है तथा नियंत्रित करने की कोशिश करता है जो आश्रित चर को प्रभावित कर सकते हैं। ऐसे चरों को बहिरंग चर या अस्त व्यस्त करने वाला चर कहा जाता है। बहिरंग चरों को नियंत्रित करने के कई तरीके है | संक्षेप में यहां यही कहा जा सकता है कि प्रयोगकर्ता को यह सावधानीपूर्वक देख लेना चाहिए कि कोई भी बहिरंग चर प्रयोज्यों के विभिन्न समूहों को आश्रित चर पर भिन्न भिन्न ढंग से प्रभावित नहीं करें। अगर किसी बहिरंग चर का प्रभाव सभी समूहों पर समान ढंग से पडता है, तो उसका प्रभाव अपने आप ही नियंत्रित होता समझा जाता है तथा इसे एक आदर्श अवस्था कहा जाता है।

किसी भी शोध समस्या को हल करने हेतु एक अच्छा शोध डिजाइन का अनुसरण करना आवश्यक हो जाता है | शोध प्रश्नों (research questions) के सही उत्तर पाने (To provide correct

answers to the research questions), तथा प्रसरण को नियंत्रित करने (To control variance) हेतु एक अच्छा शोध डिजाइन का होना आवश्यक है | अतः एक अच्छे **शोध डिजाइन के निम्न उद्देश्य (Purposes of Research Design) (अरुण कुमार, 2004) हो सकते हैं -**

i. शोध प्रश्नों के सही उत्तर ढूँढना, (To provide correct answers to the research questions), तथा
ii. प्रसरण को नियंत्रित करना (To control variance)।

इन दोनों तरह के उद्देश्यों का वर्णन निम्नांकित है -

(i) शोध प्रश्नों के सही उत्तर ढूँढना (To provide correct answers to research questions):-

शोधकर्ता शोध डिजाइन के आधार पर शोध समस्याओं या प्रश्नों का एक वैध (Valid) तथा वस्तुनिष्ठ (Objective) उत्तर ढूंढने का प्रयास करता है । इस तरह से शोध डिजाइन द्वारा शोध डिजाइन द्वारा शोधकर्ता समस्याओं (research problem) के समाधान से संबंधित कुछ अनुभवसिद्ध सबूतों (empirical evidences) को जुटाता है तथा शोधकर्ता को एक अन्तिम निष्कर्ष पर पहुंचने में मदद करता है। अब प्रश्न यह उठता है कि शोध डिजाइन द्वारा यह कार्य कैसे सम्पन्न होता है ? वास्तव में, शोध डिजाइन शोध में सम्मिलित किये गये चरों के संबंधोंको अध्ययन करने की एक परियोजना होती है। एक तरह से शोध डिजाइन शोधकर्ता को यह बतलाता है कि उसे किस ढंग से प्रेक्षण करना चाहिए, कैसा करना चाहिए तथा प्रेक्षण से प्राप्त परिमाणात्मक तथ्यों का विश्लेषण कैसे करना चाहिए, आदि।

(ii) प्रसरण को नियंत्रित करना (To Control Variances):-

शोध डिजाइन का तकनीकी उद्देश्य (technical purpose) विभिन्न तरह के प्रसरण (Variance) को नियंत्रित करना होता है। शोध डिजाइन का यह उद्देश्य अत्यधिक महत्वपूर्ण बतलाया गया है क्योंकि यदि इस उद्देश्य को प्राप्त करने में कोई शोध डिजाइन असमर्थ है, तो वह अपने उद्देश्य को भी प्राप्ति सही अर्थों में नहीं कर पाता है। शोध डिजाइन एक नियंत्रण प्रक्रिया के रूप में कार्य करता है। इस नियंत्रित प्रक्रिया के रूप में शोध डिजाइन निम्नांकित तीन तरह के प्रसरणों के क्रमबद्धीकरण पर बल डालता है -

अ) प्रयोगात्मक प्रसरण को उच्चम सीमा प्राप्त करना

ब) त्रुटि प्रसरण को कम से कम करना

स) बहिरंग प्रसरण को नियंत्रित करना

नियंत्रित प्रक्रिया (Control mechanism) के इन तीन पहलुओं का वर्णन निम्नांकित है -

(अ) प्रयोगात्मक प्रसरण की उच्चतम सीमा (Maximization of experimental variance): शोध डिजाइन का एक महत्वपूर्ण तकनीकी उद्देश्य शोध में प्रयोगात्मक प्रसरण (experimental variance) को उच्चतम सीमा तक बढ़ावा होता है । प्रयोगात्मक प्रसरण को बढ़ावा शोध डिजाइन के उद्देश्य के पीछे छिपा एक सांख्यिकीय सिद्धान्त (Statistical principle) है । प्रयोगात्मक प्रसरण से तात्पर्य आश्रित चर में उत्पन्न किये गये वैसे प्रसरण से होता है जिसे

शोधकर्ता स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ करके उत्पन्न करता है। प्राय: शोधकर्ता यह कोशिश करता है कि वह अपने शोध में प्रयोगात्मक प्रसरण को उच्चतम सीमा तक बढा दे ताकि उस शोध से अधिक से अधिक वस्तुनिष्ठ तथा वैध आंकड़ा प्राप्त हो सके। प्रयोगात्मक प्रसरण के उच्चतम सीमाएं बढ़ाने के इस सांख्यिकीय सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए एक शोध ज्ञात की अभिव्यक्ति इस प्रकार की जा सकती है - शोध को संचालित करने का डिजाइन इस ढंग का हो उसकी प्रयोगात्मक अवस्थाएं यथासंभव एक दूसरे से भिन्न हो (Design and conduct or research should be such that the experimental conditions are as differenct as possible)| शोध डिजाइन के उपर्युक्त सांख्यिकीय सिद्धान्त अर्थात प्रयोगात्मक प्रसरण को उच्चतम सीमा तक बढ़ाने के सिद्धान्त को एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है - मान लिया जाए कि कोई शोधकर्ता यह अध्ययन करना चाहता है कि रोशनी के स्तर का प्रभाव व्यक्ति की कार्य क्षमता पर क्या प्रभाव पड़ता है। इस अध्ययन में रोशनी एक स्वतंत्र चर का उदाहरण है तथा कार्य क्षमता एक आश्रित चर का उदाहरण है | मान लिया जाए कि शोधकर्ता रोशनी के तीन स्तरों (यानी तीन प्रयोगात्मक अवस्थाओं) के प्रभाव का अध्ययन करने का निश्चित करता है - रोशनी का उच्चतम स्तर (high level illumination) रोशनी का मध्य स्तर (moderate level of illumination) तथा रोशनी का निम्न स्तर (low level of illumination) । ये तीन प्रयोगात्मक अवस्थाएं सार्थक रूप से जितनी ही एक दूसरे से भिन्न होगी, आश्रित चर (dependent variable) अर्थात कार्यक्षमता में उतना ही स्पष्ट अन्तर होगा और फलस्वरूप आश्रित चर में प्रयोगात्मक प्रसरण उतना ही अधिक ही होगा। थोड़ी देर के लिए मान लिया जाये कि शोधकर्ता रोशनी के तीन स्तर के बदले दस स्तर के प्रभाव का अध्ययन करने का निश्चित करता है। ऐसी परिस्थिति में यह स्वाभाविक है कि इन दस स्तरों (अर्थात दस प्रयोगात्मक अवस्थाओं) में रोशनी की मात्रा में आपसी अन्तर थोड़ा थोड़ा होगा (या, काफी कम होगा)। ऐसी परिस्थिति में आश्रित चर में प्रयोगात्मक प्रसरण उत्पन्न होगा, वह पहले वाले शोध डिजाइन से उत्पन्न प्रयोगात्मक प्रसरण से काफी कम होगा। अत: दूसरे शोध डिजाइन को पहले शोध डिजाइन से श्रेष्ठ नहीं माना जा सकता है।

(ब) त्रुटि प्रसरण को कम से कम करना - शोध डिजाइन का महत्वपूर्ण तकनीकी कार्य प्रयोग या शोध में त्रुटि प्रसरण को कम से कम करना है। त्रुटि प्रसरण वैसे प्रसरण को कहा जाता है जो प्रयोग या शोध में वैसे कारकों से उत्पन्न होते हैं जो शोधकर्ता के नियंत्रण से सामान्यत: बाहर होते हैं। इनमें से कुछ कारक ऐसे होते हैं जो प्रयोज्यों की वैयक्तिक्त विभिन्नता जैसे अभिक्षमता, ध्यान आवश्यकता आदि से संबंधितहोते हैं तथा कुछ कारक ऐसे होते हैं जिन्हें सामान्यतः मापन की त्रुटियाँ कहा जाता है। ऐसे कारकों में एक प्रयास से दूसरे प्रयास में होने वाली अनुक्रियाओं में विभिन्नता प्रयोज्यों द्वारा अनुमान लगाना ध्यान भंगता, थकान, मानसिक ऊब, क्षणिक स्मृति भूल आदि प्रधान हैं। ऐसे कारकों में एक प्रयास से दूसरे प्रयास में होने वाली अनुक्रियाओं में विभिन्न्ता, प्रयोज्यों द्वारा अनुमान लगाना, ध्यान भंगता, थकान, मानसिक उबन, क्षणिक स्मृति भूल आदि प्रधान हैं। त्रुटि प्रसरण के स्रोत चाहे जो भी हो, इसमें निम्नांकित दो विशेषताएं पाई जाती है -

1. त्रुटि प्रसरण का स्वरूप आत्म पूरक होता है क्योंकि इस ढंग का प्रसरण कभी धनात्मक होता है तो कभी नकारात्मक होता है। कभी धनात्मक तथा कभी नकारात्मक होने से ढंग की त्रुटि एक दूसरे का काट करती है। शायद यही कारण है कि यदि कई प्रयासों तक मापन करने में त्रुटियों का जो माध्य आता है यह प्राय: शून्य होता है।

2. त्रुटि प्रसरण का स्वरूप अपूर्वकथनीय होता है क्योकि यह यादृच्छिक त्रुटियों पर आधारित होता है। अपूर्वकथनीय से तात्पर्य यह होता है कि प्रयोगकर्ता पहले से यह नहीं बता सकता है कि अमुक प्रयास में त्रुटि की दिशा धनात्मक होगी या ऋणात्मक होगी।

त्रुटि प्रसरण को कम करने का सबसे उत्तम तरीका यह है कि प्रयोग या शोध काफी नियंत्रित अवस्था में किया जाये ताकि प्रयोगात्मक परिस्थिति में प्रसरण उत्पन्न करने वाले कारक अपने आप ही काफी दबे रहें। इसके अलावा, त्रुटि प्रसरण को कम करने का तरीका यह भी है कि प्रयोग में विश्वसनीय मापनी या विश्वसनीय परीक्षणों का उपयोग किया जाये। अगर मापनी या परीक्षण भी नहीं होगा और तब स्वभावत: त्रुटि प्रसरण कम से कम होगा।

अभ्यास प्रश्न

1. चर के नियंत्रण से आप क्या समझते हैं?
2. शोध डिजाइन तथा चर के नियंत्रण के मध्य अंतर्संबंध को स्पष्ट करें|
3. त्रुटि प्रसरण से आप क्या समझते हैं? इसका उदाहरण दीजिए ?
4. प्रयोगात्मक प्रसरण से आप क्या समझते हैं | इसका उदाहरण दीजिए ?
5. प्रसरण को नियंत्रित करने के विभिन्न प्रकारों का उदाहरण दीजिए|

14.4 बहिरंग प्रसरण (चरों) को नियत्रित करना (To control extraneous variance)

शोध डिजाइन का दूसरा प्रमुख तकनीकी उद्देश्य बहिरंग चरों को नियंत्रित करना होता है, ताकि उससे उत्पन्न प्रसरण की मात्रा पर रोक लगाई जा सके। बहिरंग प्रसरण के नियंत्रण से सभी अवांछित शोधकर्ता की कोई रूचि नहीं होती है। अब प्रश्न यह उठता है कि शोध में बहिरंग चरों का नियंत्रण कैसे किया जाता है। विशेषज्ञों ने सामाजिक शोध में बहिरंग चरों को नियंत्रित करने की निम्नांकित छह विधियों को अधिक महत्वपूर्ण बतलाया है -

14.4.1 विलोपन (Elimination)

शोध में या प्रयोग में बहिरंग चरों को नियंत्रित करने का सबसे आसान तरीका यह है कि उसे प्रयोगात्मक परिस्थिति में निष्कासित कर दिया जाए ताकि DV पर उसका प्रभाव अपने आप ही विलोपित हो जाये। उदाहरणस्वरूप, यदि प्रयोग ऐसा है जिसमें बाहरी आवाज एक बहिरंग चर है जिसे अपने आप ही प्रयोगात्मक परिस्थिति से विलोपित कर दिया जाय तो उससे उत्पन्न होने वाला प्रसरण अपने आप ही नियंत्रित हो जायेगा। उसी तरह से मान लिया जाये कि कोई प्रयोगकर्ता पाठ की लम्बाई का प्रभाव सीखने की गति पर क्या पड़ता है, जानने के लिए प्रयोग करना चाहता है। इस प्रयोग में पाठ की अर्थपूर्णता एक महत्वपूर्ण बहिरंग चर होगा क्योंकि इसमें अन्तर होने से पाठ के सीखने की गति सीधे प्रभावित होगी। अत: पाठ की अर्थपूर्णता को नियत्रित करने के लिए शोधकर्ता मात्र निरर्थक पाठ जैसे निरर्थक पद का ही प्रयोग कर सकता है। ऐसा करने से चूंकि पाठ की अर्थपूणता अपने आप विलोपित हो जाती है, अत: उससे उत्पन्न प्रसरण भी नियंत्रित हो जाता है।

14.4.2 स्थिरता (Constancy)

जब बहिरंग चरों को शोध या प्रयोगात्मक परिस्थिति में विलोपित करके नियंत्रित करना संभव नहीं होता है, तो उसके मान को सभी अवस्थाओं में, नियंत्रण की इस विधि में सभी प्रयोज्य को बहिरंग चर के एक ही मान से सामना कराया जाता है ताकि उसका पड़ने वाला प्रभाव सभी प्रयोज्यों पर एक समान हो। उदाहरणस्वरूप, यदि कोई प्रयोग ऐसा है जिसमें 10 प्रयोज्य हैं, तो उन सभी को एक ही कमरे में बैठाकर यदि प्रयोग किया जाता है, प्रभाव सभी प्रयोज्य पर एक समान पड़ेगा। अत: इन चरों से आश्रित चर में हाने वाला परिवर्तन सभी प्रयोज्यों के लिए एक समान होगा। फलत: उनके प्रभाव से शोध के अन्तिम परिणाम में कोई विभेद नहीं होगा। परन्तु कुछ प्रयोज्यों को एक कमरे में तथा कुछ प्रयोज्यो को दूसरे कमरे में बैठाकर जो समरूप जैसे प्रयोज्यों के यौन, उम्र, बुद्धि आदि कभी किसी किसी प्रयोग में महत्वपूर्ण बहिरंग चर के रूप में उपस्थित होते हैं। ऐसे जैविक बहिरंग चरों को नियंत्रित करने के लिए शोधकर्ता सिर्फ उन प्रयोज्यों को चुनता है जो विशेष बहिरंग चर पर समान हो। जैसे, यदि सभी प्रयोज्य एक ही यौन के हो, अर्थात पुरूष हो या स्त्री, तो स्वभावत: यौन का प्रभाव अपने आप नियंत्रित हो जायेगा। उसी ढंग से यदि सभी प्रयोज्यों की उम्र सीमा समान हो जैसे 14-16 वर्ष के उम्र के ही प्रयोज्यों को अध्ययन में रखा जाये तो उससे उम्र का प्रभाव अपने आप नियंत्रित हो जायेगा। उसी ढंग से बुद्धि के भी प्रभाव को नियंत्रित किया जा सकता है। यदि शोध ऐसा है जिसमें दो या दो से अधिक समूह भाग लेंगे तो प्रत्येक समूह में समान बुद्धि लब्धि I.Q. के प्रयोज्यों को रखकर सुमेलित समूह तैयार कर लिया जायेगा। इस प्रक्रिया को **मिलान की प्रक्रिया** (Matching) कहा जाता है। उसी तरह से उपकरण से संबंधित बहिरंग चरों को नियंत्रित करने के लिए यह आवश्यक है कि सभी प्रयोज्यों की अनुक्रियाओं को एक ही उपकरण द्वारा रिकार्ड किया जाय तथा सभी प्रयोगात्मक अवस्थाओं में समरूप उपकरण का प्रयोग किया जाये। ऐसी परिस्थिति में शोधकर्ता विश्वास के साथ यह कह सकता है कि DV में होने वाला परिवर्तन IV में किए गए जोड़ जोड़ (manipulation) के फलस्वरूप हुआ है।

14.4.3 संतुलन(Balancing)

जब शोधकर्ता या प्रयोगकर्ता के लिए बहिरंग चरों को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न प्रयोगात्मक अवस्थाओं (experimental conditions) को एक समान या स्थिर (constant) रखना संभव नहीं हो पाता है, तो वह संतुलन (balancing) के सहारे इन चरों के प्रभाव को नियंत्रित करता है। संतुलन का प्रयोग निम्नांकित दो परिस्थितियों में किया जाता है -

(क) जब शोधकर्ता बहिरंग की पहचान करने में असमर्थ हो, तथा

(ख) जब शोधकर्ता बहिरंग चरों की पहचान करके उसे नियंत्रित करने के लिए कुछ विशेष कदम उठाता हो।

जहाँ तक पहली परिस्थति का प्रश्न है, इसमें शोधकर्ता बहिरंग चरों (extraneous variable) की संख्या तथा उसके स्वरूप के बारे में कुछ नहीं सोचता है बल्कि वह प्रयोज्यों के सभी समूहों (group) के साथ समान ढंग से विवेचन (treatment) करता है | परन्तु स्वतंत्र चर पर प्रयोगात्मक समूह (experimental group) तथा नियंत्रित समूह (control group) का विवेचन अलग ढंग से करता है। इसका परिणाम यह होता है कि जो भी बहिरंग चर प्रयोग के दौरान क्रियाशील होते हैं, वे प्रयोगात्मक समूह (experimental group) तथा नियंत्रित समूह (control group) को समान ढंग

से प्रभावित करते हैं । अत: उनका प्रभाव अपने आप ही संतुलित (balance) होकर तटस्थ (Neutral)हो जाता है और DV में होने वाले परिवर्तन का कारण मात्र IV में किया गया जोड़ तोड़ (manipulation) ही रह जाता है । इसे एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझाया जा सकता है - मान लिया जाय कि किसी प्रयोग में दो बहिरंग चर हैं तथा दो समूह अर्थात एक प्रयोगात्मक समूह (experimental group) है तथा दूसरा नियंत्रित समूह (control gruoup) है और यह भी मान लिया जाय कि इस अध्ययन में एक स्वतंत्र चर (independent variable) है तथा एक आश्रित चर (dependent variable) है । दो बहिरंग चरों के प्रभाव को नियंत्रित करने के लिए उनके प्रभावों को समान रूप से प्रयोगात्मक समूह तथा नियंत्रित समूह पर पड़ने दिया जायेगा । ऐसी परिस्थिति में बहिरंग चरों का प्रभाव अपने आप संतुलित होकर समाप्त हो जायेगा अर्थात उसका कोई विभेदी प्रभाव (discrimination effect) DV पर नहीं पड़ेगा ।

संतुलन की दूसरी परिस्थिति वह होती है जिसमें शोधकर्ता को यह पता होता है कि इस प्रयोग में कौन-कौन बहिरंग चर हैं तथा उनकी संख्या कितनी है । इन चरों को नियंत्रित करने के लिए वह विशेष कदम उठाता है । उदाहरणस्वरूप, मान लिया जाय कि शोधकर्ता को यह पता है कि अमुक प्रयोग या शोध में यौन (Sex) एक बहिरंग चर (extraneous variable) है । इस चर को नियंत्रित करने के लिए सबसे उत्तम तरीका यह है कि सभी प्रयोज्यों का यौन (sex) चाहे पुरूष हो या स्त्री एक ही रखा जाये । परन्तु यदि अध्ययन ऐसा है जिससे दोनों यौन के प्रयोज्यों को लिया जाना आवश्यक है तो शोधकर्ता को ऐसी परिस्थति में विशेष कदम उठाना पड़ता है । ऐसी परिस्थिति में शोधकर्ता या प्रयोगकर्ता प्रयोग के सभी समूहों में दोनों यौन के प्रयोज्यों की संख्या बराबर-बराबर करके यौन के प्रभाव को संतुलित कर सकता है । इस संतुलित अवस्था में DV पर यौन का प्रभाव (यदि कुछ पड़ता हो) तो समान रूप से पड़ेगा । अत: DV पर यौन के प्रभाव से होने वाला विशेष अन्तर सभी समूहों के लिए एक समान होगा जिससे प्रयोग के अन्तिम परिणाम की व्याख्या वैज्ञानिक ढंग से हो पायेगी । इसी ढंग से शोधकर्ता उम्र, जैसे बहिरंग चर (extraneous variable) के प्रभाव को प्रत्येक समूह में प्रत्येक उम्र वर्ग (age classification) से समान प्रयोज्यों (subject) को लेकर संतुलित कर सकता है ।

अभ्यास प्रश्न

1. संतुलन से आप क्या समझते हैं?
2. संतुलन से सम्बंधित विभिन्न परिस्थितियों का उल्लेख करें|
3. स्थिरता तथा विलोपन के मध्य अंतर स्पष्ट करें |
4. विलोपन से आप क्या समझते हैं | इसका उदाहरण दीजिए ?
5. स्थिरता से आप क्या समझते हैं | इसका उदाहरण दीजिए ?
6. संतुलन को एक उदाहरण के माध्यम से समझाएं |

14.4.4 प्रतिसंतुलन (Counterbalancing)

प्रतिसंतुलन का उपयोग करके बहिरंग चरों के प्रभाव को उन प्रयोगों (experiments) या शोधों (researchs) में नियंत्रित किया जाता है जिनमें एक से अधिक प्रयोगात्मक अवस्थाएं (experimental conditions) होती हैं और प्रत्येक अवस्था में प्रत्येक प्रयोज्य कार्यरत रहता है । इस तरह के प्रयोग में जहां प्रत्येक प्रयोज्य प्रत्येक प्रयोगात्मक अवस्था में कार्यरत रहता है,

सामान्यत: दो तरह के क्रम प्रभाव (order effects) (जो बहिरंग चर कहलाते हैं) उत्पन्न होते हैं - अभ्यास प्रभाव (practice effect) तथा थकान प्रभाव (fatigue effect) । ऐसा संभव है कि जब प्रयोज्य प्रयोगात्मक अवस्था A से प्रयोगात्मक अवस्था B में कार्य करना प्रारंभ करें, तो अभ्यास प्रभाव (practice effect) के कारण प्रयोगात्मक अवस्था B में उसका निष्पादन (performance) अर्थात DV पर उसका प्राप्तांक (score) पहले से अधिक हो जाये या यह भी संभव है कि थकान प्रभाव के कारण उसका निष्पादन प्रयोगात्मक अवस्था B में पहले की अपेक्षा कम हो जाय। प्रतिसंतुलन का उपयोग इन दोनों तरह बहिरंग चर अर्थात अभ्यास प्रभाव तथा थकान प्रभाव को संतुलित कर उसे नियंत्रित करने के लिए किया जाता है । प्रतिसंतुलन द्वारा इन दोनों तरह के प्रभावों का प्रभाव प्रत्येक प्रयोगात्मक अवस्था में समान रूप से पड़ता है । अत: प्रभाव अपने आप नियंत्रित हो जाता है ।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि प्रतिसंतुलन (coumterbalancign) का बहिरंग चरों के नियंत्रण के रूप में वही प्रयोग किया जाना चाहिए जब प्रयोगात्मक अवस्था A प्रयोगात्मक अवस्था B में होने वाला अन्तरण (Transfer) तथा प्रतिसम (symmetrical) न होकर अप्रतिसम (asymmetrical) होता है । प्रतिसम अन्तरण (symmetrical transfer) तथा अप्रतिसम अन्तरण (asymmetrical transfer) का एक एक उदाहरण निम्न तालिका में दिया गया है ।

प्रयोगात्मक अवस्था A तथा B के बीच प्रतिसम अन्तरण (Symmetrical transfer) तथा अप्रतिसम अन्तरण (Asymmetrial transfer) का नमूना

प्रयोज्यों की संख्या (N = 10)	प्रतिसम अन्तरण (Symmetrical transfer)	अप्रतिसम अन्तरण (Asymmetrical transfer)
प्रयोज्यों की कुल संख्या का आधा (N = 5)	A B अन्तर 7 9 2	A B अन्तर 7 9 1
प्रयोज्यों की कुल संख्या का आधा (N = 5)	4 6 2	4 8 4

तालिका से स्पष्ट है कि इसमें प्रयोज्यों की कुल संख्या (N = 10) 10 है जिसे दो भागों में बराबर बराबर की संख्या में बांटा गया है । प्रत्येक भाग के प्रत्येक प्रयोज्य को दोनों प्रयोगात्मक अवस्थाओं (A तथा B) में कार्यरत रखा गया है । तालिका से स्पष्ट है कि जब प्रयोज्यों को A अवस्था में पहले रखा गया तो उसे DV पर 7 प्राप्तांक आया तथा बाद के B अवस्था में 9 प्राप्तांक आया। दोनों का अन्तर 9-7 = 2 आया। दूसरी तरफ बाकी आधे प्रयोज्यों का प्राप्तांक A अवस्था में 4 तथा B अवस्था में 6 आया। यहाँ भी अन्तर 6-4 = 2 का है । अत: दोनों समूहों के लिए अवस्था A से B में प्राप्तांक का अन्तर 2-2 था । यह

स्पष्टत: एक प्रतिसम अन्तरण (symmetrical transfer) का उदाहरण है। परन्तु तालिका के दायें कोने में अप्रतिसम अन्तरण को दिखलाया गया है। तालिका से स्पष्ट है कि प्रयोज्यों के आधे समूह द्वारा A तथा B में 2 प्राप्तांक का अन्तर है परन्तु बाकि आधे प्रयोज्यों के लिए A से B में 4 प्राप्तांक का अन्तर है जो स्पष्टत: अप्रतिसम अन्तरण (asymmetrical transfer) को बतला रहा है। प्रतिसंतुलन (counterbalancing) का उपयोग ऐसी ही परिस्थितियों में किया जाता है जहाँ अप्रतिसम अन्तर (asymmetrical transfer) की संभावना होती है।

प्रतिसंतुलन (counterbalancing) द्वारा किस ढंग से अभ्यास प्रभाव (practice effect) तथा थकान प्रभाव (fatigue effect) जैसे बहिरंग चरों (extraneous variables) का नियंत्रण होता है ? इसे एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझाया जा सकता है - मान लिया जाये कि कोई शोधकर्ता परिणाम ज्ञात (knowledge of result) का प्रभाव रेखा आरेखण कार्य (line-drawing task) पर क्या पड़ता है, यह अध्ययन करना चाहता है। यह भी मान लिया जाय कि इसके लिए वह 10 प्रयोज्यों (subjects) का यादृच्छिक ढंग से (randomly) चयन (selection) करता है तथा इस अध्ययन में दो प्रयोगात्मक अवस्थाएं (experimental conditions) ली गई है। एक प्रयोगात्मक अवस्था वह है जिसमें तथा दूसरी प्रयोगात्मक अवस्था वह है जिसमें प्रयोज्यों को अपने कार्य का परिणाम ज्ञात (knowledge of result) नहीं दिया जाता है। (Experimental condition B)। इस प्रयोग में स्पष्ट है कि चूंकि प्रयोज्यों का एक ही समूह दोनों अवस्थाओं अर्थात A एवं B में कार्यरत है, अत: अभ्यास प्रभाव (practice effect) तथा थकान प्रभाव (fatigue effect) हो सकते हैं।

इन दोनों तरह के बहिरंग चरों (extraneous varables) को नियंत्रित करने का एक नमूना तालिका 8.2 में प्रस्तुत किया गया है।

बहिरंग चरों का प्रतिसंतुलन द्वारा नियंत्रण

(Control of extraneous variables by counterbalancing)

प्रयोज्यों का वितरण	Experimental	Conditions
	A	B
कुल प्रयोज्यों की आधी संख्या (N = 5)	WKR	KR
प्रयोज्यों की बाकी आधी संख्या (N = 5)	KR	WKR

WKR = without knowledge of result

KR = Knowledge of result

तालिका 2 से स्पष्ट है कि दोनों प्रयोगात्मक अवस्थाएं अर्थात A और B प्रत्येक प्रयोज्य को समान संख्या में (अर्थात दो - दो बार) दी गई है तथा प्रत्येक अवस्था समान संख्या में प्रत्येक सत्र में रखी गयी हैं। इसके अलावा प्रत्येक अवस्था एक दूसरे से आगे एवं पीछे समान संख्या में दी गई है। इस तरह से स्पष्ट है कि प्रतिसंतुलन के लिए निम्नांकित तीन नियमों (principles) का पालन किया जाना आवश्यक है -

(a) प्रत्येक प्रयोगात्मक अवस्था प्रत्येक प्रयोज्य को समान संख्या में दी जानी चाहिए (Each experimental condition must be persented to each subject equal number of times)

(b) प्रत्येक प्रयोगात्मक अवस्था प्रत्येक एक-दूसरे के आगे पीछे समा रूप से हो (Each experimental condition must precede and follow all other conditions on equal number of times)

अन्त में छात्रों को प्रतिसंतुलन (conterbalancing) तथा संतुलन (balancing) में अन्तर भी बता देना उचित समझते हैं क्योंकि दोनों में समानता अधिक होने से छात्र इन दोनों का एक ही समझने की भूल कर सकते हैं। प्रतिसंतुलन (counterbalancing) का प्रयोग वहाँ किया जाता है जहाँ प्रत्येक प्रयोज्य (subject) को एक से अधिक प्रयोगात्मक अवस्थाओं में कार्यरत रहना पडता है और जहाँ प्रयोगकर्ता का प्रयास यह रहता है कि कम प्रभाव अर्थात अभ्यास प्रभाव तथा थकान प्रभाव का प्रभाव सभी प्रयोगात्मक अवस्थाओं में समान रूप से वितरित हो ताकि इसका प्रभाव DV पर कोई विशिष्ट अन्तर न उत्पन्न कर दे। संतुलन का उपयोग वैसी परिस्थिति में किया जाता है जहाँ प्रत्येक प्रयोज्य को किसी एक ही अवस्था का विवेचन मिलता है, अर्थात प्रत्येक प्रयोज्य को किसी एक ही अवस्था में रखा जाता है परन्तु बहिरंग चरों के प्रभाव को समान रूप से सभी प्रयोगात्मक समूह एवं नियंत्रित समूह पर पड़ने दिया जाता है। ऐसा करने से बहिरंग चरो का प्रभाव अपने आप संतुलित होकर प्रभावहीन हो जाता है।

14.4.5 बहिरंग चर को स्वतंत्र चर के रूप में बदलना (To convert the extrancous variable into an independent variable)

बहिरंग चर के अवांछित प्रभाव को नियंत्रित करने का एक सीधा तरीका यह है कि उसे प्रयोग या शोध में एक स्वतंत्र चर के रूप में बदलकर उपयोग किया जाये। ऐसी अवस्था में बहिरंग चर का अस्तित्व ही खत्म हो जायेगा और साथ ही प्रयोगकर्ता या शोधकर्ता DV पर इस चर के पड़ने वाले प्रभाव का भी विश्लेषण कर पायेगा। उदाहरणस्वरूप मान लिया जाये कि कोई शोधकर्ता या प्रयोगकर्ता मद्यपान या अल्कोहल का प्रभाव टाइपिंग की गति पर क्या पड़ता है यह देखना चाहता है। इसके लिए मान लिया जाय कि वह 20 प्रयोज्यों का चयन करता है जो समान उम्र, एक ही यौन तथा समान बुद्धि लब्धि के हैं। इनमें से 10 प्रयोज्यों को अल्कोहल पीने के दो घंटे बाद टाइपराइटर पर टाइप करने के लिए कहा जा सकता है। बाकि 10 प्रयोज्यों को दूसरा समूह बिना अल्कोहल लिए ही टाइपराइटर पर करने के लिए उसी समय बैठेगा। इस प्रयोगात्मक परिस्थति में एक महत्वपूर्ण बहिरंग चर टाइपराटर का प्रकार है, जिससे DV अर्थात टाइपिंग की गति प्रभावित हो सकती है। सामान्यत: टाइपराइटर के दो प्रकार होते हैं - वैद्युत टाइपराइटर तथा मैन्युअल टाइपराइटर | जिस समूह को पहले प्रकार के टाइपराटर पर टाइप करने के लिए कहा जायेगा स्वभावत: उसकी टाइपिंग गति उस समूह की अपेक्षा जिसे दूसरे प्रकार का टाइपराइटर दिया जायेगा, अधिक होगी। इस बहिरंग चर के प्रभाव का अर्थात टाइपराइटर के अन्तर के प्रभाव को अध्ययन में एक स्वतंत्र चर के रूप में बदल कर नियंत्रित किया जा सकता है। ऐसी परिस्थिति में प्रयोग के दो उद्देश्य हो जायेंगे - पहला टाइपिंग गति पर अल्कोहल के प्रभाव का अध्ययन करना तथा दूसरा टाइपिंग गति पर टाइपराइटर के अन्तरों के प्रभावों का अध्यनन करना, इस तरह से प्रयोग में अब दो समूह अर्थात अल्कोहल पीने

वाला समूह (N=10) और अल्कोहल नहीं पीने वाला (N=10) के जगह पर चार समूह हो जायेंगे जो निम्नांकित तालिका से स्पष्ट है-

दो समूह डिजाइन का चार समूह डिजाइन में परिवर्तन

समूह A (Alcohol)	समूह B (No. Alcohol)	वैद्युत टाइप राइटर मैन्युअल टाइपराइटर	समूह A (Alcohol)	समूह B (No. Alcohol)
10 प्रयोज्य	10 प्रयोज्य		5प्रयोज्य	5प्रयोज्य
			5 प्रयोज्य	5प्रयोज्य

दो समूह डिजाइन चार समूह डिजाइन

दो समूह डिजाइन में प्रयोगकर्ता समूह A तथा समूह B के माध्य की तुलना करके एक निष्कर्ष पर पहुंचेगा । इस डिजाइन में अल्कोहल का पीना IV है, टाइपिंग गति DV है तथा टाइपराइटर का प्रकार अर्थात टाइपराइटर अन्तर प्रमुख बहिरंग चर है । चार समूह डिजाइन से प्रयोगकर्ता इस बहिरंग चर को अर्थात टाइपराइटर के अन्तर को एक स्वतंत्र चर IV के रूप में बदल देता है । इसके परिणामस्वरूप अब प्रयोगकर्ता को चार माध्य ज्ञात करने होंगे - समूह A का माध्य, समूह B का माध्य, वैद्युत टाइपराइटर पर टाइप करने वाले समूह का माध्य तथा मैन्यूअल टाइपराइटर पर टाइप करने वाले समूह का माध्य। प्रथम माध्यों के अन्तर द्वारा टाइपिंग गति पर अल्कोहल के प्रभाव का पता चलेगा तथा अन्तिम दो माध्यों में अन्तर द्वारा टाईपिंग गति पर टाइपराइटर के अन्तरों का पता चलेगा।

अभ्यास प्रश्न

1. प्रतिसंतुलन से आप क्या समझते हैं ?
2. प्रतिसंतुलन से सम्बंधित विभिन्न परिस्थितियों का उल्लेख करें|
3. प्रतिसंतुलन तथा संतुलन के मध्य अंतर स्पष्ट करें |
4. प्रतिसम अन्तरण (asymmetrical transfer) से आप क्या समझते हैं इसका उदाहरण ? दीजिए |
5. समअन्तरण (symmetrical transfer) से आप क्या समझते हैं | इसका उदाहरण दीजिए ?

14.4.6 यादृच्छीकरण (Randomization)

बहिरंग चरों को नियत्रित करने की उपरोक्त पांच विधियों में से किसी भी विधि का उपयोग जब किसी भी कारण से संभव नहीं हो तो वैसी परिस्थिति में उन चरों का नियंत्रण यादृच्छीकरण की प्रविधि से किया जाता है । यादृच्छीकरण एक ऐसी प्रविधि है जिसमें किसी भी जीव (मनुष्य या पशु) को अध्ययन समूह में चुने जाने की संभावना बराबर बराबर होती है । उदाहरणस्वरूप, मान लिया जाए कि किसी वर्ग में 30 छात्र हैं जिनमें से हमें 20 छात्रों का चयन यादृच्छिक ढंग से करना है । इसके लिए सबसे सरल तरीका यह होगा कि 30 छात्रों का नाम समान कागज के टुकड़ों पर लिखकर उसे

समान ढंग से मोड़ दिया जाय और सभी को एक बक्स या डिब्बे में रखकर चुनने को कहा जाये | यह एक यादृच्छीकरण का उदाहरण है क्योंकि इसमें जब भी प्रयोगकर्ता बक्स में कागज के किसी टुकड़े के चुनने का प्रयत्न करता है, उस समय बक्स में उपस्थित सभी टुकड़ों को चुने जाने की संभावना बराबर होती है। यादृच्छीकरण की अन्य विधियां भी है, जिनमें यादृच्छिक संख्या की टेबुल (Table or random numbers) का उपयोग एक महत्वपूर्ण विधि है।

प्रयोग या शोध में यादृच्छीकरण की प्रक्रिया में सिर्फ प्रयोज्यों का ही चयन यादृच्छित ढंग से नहीं किया जाता है बल्कि उन्हें प्रयोगात्मक अवस्था तथा नियंत्रित अवस्था भी ज्ञात तथा अज्ञात बहिरंग चार प्रयोज्यों एवं विभिन्न अवस्थाओं को समान रूप से प्रभावित करते समझे जाते हैं। अत: उन सभी का प्रभाव DV पर यदि कुछ होता भी है, तो समान रूप से होता है। यादृच्छीकरण की महत्ता पर टिप्पणी करते हुए मैकग्यूगान 2 (McGugan, 1990) ने कहा है, यादृच्छीकरण का महत्व यह है कि यह बहिरंग प्रभावों को, चाहे वे जैसे भी हो, यादृच्छिक ढंग से प्रयोगात्मक तथा नियंत्रित अवस्थाओं में बांट देता है। चाहे आप विशेष बहिरंग चरों की पहचान किये हो न किये हो, इसका ऐसा संतुलनकारी प्रभाव होता है क्योकि इसमें अज्ञान एवं अविशिष्ट बहिरंग चरों का प्रभाव सभी परिस्थितियों में समान रूप से वितरित हो जाता है।

यादृच्छीकरण का एक उदाहरण हम इस प्रकार दे सकते हैं - मान लिया जाये कि किसी प्रयोग या शोध में प्रयोगकर्ता यह अध्ययन करना चाहता है कि सीखने की प्रक्रिया सीखने की विभिन्न विधियों से किस प्रकार प्रभावित होती है। मान लिया जाये कि ऐसी विधियाँ तीन हैं, जिनके प्रभावों का यह अध्ययन करना चाहता है- Method A, Method B तथा Method C. इस अध्ययन में विधि Method IV है ,तथा सीखने की प्रक्रिया DV एवं प्रयोज्यों के उम्र, यौन , बुद्धि, शैक्षिक स्तर आदि बहिरंग चर के उदाहरण है। मान लिया जाए कि प्रयोगकर्ता 30 छात्रों के समूह का यादृच्छिक ढंग से किसी विद्यालय चयन करता है। इस अवस्था में तीन प्रयोगात्मक अवस्थाएं है क्योंकि तीन विधियाँ हैं जिनके प्रभावों का अध्ययन करना है। अब प्रयोगकर्ता 30 यादृच्छिक ढंग से चुने गये छात्रों को तीन प्रायोगिक अवस्थाओं में यादृच्छिक ढंग से आवंटित करके प्रयोग की कार्रवाई शुरू करेगा। प्रयोज्यों का चयन यादृच्छिक ढंग से (rendomly) करने से तथा उनका विभिन्न अवस्थाओं से यादृच्छिक आवंटन (random assignment) करने से प्रयोज्यों के बीच उम्र, यौन, बुद्धि, शैक्षिक स्तर आदि बहिरंग चरों से उत्पन्न वैयक्तिक विभिन्नता समान्यत: साम्य हो जाता है और तब उनका प्रभाव आश्रित चर अर्थात DV पर विशिष्ट रूप से नहीं पड़ पाता है।

अभ्यास प्रश्न

1. यादृच्छीकरण से आप क्या समझते हैं ?
2. यादृच्छीकरण प्रक्रिया को उदाहरण के माध्यम से समझाएं|

14.5 सारांश

- प्रयोगात्मक परिस्थिति में ऐसे बहिरंग चरों के प्रभावों को नियंत्रण में रखना जो अनावश्यक रूप से स्वतंत्र चर के साथ मिलकर आश्रित चर को प्रभावित करते हैं, चरों का नियंत्रण कहलाताहै|
- विलोपन, संतुलन, प्रति-संतुलन, स्थिरता, रूपान्तरण एवं यादृच्छीकरण के माध्यम से चरों का नियंत्रण किया जाता है |

14.6 शब्दावली

- **विलोपन:** चरों के नियंत्रण की ऐसी विधि जिसमें प्रयोगकर्ता बहिरंग चरों को प्रयोगात्मक परिस्थिति से निष्कासित कर देता है ताकि उसका प्रभाव स्वतः ही विलुप्त हो जाये।
- **संतुलन:** संतुलन से तात्पर्य विभिन्न प्रयोगात्मक अवस्थाओं में बहिरंग चरों का प्रभाव समान रूप से पड़ने देने से है।
- **रूपान्तरण:** जब बहिरंग चरों को स्वतंत्र चर में परिवर्तित करके उसके अवांछित प्रभाव को नियंत्रित किया जाता है तो उसे रूपान्तरण कहते हैं।

14.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. चरों के नियंत्रण को विस्तार से समझाएं |नियंत्रण की विभिन्न विधियों का उदाहरण सहित वर्णन करें।
2. प्रतिसंतुलन प्रक्रिया को समझाते हुए विभिन्न परिस्थितियों का उल्लेख करें|
3. प्रतिसंतुलन के द्वारा बहिरंग चरों का नियंत्रण किन परिस्थितियों में और कैसे होता है? उदाहरण देकर बताये।

14.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) मनोविज्ञान,समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल-बनारसीदास, दिल्ली।
- एच.के. कपिल (2001) अनुसंधान विधियां (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा।
- एफ.एन. करलिंगर (2002) फाउण्डेशन्स ऑफ विहैवियरल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं विंसटन, इंक, न्यूयार्क।
- राम आहूजा (2009) रिसर्च मेंथड्स, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर |
- स्वअनुदेशन सामग्री (एम.ए.मनोविज्ञान), उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी |

इकाई - 15

मनोवैज्ञानिक परीक्षण का स्वरूप एवं प्रकार
Nature and types of Psychological tests

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 मनोवैज्ञानिक परीक्षण का स्वरूप

15.3.1 एक अच्छे मनोवैज्ञानिक परीक्षण की विशेषताएँ

15.3.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण की सीमाएँ

15.3.3 मनोवैज्ञानिक परीक्षण के उद्देश्य तथा उपयोगिताएँ

15.4 मनोवैज्ञनिक परीक्षण के प्रकार

15.4.1 परीक्षण प्रशासन की शर्तों की कसौटी

15.4.2 अंकन की कसौटी

15.4.3 अनुक्रिया से सम्बद्ध समय सीमा की कसौटी

15.4.4 एकांशों के स्वरूप की कसौटी

15.4.5 मानकीकरण की कसौटी

15.4.6 उद्देश्य की कसौटी

15.5 प्रक्षेपी प्रविधि या प्रक्षेपी परीक्षण

15.6 प्रक्षेपी परीक्षण के विभिन्न प्रकार

15.7 प्रक्षेपी प्रविधि की मान्यताएं

15.8 बुद्धि परीक्षण का वर्गीकरण

15.9 वैयक्तिक बुद्धि परीक्षण तथा सामूहिक परीक्षण

15.10 शाब्दिक तथा अशाब्दिक परीक्षण

15.11 सारांश

15.12 शब्दावली

15.13 निबन्धात्मक प्रश्न

15.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची

15.1 प्रस्तावना

इकाई 14 में आपने चर के नियंत्रण के सन्दर्भ में विस्तृत अध्ययन किया। आपने खासकर यह देखा कि किस प्रकार किसी शोध में, खासकर प्रयोगात्मक शोध में, चरों का हस्तचालन एवं नियंत्रण किया जाता है। किसी भी वैज्ञानिक शोध में चरों को मापने हेतु मनोवैज्ञनिक परीक्षण का प्रयोग किया जाता है| प्रस्तुत इकाई में चरों के मापन में उपयोगी मनोवैज्ञानिक परीक्षण के बारे में आप अध्ययन करेंगे तथा मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के विभिन्न प्रकारों का आधार क्या है, यानी, किन-किन कसौटियों के आधार पर मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के विभिन्न रूप विकसित हुए हैं, इसका भी अध्ययन करेंगे|

मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की जानकारी एवं इनके विभिन्न प्रकारों का ज्ञान, आपको शोध करने हेतु चरों के मापन में सहायता प्रदान करेगा।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप -

- मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के स्वरूप पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- मनोवैज्ञानिक परीक्षण को परिभाषित कर उसकी विशेषताऐं बता सकेंगे।
- मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के प्रकार की विभिन्न कसौटियों को रेखांकित कर सकेंगे|
- विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षणों में अन्तर स्पष्ट कर सकें।

15.3 मनोवैज्ञानिक परीक्षण का अर्थ व स्वरूप (Meaning and nature of Psychological test)

मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन को कई नामों से जाना जाता है। इसे मनोवैज्ञानिक परीक्षण, मनोवैज्ञानिक निर्धारण, मनोवैज्ञानिक मापन इत्यादि कई नामों से जाना जाता है। एक मनोवैज्ञानिक परीक्षण व्यक्ति के व्यवहारिक अध्ययन का वह साधन है जो उसके प्रति निर्णय लेने एवं उसे समझने में सहायक होता है। इसके द्वारा व्यक्ति की विभिन्न योग्यताओं का मापन एवं उसके व्यक्तित्व एवं चरित्र का अध्ययन भी संभव होता है। बेस्ट (1963) के अनुसार, ''मनोवैज्ञानिक परीक्षण वह उपकरण है जिसे मानव व्यवहार के किसी पक्ष में मापन एवं गणना के लिए तैयार किया जाता है।'' फ्रीमैन (1965) के शब्दों में, ''मनोवैज्ञानिक परीक्षण वह मानकीकृत यंत्र है जो समस्त व्यक्तित्व के पक्ष या अधिक पहलुओं का मापन शाब्दिक या अशाब्दिक अनुक्रियाओं या अन्य किसी प्रकार के व्यवहार के विभिन्न व्यवहार के माध्यम से करता है। ''इस प्रकार मनोवैज्ञानिक परीक्षण वह साधन है जिनके द्वारा सम्पूर्ण व्यवहार के विभिन्न मनोवैज्ञानिक पहलुओं जैसे - योग्यताओं, क्षमताओं, उपलब्धियों, रूचियों एवं व्यक्तित्व विशेषताओं का परिमाणात्मक तथा गुणात्मक अध्ययन होता है। यह व्यक्ति को समझने तथा समूह में उसकी तुलना करने में भी सहायक होता है। चैपलिन 1975 ने परीक्षण की जो परिभाषा दी है, वह और भी व्यापक है। उसके अनुसार ''निर्धारण का तात्पर्य उस मापक से है, जो मात्रात्मक प्रदत्त देता है।'' रेबर तथा रेबर 2003 ने भी चैपलिन के विचार का समर्थन किया तथा मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन की परिभाषा देते हुए कहा है, ''व्यापक रूप से मूल्यांकन का अर्थ - एक कार्यप्रणाली है, जिसका व्यवहार एक कारक को मापने या किसी योग्यता की जाँच कर लेने के लिए किया जाता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन के संबंध में निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं –

1. मनोवैज्ञानिक निर्धारण एक मापक, मापनी या कार्यप्रणाली है।
2. मनोवैज्ञानिक निर्धारक में मानकीकृत प्रश्नों (Standardized questions) की एक सूची होती है, लेकिन कुछ परीक्षण, ऐसे भी होते हैं, जिनमें प्रश्नों के बदले अन्य सामग्रियों (Materials) का उपयोग किया जाता है।
3. मनोवैज्ञानिक निर्धारण के द्वारा किसी मानसिक योग्यता जैसे बुद्धि, अभिवृत्ति या अभिरूचि की जांच की जाती है। मनोवैज्ञानिक निर्धारण वास्तव में अन्य परीक्षण की तरह मात्रात्मक प्रदत प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में किसी मानसिक योग्यता का मात्रात्मक मापन करता है।
4. मनोवैज्ञानिक परीक्षण एक मानकीकृत परीक्षण है जिसमें विश्वसनीयता, वैधता, प्राप्तांक-लेखन में वस्तुनिष्ठता आदि के गुण पाये जाते हैं।
5. इसके द्वारा दो या दो से अधिक व्यक्तियों की तुलना किसी भी शीलगुण या मानसिक प्रक्रिया के एक या अनेक पहलुओं पर की जाती है।
6. इसके द्वारा व्यक्तियों के शीलगुणों का मापन गुणात्मक तथा परिमाणात्मक दोनों ही तरह से होता है। अतः कहा जा सकता है कि मनोवैज्ञानिक परीक्षण व्यक्तियों के बीच वैयक्तिक भिन्नता की माप का एक मानकीकृत साधन है।

15.3.1 मनोवैज्ञानिक परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Psychological Test)

एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण (मूल्यांकन) का अर्थ वह परीक्षण है, जिसमें वैज्ञानिक परीक्षण के गुण या विशेषताएं पाई जाती हैं, जो निम्नलिखित हैं -

1 **विश्वसनीयता (Reliability) -** किसी भी वैज्ञानिक परीक्षण में विश्वसनीयता का गुण होना आवश्यक है। अत: एक अच्छे या उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण में भी इस गुण का होना अनिवार्य है। एक विश्वसनीय परीक्षण उसे कहते हैं, जिसके द्वारा भिन्न - भिन्न समयों में प्राप्त परिणामों में संगति तथा सहमति पायी जाती है।

2 **वैधता (Validity) –** किसी वैज्ञानिक परीक्षण की एक आवश्यक शर्त उसकी वैधता होती है। अत: एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण में इस विशेषता का होना भी अनिवार्य है। वैधता का अर्थ है कि जिस उद्देश्य से किसी परीक्षण का निर्माण किया गया है, वह उद्देश्य उस परीक्षण से पूरा हो रहा है या नहीं। अत: किसी मनोवैज्ञानिक परीक्षण को उसी हद तक वैध माना जायेगा, जिस हद तक वह उद्देश्य को पूरा करता हो, जिसके लिए उसका निर्माण किया गया है।

3 **मानक (Norms) –** किसी भी वैज्ञानिक परीक्षण का अपना निश्चित मापक होता है। अत: अच्छे मनोवैज्ञानिक परीक्षण में मानक का होना जरूरी है। मानक का अर्थ वह संख्या, मूल्य या स्तर है, जो किसी समूह का प्रतिनिधि हो और जिसके आधार पर व्यक्तिगत निष्पादन या उपलब्धि की व्याख्या की जा सके।

4 **वस्तुनिष्ठता (Objectivity)-** एक वैज्ञानिक परीक्षण में वस्तुनिष्ठता का गुण पाया जाता है। यह गुण मनोवैज्ञानिक परीक्षण के लिए भी आवश्यक है। वस्तुनिष्ठता का अर्थ यह है कि

परीक्षण के निर्माण तथा प्राप्तांक के निर्धारण (Scoring) पर परीक्षक (Tester) की पूर्वधारणा (Prejudice), पूर्वअनुभूति (past experience), पक्षपात (bises) आदि व्यक्तिगत कारकों (Subjevtive factors) का प्रभाव नहीं पड़ता हो, जो परीक्षण इन व्यक्तिगत कारकों से जिस हद तक मुक्त होता है वह उसी हद तक वस्तुनिष्ठ हो पाता है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण बनाने वाला ऐसे कथनों (Statements) अथवा एकांशों का निर्माण करता है जो सभी व्यक्तियों के लिए एक ही अर्थ रखते हैं। इसके लिए एकांश विश्लेषण तथा एकांश चयन पर विशेष ध्यान देना पड़ता है। इसे एकांशों की वस्तुनिष्ठता कहते हैं। दूसरी बात यह है कि परीक्षण के प्रत्येक एकांश से संबंधित परीक्षार्थी की प्रतिक्रिया का अंकन (स्कोरिंग) इस प्रकार किया जाता है कि परीक्षण के व्यक्तिगत कारकों का कोई प्रभाव उस पर नहीं पड़े। इसलिए सभी परीक्षणों के द्वारा समान अंक प्राप्त होते हैं। सामान्यत: इसके लिए परीक्षक प्राप्तांक निर्धारित करने की एक कुंजी का निर्माण करता है जिससे वस्तुनिष्ठ रूप से अंकन (स्कोरिंग) करना आसान बन जाता है। इसी तरह वस्तुनिष्ठता को स्कोरिंग की वस्तुनिष्ठता कहते हैं।

5 **व्यवहारिकता (Practicability)** – किसी भी वैज्ञानिक परीक्षण में व्यवहारिकता का गुण भी होना आवश्यक है। यह गुण एक अच्छे मनोवैज्ञानिक परीक्षण के लिए भी आवश्यक है। यहाँ व्यवहारिकता का अर्थ यह है कि परीक्षण ऐसा हो जिसका व्यवहार कोई भी व्यक्ति निर्देशन के अनुसार परीक्षण पुस्तिका की सहायता से कर सके।

6 **मितव्ययिता (Economy) -** एक वैज्ञानिक परीक्षण या एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण का एक मुख्य गुण मितव्ययिता है। इसका अर्थ यह है कि परीक्षण कितना कम खर्चीला है और उसके उपयोग करने में कितना समय लगता है। सामान्यत: जो परीक्षण कम खर्चीला होता है और जिसमें कम समय तथा श्रम लगता है उसे उत्तम परीक्षण कहते हैं।

7 **रूचि (Interest)** - एक उत्तम परीक्षण में रूचि बनाये रखने का गुण भी होना चाहिए। उत्तम परीक्षण ऐसा होता है कि प्रयोज्य या परीक्षार्थी में शुरू से अन्त तक रूचि के साथ करने की प्रवृत्ति कायम रहती है।

8 **विभेदीकरण (Discrimination) -** एक उत्तम परीक्षण में यह विशेषता होती है कि वह किसी योग्यता या शील गुण के आधार पर भिन्न भिन्न व्यक्तियों के बीच विभेद कर सकता है। कौन व्यक्ति वास्तव में उच्च या निम्न योग्यता वाला है और कौन औसत योग्यता वाला है, इसका निर्धारण वह आसानी से कर सकता है।

9 **व्यापकता (Comprehensiveness) -** एक वैज्ञानिक परीक्षण में व्यापकता का गुण भी होना आवश्यक है। इसका अर्थ यह है कि जिस योग्यता को मापने के लिए परीक्षण का निर्माण किया गया है, वह उस योग्यता के सभी पक्षों को मापने में सफल हैं या नहीं।

15.3.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण की सीमाएँ (Limitations of Psychological Test)

मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन की कई वैज्ञानिक विशेषताओं का उल्लेख किया गया है। फिर भी इसे पूरी तरह वैज्ञानिक परीक्षण नहीं माना जा सकता है, क्योंकि इसकी कई सीमाएं या कठिनाईयां हैं -

1 मनोवैज्ञानिक परीक्षण की एक कठिनाई यह है कि इसमें पूर्ण परिमापन संभव नहीं है। किसी भी मानसिक योग्यता का मात्रात्मक मापन मनोवैज्ञानिक परीक्षण द्वारा पूरी तरह संभव नहीं हो पाता है।

2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण की दूसरी कठिनाई यह है कि इसमें पूर्ण वस्तुनिष्ठता संभव नहीं है। परीक्षण का निर्माण करते समय अर्थात कथनों या एकांशों को बनाते समय परीक्षण बनाने वाला अपने व्यक्तित्व कारकों से कुछ न कुछ अवश्य ही प्रभावित हो जाता है।

3 मनोवैज्ञानिक परीक्षण में पूर्ण यर्थाथता संभव नहीं होती है। कारण यह है कि जिस परीक्षण में वस्तुनिष्ठता का अभाव जिस हद तक होता है, उसी हद तक उसमें यर्थाथता की कमी होती है।

4 मनोवैज्ञानिक परीक्षण में मितव्ययिता केवल आंशिक रूप में संभव होता है। अधिकांश मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग करने में समय अधिक लगता है तथा श्रम अधिक करना पड़ता है।

5 मनोवैज्ञानिक परीक्षण में व्यवहारिकता का गुण भी पूरी तरह संभव नहीं है। अधिकांश मनोवैज्ञानिक परीक्षण ऐसे होते हैं जिनका उपयोग करने के लिए अनुभव या प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

अत: उपर्युक्त सीमाओं या कठिनाइयों के कारण मनोवैज्ञानिक परीक्षण उतने वैज्ञानिक नहीं हो पाते हैं जितने कि भौतिक विज्ञान आदि यर्थार्थ विज्ञान में व्यवहार होने वाले परीक्षण वैज्ञानिक होते हैं।

15.3.3 मनोवैज्ञानिक परीक्षण के उद्देश्य या उपयोगिताएँ (Purpose or Uses of Psychological Tests)

किसी भी परीक्षण के कुछ निश्चित उद्देश्य तथा लाभ होते हैं। मनोवैज्ञानिक परीक्षण के भी कई उद्देश्य तथा लाभ हैं, जिनमें निम्नलिखित विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं -

1 **वैयक्तिक भिन्नताएं (Individual Differences) -** मनोवैज्ञानिक परीक्षण का एक मौलिक उद्देश्य वैयक्तिक भिन्नताओं को निर्धारण करना है। अत: व्यक्तिगत भिन्नताओं की जानकारी प्राप्त करने में मनोवैज्ञानिक परीक्षण सहायक होते हैं। जैसे बुद्धि परीक्षण के व्यवहार से पता चल जाता है कि सभी व्यक्तियों में बौद्धिक योग्यता की मात्रा अलग अलग हुआ करती है।

2 **भविष्यवाणी (Prediction)** – मनोवैज्ञानिक परीक्षण के आधार पर किसी व्यक्ति के संबंधमें भविष्यवाणी करना संभव होता है। जैसे लिपिक अभिवृति परीक्षण पर जो व्यक्ति उच्च अंक प्राप्त करता है उसके संबंधमें भविष्यवाणी की जा सकती है कि वह एक सफल लिपिक प्रमाणित हो सकता है।

3 **निर्देशन (Instruction)** – मनोवैज्ञानिक परीक्षण की सहायता से किसी व्यक्ति के संबंध में न केवल भविष्यवाणी करना संभव होता है बल्कि उसे निर्देशन देना भी संभव होता है। मुख्य रूप से शैक्षिक निर्देशन तथा व्यवहारिक निर्देशन आवश्यक होता है। जैसे दो व्यक्ति यांत्रिक अभिवृत्ति परीक्षण पर उच्च अंक प्राप्त करता है। उसे निर्देशन दिया जा सकता है कि

मेकेनिक का व्यवसाय करें। इस तरह जो बालक बुद्धि परीक्षण पर उच्च अंक प्राप्त करता हो उसे विज्ञान पढ़ने का निर्देशन दिया जा सकता है।

4 **नियंत्रण (Control) -** मनोवैज्ञानिक परीक्षण का एक उद्देश्य नियंत्रण है। किसी परीक्षण के आधार पर प्राप्त अंकों के आलोक में किसी व्यक्ति को नियंत्रित करना संभव हो सकता है। जैसे कोई बालक निम्न बौद्धिक योग्यता के कारण विज्ञान से पिछड़ गया हो तो उसे विज्ञान की शिक्षा से अलग रखने की सलाह दी जा सकती है। इसी तरह नैदानिक क्षेत्रों में भी नियंत्रण की उपयोगिता देखी जा सकती है।

5 **निरूपण (Diagnosis)** – मनोवैज्ञानिक परीक्षण का एक उद्देश्य किसी व्यक्ति के निरूपण में सहायता करना भी है। कुछ बच्चे शिक्षा में पिछड़ जाते हैं। ऐसे बच्चों पर आवश्यक परीक्षणों का उपयोग करके उनके पिछड़ेपन का उपयोग करके पता लगाया जा सकता है कि अमुक व्यक्ति किसी मानसिक रोग से पीड़ित है और उसका कारण क्या है?

6 **अनुसंधान (Research)** – मनोवेज्ञानिक परीक्षण का एक मुख्य उद्देश्य भिन्न भिन्न क्षेत्रों में शोधकार्यों में सहायता करना है। मनोवैज्ञानिक शोधों में भिन्न भिन्न प्रकार के परीक्षणों का उपयोग किया जाता है और प्राप्त परिणामों के आधार पर नये नये सिद्धान्तों एवं नियमों का निर्माण किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

1. मनोवैज्ञानिक परीक्षण को परिभाषित कीजिये |
2. मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन से आप क्या समझते हैं | इसका उदाहरण दीजिए ?
3. मनोवैज्ञानिक परीक्षण की विशेषताओं का वर्णन कीजिये |
4. मनोवैज्ञानिक परीक्षण की उपयोगिताओं का वर्णन कीजिये |
5. मनोवैज्ञानिक परीक्षण की सीमाओं का उल्लेख कीजिये |

15.4 मनोवैज्ञानिक परीक्षण के प्रकार (Types of Psychological test)

अभी तक आप ने मनोवैज्ञानिक परीक्षण के स्वरूप एवं उसकी विशेषताओं के बारे में जानकारी प्राप्त की। आपने देखा कि एक अच्छा मनोवैज्ञानिक परीक्षण अपने में वस्तुनिष्ठता, विश्वसनीयता, वैधता व मानकीकरण का गुण समाहित किए रहता है। अब हम यहाँ मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के विभिन्न प्रकारों की चर्चा करेंगे। चूँकि मनोवैज्ञानिक परीक्षण किसी खस गुण, विशेषता, व्यवहार या मानसिक प्रक्रिया को मापने हेतु बनाया जाता है। अतः विभिन्न कसौटियों के आधार पर इसके प्रकारों में भी भिन्नता पाई गई है। कुछ महत्वपूर्ण कसौटियां, जिनके आधार पर हम मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का वर्गीकरण करते हैं, निम्नलिखित हैं-

(i) परीक्षण प्रशासन की शर्तों की कसौटी
(ii) अंकन की कसौटी
(iii) अनुक्रिया से सम्बद्ध समयसीमा की कसौटी-
(iv) एकांशों के स्वरूप की कसौटी
(v) मानकीकरण की कसौटी

(vi) उद्देश्य की कसौटी

15.4.1 परीक्षण प्रशासन की शर्तो की कसौटी (Criteria of the condition of test administration)

कोई भी परीक्षण एक समय में किसी एक व्यक्ति पर प्रशासित किया जा सकता है या फिर एक बड़े समूह पर। परीक्षण प्रशासन की शर्तो की कसौटी के आधार पर मनोवैज्ञानिक परीक्षण के दो प्रकार बताये गये हैं-

(क) वैयक्तिक परीक्षण तथा

(ख) सामूहिक परीक्षण

1) **वैयक्तिक परीक्षण** -वैयक्तिक परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसे एक समय में एक ही व्यक्ति पर प्रशासित किया जा सकता है। इस परीक्षण को प्रशासित करने हेतु परीक्षणकर्ता या शोधकर्ता को विशेष प्रशिक्षण या परीक्षण के विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है। बुद्धि मापन हेतु निर्मित कई परीक्षण वैयक्तिक परीक्षण स्वरूप के हैं जिनमें कोह द्वारा निर्मित 'ब्लॉक डिजाइन बुद्धि परीक्षण' महत्वपूर्ण है।
2) **सामूहिक परीक्षण** -सामूहिक परीक्षण उस परीक्षण को कहा जाता है जिसका प्रशासन एक समय में सामान्यतः एक से अधिक व्यक्तियों पर किया जाता है | बुद्धि मापन हेतु निर्मित श्याम स्वरूप जलोटा का मानसिक बुद्धि परीक्षण, एम0सी0 जोशी का मानसिक बुद्धि परीक्षण सामूहिक परीक्षण का अच्छा उदाहरण है।

15.4.2 अंकन की कसौटी (criteria of scoring)

अंकन को प्राप्तांक लेखन भी कहते हैं। किसी परीक्षण के प्रश्नों या कथनों का उत्तर देने पर अंक देने की प्रक्रिया होती है। अंकन की कसौटी के आधार पर परीक्षण को निम्नांकित दो भागों में बाँटा गया है-

(क) वस्तुनिष्ठ परीक्षण

(ख) आत्मनिष्ठ परीक्षण

1) **वस्तुनिष्ठ परीक्षण** -वस्तुनिष्ठ परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिनके उत्तरों को अंक देने की विधि अर्थात प्राप्तांक-लेखन विधि स्पष्ट होती है और वह परीक्षकों के आत्मगत निर्णय से बिल्कुल ही प्रभावित नहीं होती है। ऐसे परीक्षणों के एकांशों के उत्तर का अंकन में सभी परीक्षक एक ही निष्कर्ष पर पहुँचते हैं। बहु-विकल्पी एकांश, सही गलत एकांश तथा मिलान-एकांश वाले परीक्षण वस्तुनिष्ठ परीक्षण होते हैं।
2) **आत्मनिष्ठ परीक्षण** -आत्मनिष्ठ परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिनके एकांशों के उत्तरों को अंक देने की विधि में काफी भिन्नता पाई जाती है। निबन्धात्मक परीक्षा जिसका प्रयोग शिक्षक कक्षा के उपलब्धियों की जाँच करने में अक्सर करते हैं आत्मनिष्ठ परीक्षण का अच्छा उदाहरण है।

15.4.3 अनुक्रिया से सम्बद्ध समय-सीमा की कसौटी (Criteria related to reaction time of response)

परीक्षण के एकांशों का उत्तर कोई अनुक्रियादाता या परीक्षार्थी कितनी देर में देगा यह भी परीक्षण बनाते समय शोधकर्ता द्वारा तय कर दिया जाता है। परीक्षण के एकांशों के प्रति अनुक्रिया करने की समय सीमा के आधार पर परीक्षण को दो भागों में बाँटा गया है-

(क) क्षमता परीक्षण तथा

(ख) गति परीक्षण

1) **क्षमता परीक्षण** -क्षमता परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसके सभी एकांशों का उत्तर देने का पर्याप्त समय छात्रों को दिया जाता है। ऐसे एकांशों की कठिनता स्तर भिन्न भिन्न होती-है। होता है कि व्यक्ति को किसी वस्तु इस परीक्षण का उद्देश्य यह मापना , तथ्य, घटना आदि के बारे में कितना ज्ञान है।

2) **गति परीक्षण** -गति परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसमें एक सख्त समय सीमा होती है और उसके भीतर ही व्यक्तियों को सभी एकांशों का जवाब देना होता है। ऐसे परीक्षण के एकांश आसान होते हैं और उनकी कठिनता स्तर लगभग समान ही होती-है। ऐसे परीक्षण का मूल उद्देश्य यह परख करना होता है कि कितनी तेजी से छात्र किसी कार्य को कर सकते हैं। अधिकतर लिपिक अभिक्षमता परीक्षण इसी श्रेणी के परीक्षण होते हैं। डी.ए.टी. (डिफरेशिंयल एप्टीच्यूड टेस्ट) गति परीक्षण का एक उत्तम उदाहरण है।

   सही अर्थ में बहुत कम ही परीक्षण पूर्णतः क्षमता परीक्षण या पूर्णतः गति परीक्षण होते हैं। एक ही परीक्षण एक छात्र के लिए गति परीक्षण का काम कर सकता है यदि उसके लिए प्रश्न आसान है किन्तु वही परीक्षण दूसरे छात्र के लिए जिन्हें उनके एकांश कठिन लगते हैं, क्षमता परीक्षण का काम कर सकता है।

15.4.4 एकांशों के स्वरूप की कसौटी (Criteria of the nature of items)

काई परीक्षण पढ़े-लिखे लोगों के लिए बनाया गया या अनपढ़ों के लिए। उसके एकांश पढ़कर जवाब देने लायक हैं या कुछ चित्र बनाकर या निर्माण करके। इस कसौटी के आधार पर परीक्षण को निम्नांकित चार भागों में बाँटा गया है-

(क) शाब्दिक परीक्षण

(ख) अशाब्दिक परीक्षण

(ग) निष्पादन परीक्षण

(घ) अभाषाई परीक्षण

1) **शाब्दिक परीक्षण** -शाब्दिक परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसमें एकांश एवं निर्देश को व्यक्ति स्वयं पढ़ता है तथा फिर उसे समझ कर उसका उत्तर देता है। ऐसे परीक्षण द्वारा उन क्षमताओं की माप होती है जिसमें पढ़ने एवं लिखने की अहमियत अधिक होती है। जलोटा सामूहिक सामान्य मानसिक क्षमता परीक्षण तथा में हता सामूहिक बुद्धि परीक्षण इस परीक्षण के अच्छे उदाहरण है। इसे पेंसिल-और-कागज परीक्षण भी कहा जाता है क्योंकि इसमें व्यक्ति एकांशों के उत्तर को दिए गए उत्तर पत्र पर लिखता है।

2) **अशाब्दिक परीक्षण** -अशाब्दिक परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसमें शाब्दिक बुद्धि परीक्षण की तुलना में भाषा पर कम बल डाला जाता है। ऐसे परीक्षण के निर्देश में तो भाषा का प्रयोग होता है परन्तु एकांशों में भाषा का प्रयोग नहीं होता है। प्रत्येक एकांश में चित्र के सहारे एक समस्या उत्पन्न की जाती है और उसका उत्तर व्यक्ति को दिए गए चित्रों में से ही खोजकर निकालना होता है। रैवेन प्रोग्रेसिव मैट्रिसेज जो एक बुद्धि परीक्षण हैं, अशाब्दिक परीक्षण का अच्छा उदाहरण है।

3) **निष्पादन परीक्षण** -निष्पादन परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसमें भाषा का प्रयोग निर्देश देने में हो सकता है या चित्राभिनय तथा हाव भाव द्वारा निर्देश देने पर भाषा का प्रयोग-नहीं भी हो सकता है परन्तु इनके एकांश में भाषा का प्रयोग बिलकुल ही नहीं होता है और व्यक्ति के सामने कुछ वस्तुएँ वास्तविक रूप से (न कि चित्र के रूप में) उपस्थित होती है जिसमें जोड़-तोड़ करके उनका उत्तर ढूँढ निकालना होता है। प्रसिद्ध परीक्षण जैसे पास एलांग परीक्षण, घन रचना परीक्षण आदि इसके कुछ महत्वपूर्ण उदाहरण है।

4) **अभाषाई परीक्षण** -अभाषाई परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसमें भाषा का प्रयोग न तो एकांश में और ना ही निर्देश देने में ही होता है। व्यक्ति को मात्र संकेत देकर प्रत्येक एकांश के सही उत्तर को बतलाना होता है। इस तरह ऐसा परीक्षण भाषा की चंगुल से पूर्णतः मुक्त होता है। कैटल कलचर फ्री या फेयर परीक्षण, जो एक बुद्धि परीक्षण है, इसका अच्छा उदाहरण हैं।

15.4.5 मानकीकरण की कसौटी (Criteria of standardization)

परीक्षण की रचना कभी तो तात्कालिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए की जाती है तो कभी दीर्घकालिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए इसका मानक तैयार किया जाता है।

माननीकरण की कसौटी के आधार पर परीक्षण को निम्नांकित दो भागों में बाँटा गया है-

(क) शिक्षक-निर्मित परीक्षण तथा

(ख) मानकीकृत परीक्षण

1) **शिक्षक निर्मित परीक्षण** -ऐसा परीक्षण जो कक्षा के शिक्षकों द्वारा छात्रों के उपलब्धि का आंकलन करने के लिए किया जाता है शिक्षक निर्मित परीक्षण कहा जाता है | ऐसे परीक्षण के क्रियान्वयन तथा प्राप्तांक लेखन के तरीके स्वयं शिक्षक ही निर्धारित करते हैं। संभवतः ऐसे परीक्षण का कोई मानक तैयार नहीं किया जाता है परन्तु कभीकभी यह देखा गया है कि शिक्षक - कक्षा के भीतर ही प्रयोग करने के लिए एक काम चलाऊ मानक तैयार कर लेते हैं।

2) **मानकीकृत परीक्षण** -मानकीकृत परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसे परीक्षण विशेषज्ञ अन्य शिक्षकों एवं पाठ्यक्रम विशेषज्ञों की मदद से तैयार करते हैं। ऐसे परीक्षण के क्रियान्वयन तथा प्राप्तांक लेखन का तरीका निश्चित एवं वस्तुनिष्ठ होता है तथा इसका एक मानक भी होता है। इसका परिणाम यह होता है कि इस परीक्षण का प्रयोग सभी तरह के छात्रों पर आसानी से किया जा सकता है और इसके परिणामों का आपस में वैज्ञानिक तुलना कर एक निश्चित निष्कर्ष पर आसानी से पहुँचा जा सकता है।

15.4.6 उद्देश्य की कसौटी (Criteria of objective)

मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का निर्माण विशिष्ट उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया जाता है, यानी, कभी बुद्धि मापने हेतु तो कभी व्यक्तित्व मापने हेतु आदि।

परीक्षण के उद्देश्य की कसौटी के आधार पर परीक्षण को निम्नलिखित मुख्य चार भागों में बाँटा गया हैं-

(क) बुद्धि परीक्षण

(ख) अभिक्षमता परीक्षण

(ग) व्यक्तित्व परीक्षण

(घ) उपलब्धि परीक्षण

1) **बुद्धि परीक्षण -**बुद्धि परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसका उद्देश्य व्यक्तियों की बुद्धि को मापना होता है। बुद्धि परीक्षण शाब्दिक, अशाब्दिक; क्रियात्मक एवं अभाषाई कुछ भी हो सकता है।
2) **अभिक्षमता परीक्षण -**अभिक्षमता परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसका उद्देश्य छात्रों की अभिक्षमता का मापन करना होता है। अभिक्षमता से तात्पर्य किसी विशेष क्षेत्र में व्यक्तियों के भीतर छिपा हुआ अन्तःशक्ति से होता है। विभेदक अभिक्षमता परीक्षण, जिसके द्वारा व्यक्तियों के सात तरह के अभिक्षमताओं का मापन होता है, इस तरह के परीक्षण का एक अच्छा उदाहरण है।
3) **व्यक्तित्व परीक्षण -**व्यक्तित्व परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसके द्वारा व्यक्तियों के शीलगुण, समायोजन, अभिरूचि, मूल्य आदि का मापन होता है। ऐसे परीक्षणों की मनोविज्ञान तथा शिक्षा में भरमार है। वेल समायोजन परीक्षण, आइजेन्क व्यक्तित्व प्रश्नावली इसके अच्छे उदाहरण हैं।
4) **उपलब्धि परीक्षण -**उपलब्धि परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसके द्वारा किसी खास विषय या क्षेत्र में व्यक्तियों के अर्जित निपुणता को मापा जाता है। उपलब्धि परीक्षण भिन्नभिन्न - अलग बनाये गये-विषयों के लिए अलगहैं।

इस तरह स्पष्ट हुआ कि मनोवैज्ञानिक परीक्षण को भिन्न-भिन्न कसौटियों के आधार पर भिन्न-भिन्न भागों में बाँटा ग या है।

अभ्यास प्रश्न

1. मनोवैज्ञानिक परीक्षण को वर्गीकृत करने के आधार को स्पष्ट कीजिये|
2. परीक्षण के उद्देश्य की कसौटी के आधार पर मनोवैज्ञानिक परीक्षण के प्रकारों को लिखिए तथा उदाहरण दीजिए|
3. मनोवैज्ञानिक परीक्षण के मानकीकरण की कसौटी का वर्णन कीजिये|
4. मानकीकृत तथा अध्यापक निर्मित मनोवैज्ञानिक परीक्षण के मध्य अंतर स्पष्ट कीजिये|

15.5 प्रक्षेपी प्रविधि या प्रक्षेपी परीक्षण (Projective method or projective test)

प्रक्षेपी प्रविधि या प्रक्षेपी परीक्षण मूलत: फ्रायड (Freud) की प्रक्षेपी संरचना (Projective mechanism) पर आधारित है। अत: इस प्रविधि द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्तित्व का मापन किया जाता है। इसके अर्थ को स्पष्ट करते हुए चैपलिन (Chaplin, 1975) ने कहा है कि ''प्रक्षेपी विधि वह विधि है जिसमें अपने समाज के प्रति व्यक्ति के प्रत्यक्षीकरण या उस समाज में उसके व्यवहार को विशिष्ट ढंगों को प्रकाशित करने के लिए अस्पष्ट, असंरचित वस्तुओं या परिस्थितियों का उपयोग किया जाता है।''

प्रक्षेपी परीक्षण वह मनोवैज्ञानिक विधि है जिसमें व्यक्ति उद्दीपक सामग्री के प्रति स्वतंत्र एवं असीमित अनुक्रियाएं करता है तथा स्वतंत्र रूप से असंरचित उद्दीपक सामग्री को संगठित करता है। व्यक्ति से प्राप्त प्रत्युत्तरों के आधार पर उसकी अन्तर्निहित एवं अव्यक्त व्यक्तित्व संरचना तथा अभिप्रेरणाओं आदि की जानकारी प्राप्त की जाती है। ये परीक्षण मूल रूप से प्रक्षेपण की मनोरचना पर आधारित होते हैं। प्रक्षेपण वह प्रक्रिया है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपने अभावों, विचारों, भावनाओं, इच्छाओं, संवेगों, स्थायी भावों एवं आन्तरिक संघर्षों को अन्य व्यक्तियों,बाह्य जगत के माध्यम से सुरक्षात्मक रूप से प्रस्तुत करता है। प्रक्षेपण का अर्थ अपने विचारों या कमियों को अन्य व्यक्तियों या पदार्थों के माध्यम से व्यक्त करना। यह वह प्रवृत्ति है जिसके द्वारा व्यक्ति बाह्य जगत में अपनी दमित मानसिक इच्छाओं का प्रक्षेपण करता है।

लिण्डजे (Linzey, 1961) ने प्रक्षेपण परीक्षण की एक काफी विस्तृत परिभाषा दी है जिसे अधिकांश मनोवैज्ञानिकों ने काफी उपयोगी बतलाया है। इनके अनुसार, 'प्रक्षेपण विधि एक ऐसा उपकरण है जो व्यवहार के अचेतन या गुप्त पहलू के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील होता है, व्यक्ति में नाना प्रकार की अनुक्रियाओं को प्रोत्साहन देता है, काफी बहुविमिय होता है, तथा यह व्यक्ति को परीक्षण के उद्देश्यों से कम से कम अवगत कराते हुए असाधारण रूप में अहम अनुक्रियात्मक आंकड़े प्रस्तुत करता है। यह भी प्राय: सच होता है कि प्रक्षेपण परीक्षण द्वारा प्रस्तुत किये गये उद्दीपक सामग्री प्राय: अस्पष्ट होते हैं तथा वर्णनकर्ता को सम्पूर्ण विश्लेषण पर निर्भर करना होता है, परीक्षण से काल्पनिक अनुक्रिया उत्पन्न होती है तथा परीक्षण का कोई सही या गलत अनुक्रिया नहीं होता है।

लिण्डजे (Lindzey, 1961) ने प्रक्षेपी परीक्षण के स्वरूप को ठीक ढंग से समझने के लिए निम्नांकित 9 कसौटियों या विशेषताओं का वर्णन किया है|

1. प्रक्षेपी परीक्षण के एकांश के ऐसे होते हैं कि उनसे बहुत सारी अनुक्रियाएं उत्पन्न हो पाते हैं।
2. प्रक्षेपी परीक्षण द्वारा व्यक्तित्व के कई पहलुओं का मापन संभव होता है।
3. प्रक्षेपी परीक्षण अचेतन व्यक्तित्व विमाओं को अधिक तेजी से उत्तेजित करते हैं।
4. ऐसे परीक्षण में व्यक्ति अपने द्वारा किये गए अनुक्रियाओं का अर्थ नहीं समझता है।
5. ऐसे परीक्षण द्वारा अधिक मात्रा में जटिल मूल्यांकन आंकड़े उत्पन्न किए जाते हैं।
6. ऐसे परीक्षण में तुलनात्मक रूप से अस्पष्ट उद्दीपकों का उपयोग किया जाता है।
7. ऐसे परीक्षण द्वारा व्यक्तित्व का एक संगठित एवं संपूर्ण तस्वीर उपस्थित होता है।
8. ऐसे परीक्षण व्यक्ति में स्वप्नचित्र उत्पन्न करने में सफल होते हैं।

9. ऐसे परीक्षण में कोई या गलत अनुक्रिया नहीं होता है।

प्रक्षेपी व्यक्तित्व तथा व्यक्तित्व आविष्कारिता यद्यपि दोनों ही व्यक्तित्व का मापन करते हैं, उनमें निम्नांकित अन्तर हैं -

1 प्रक्षेपीय-प्रविधि का व्यक्तित्व मापन के प्रति दृष्टिकोण सार्वजनिक या सम्पूर्ण होता है जबकि व्यक्तित्व आविष्कारिता का दृष्टिकोण व्यक्तित्व मापन के प्रति परमाणविक होता है । दूसरे शब्दों में, कहा जा सकता है कि व्यक्तित्व आविष्कारिता में व्यक्तित्व का मापन कुछ खास खास स्वतंत्र शीलगुणों का अलग अलग मापकर किया जाता है जबकि प्रक्षेपण विधि में व्यक्तित्व को संपूर्ण रूप से माप कर (न कि कुछ निश्चित शीलगुणों का मापन करके) उसके बारे में अध्ययन करने की कोशिश की जाती है।

2 प्रक्षेपी परीक्षण में एकांश या उद्दीपक जिसके प्रति व्यक्ति अनुक्रिया करता है अस्पष्ट तथा संगठित होता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि प्रक्षेपण परीक्षण में एकांश या उद्दीपक इस तरह के होते हैं कि एकांश का अर्थ भिन्न भिन्न व्यक्ति अलग अलग ढंग से लगाते हैं, परन्तु व्यक्तित्व आविष्कारिता के एकांश बहुत ही स्पष्ट तथा संगठित होते हैं जिसका अर्थ सभी एक समान लगाते हैं |

3 चूंकि प्रक्षेपी परीक्षण के एकांश अस्पष्ट होते हैं, अत: व्यक्ति इनके प्रति जो अनुक्रिया देता है, वह वास्तविक होता है और उसमें किसी प्रकार जोड़ जोड़ या बनावटीपन या दिखावा नहीं होता है, परन्तु व्यक्तित्व आविष्कारिता के एकांश बिल्कुल ही स्पष्ट होते हैं और उस एकांश द्वारा क्या पूछा जा रहा है, उसका अर्थ व्यक्ति सही सही समझता है। यदि किसी एकांश का उत्तर ऐसा है कि उसे बताना समाज के नियमों या उसकी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा के प्रतिकूल हैं, तो वैसी अवस्था में वह सही उत्तर को छिपाकर उसकी जगह पर एक बनावटी उत्तर दे देता है।

4 मनोवैज्ञानिकों ने प्रक्षेपी परीक्षण को व्यक्तित्व का एक अप्रत्यक्ष माप का माना है, जबकि व्यक्तित्व आविकष्कारिता को व्यक्तित्व का एक प्रत्यक्ष माप माना है।

15.6 प्रक्षेपी परीक्षण के विभिन्न प्रकार (Different Types of Projective Test)

व्यक्तित्व मापन के लिए मनोवैज्ञानिकों ने कई तरह के प्रक्षेपी परीक्षण का वर्णन किया है। मनोवैज्ञानिकों ने प्रक्षेपी विधि के वर्गीकरण परीक्षण में उपयोग किए गए उद्दीपक, परीक्षण को निर्मित करने तथा क्रियान्वयन करने के तरीका तथा उनसे उत्पन्न होने वाली अनुक्रियाओं के आधार पर भिन्न भिन्न ढंग से किया है। इसमें लिण्डजे (Lindzey, 1961) ने जो वर्गीकरण अनुक्रिया की कसौटी या कार्य के स्वरूप के आधार पर किया है, वह आज भी बहुत लोकप्रिय है। इनके अनुसार प्रक्षेपीय परीक्षण को निम्नांकित पांच भागों में बांटा गया है -

1 **साहचर्य विधिया (Associative Techniques)** –इस प्रकार की प्रक्षेपी विधियों में प्रयोज्य से किसी दृष्टि उद्दीपन, श्रवण उद्दीपन या वाचिक उद्दीपन के

प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए कहा जाता है और उसकी प्रतिक्रिया के आधार पर उसक व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जाता है । रोर्शाक परीक्षण डब्ल्यू.ए.टी. आदि इसके उदाहरण है।

2 **रचनात्मक प्रविधियाँ (Constructive Techniques)** – इस प्रकार के परीक्षणों या प्रविधियों में उत्तेजक सामग्री के आलोक में प्रयोज्य को काल्पनिक उत्पादन के निर्माण के लिए किया जाता है। इसी काल्पनिक रचनात्मक कार्य के आधार पर उसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जाता है। टी.ए.टी. चित्र कहानी आदि इसके उदाहरण है।

3 **समापन प्रविधियाँ (Completion Techniques)** – इस प्रकार के परीक्षण में प्रयोज्य को किसी अपूर्ण कथन या कहानी को पूरा करने के लिए कहा जाता है। एस.सी.टी., पी.एफ.टी. आदि इसी प्रकार की प्रविधियाँ है।

4 **पसन्द प्रविधियाँ (Choice or Ordering Techniques)** – इस प्रकार के परीक्षण में पसन्द के क्रम, कहानी कहने के क्रम आदि रूपों में दी गयी सामग्रियों को सजाने के लिए प्रयोज्य से कहा जाता है और इस आधार पर उसके व्यक्तित्व का मापन किया जाता है। पी.ए.टी. इसका उदाहरण है।

5 **अभिव्यक्ति प्रविधियाँ (Expressive Techniques)** – इस प्रकार के परीक्षण या प्रविधियों में परीक्षण उद्दीपकों पर प्रयोज्य आश्रित नहीं होता है बल्कि वह कोई रचनात्मक कार्य या कलात्मक कार्य का निष्पादन करता है, जिसके आधार पर उसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन संभव होता है । खल, साइकोड्रामा आदि इसके उदाहरण हैं।

15.7 प्रक्षेपी विधि की मान्यताएं या अभिधारणाएं (Assumption of projective method)

प्रक्षेपी विधि या परीक्षण कई अभिधारणाओं एवं विश्वासों पर आधारित है जो निम्नलिखित हैं -

1 इस विधि का एक प्रधान अभिधारणा यह है कि व्यक्तित्व का एक बड़ा भाग अचेतन है जिसके संबंध में व्यक्ति कुछ कहने में असमर्थ है, लेकिन व्यक्ति इस अचेतन पक्ष अर्थात अचेतन प्रेरकों एवं संघर्षों को बाह्य उद्दीपकों एवं परिस्थितियों के प्रति आरोपित कर सकता है।

2 अचेतन प्रेरक एव आवश्यकताएं प्रधानत: असामाजिक तथा अनैतिक हाती हैं, जिसकी अभिव्यक्ति अस्पष्ट तथा असंचित परस्थिजितयों में सहज रूप में हो पाती है।

3 व्यक्ति अपने अवांछनीय शीलगुणों को सीधे स्वीकार करना या बतलाना नहीं चाहता है, परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से दूसरे व्यक्तियों या उद्दीपकों के माध्यम से व्यक्त कर देता है।

4 परिस्थिति या उद्दीपन जितना अस्पष्ट या असंरचित होता है, अचेतन प्रेरकों एवं अवांछनीय शीलगुणों की अभिव्यक्ति की संभावना उतनी ही अधिक होती है। अस्पष्ट या असंरचित उद्दीपन का अर्थ वह उद्दीपन है, जिसकी व्याख्या कई तरह से संभव हो, जिसके अनेक अर्थ लगाये जा सकें। ऐसे उद्दीपकों का प्रत्यक्षीकरण या व्याख्या करते समय व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का वास्तविक चित्र उसी तरह प्रस्तुत कर देता है, जिस

तरह कोई फोटो कैमरा किसी व्यक्ति या वस्तु की प्रतिमा का प्रक्षेपा सही रूप में चित्रपट पर कर देता है।

अभ्यास प्रश्न

1. प्रक्षेपण से आप क्या समझते हैं ?
2. प्रक्षेपण विधि की मान्यताओं को लिखिए |
3. प्रक्षेपी परीक्षण के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिये |
4. प्रक्षेपी परीक्षण की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिये |

15.8 बुद्धि परीक्षणों का वर्गीकरण (Classification of Intelligence Tests)

बुद्धि परीक्षणों का वर्गीकरण यद्यपि कठिन कार्य है, तथापि प्रशासन, विषय वस्तु रूप आदि के आधार पर उन्हें विभिन्न वर्गों में विभक्त किया जा सकता है।

1 **प्रशासन के आधार पर (On the basis of administration)** –प्रशासन पद्धति के अधार पर बुद्धि परीक्षणोंको दो भागों में विभाजित किया गया है - 1. व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण – 2. सामूहिक बुद्धि परीक्षण व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण में एक समय में एक व्यक्ति की परीक्षा प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा ली जाती है जबकि सामूहिक बुद्धि परीक्षण में एक समय में कई व्यक्तियों की परीक्षा एक परीक्षा एक प्रशिक्षित अथवा सामान्य व्यक्ति द्वारा ली जाती है।

2 **माध्यम के आधार पर (On the basis of medium used)** – प्रयुक्त किए जाने वाले माध्यम के आधार पर बुद्धि परीक्षणों को दो वर्गों में विभक्त किया गया है – 1. पेपर पेन्सिल परीक्षण 2. निष्पादन परीक्षण।

3 **भाषा एवं विषय वस्तु के आधार पर (On the basis of language and contents)** –विषय वस्तु एवं भाषा के आधार पर बुद्धि परीक्षणों को दो वर्गों में विभक्त किया गया है – 1. शाब्दिक परीक्षण 2. अशाब्दिक परीक्षणों में भाषा का उपयोग होता है जबकि अशाब्दिक परीक्षणों में चित्रानुसार चिन्हों, आकृतियों आदि का प्रयोग होता है।

4 **संरूप के आधार पर (On the basis of pattern) -** संरूप के आधार पर भी बुद्धि परीक्षणों का वर्गीकरण दो भागों में किया गया है - 1 गति परीक्षण 2 शक्ति परीक्षण गति बुद्धि परीक्षण में एक निर्धारित समय में कुछ निश्चित प्रश्नों को हल करना होता है। जबकि शक्ति परीक्षण में सफलता से कठिनता के स्तर की ओर प्रश्नों को प्रस्तुत किया जाता है और यह देखने का प्रयत्न किया जाता है कि व्यक्ति अधिकतम किस कठिनाई स्तर के प्रश्नों को हल कर पाता है।

15.9 वैयक्तिक बुद्धि परीक्षण तथा सामूहिक बुद्धि परीक्षण (Individual vs group Intelligence Test)

1 वैयक्तिक बुद्धि परीक्षण उसे कहते हैं, जिसमें एक समय में केवल एक व्यक्ति की बुद्धि मापन किया जाता है। यह शाब्दिक तथा अशाब्दिक दोनों हो सकता है। बिने साइमन परीक्षण, स्टैन्फोर्ड बिने मापनी, वेश्लर वेभल्यु स्केल आदि वैयक्तिक शाब्दिक परीक्षण है। पास एलांग टेस्ट, ब्लाक डिजाइन टेस्ट, क्यूब कंस्ट्रक्शन टेस्ट, आदि अशाब्दिक परीक्षण के उदाहरण हैं।

गुण (Merits) –वैयक्तिक परीक्षण द्वारा बुद्धि परीक्षण अधिक सही होता है, क्योंकि यहां परीक्षार्थियों पर पूरा - पूरा ध्यान देना संभव होता है। इस दृष्टिकोण से वैयक्तिक परीक्षण सामूहिक परीक्षण से अधिक अच्छा है।

दोष (Demerits) – वैयक्तिक परीक्षण में अधिक समय लगता है, श्रम अधिक करना है तथा मुद्रा का खर्च अधिक होता है। यदि परीक्षाथियों की संख्या अधिक हो तो इस परीक्षण से बुद्धि मापना बहुत महंगा पड़ता है। इस दृष्टिकोण से यह सामूहिक परीक्षण से घटिया है।

2 सामूहिक बुद्धि परीक्षण उसे कहते हैं, जिसमें एक समय में एक से अधिक व्यक्तियों या बालकों की बुद्धि को मापना संभव होता है। इसके भी दो प्रकार हैं - शाब्दिक तथा अशाब्दिक। मोहसिन सामान्य बुद्धि परीक्षण, आर्मी अल्फा टेस्ट आदि सामूहिक शाब्दिक परीक्षण के उदाहरण है। इसी प्रकार आर्मी बिटा टेस्ट, रैवेन्स प्रौगेरेसिव मैट्रीसेज आदि सामूहिक अशाब्दिक परीक्षण के उदाहरण हैं।

गुण (Merits) – इससे समय, श्रम तथा मुद्रा की बचत होती है, क्योंकि एक ही साथ कई व्यक्तियों या बालकों की बुद्धि मापन संभव होता है। इस आधार पर यह परीक्षण वैयक्तिक से अधिक अच्छा है।

दोष (Demerits) –इसमें परीक्षार्थी पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना संभव नहीं होता है। इसलिए बुद्धि का मापन अधिक सही नहीं हो पाता है। इस आधार पर वैयक्तिक परीक्षण से यह परीक्षण घटिया है। अत: यदि परीक्षार्थी की संख्या कम हो तो वैयक्तिक परीक्षण तथा संख्या अधिक होतो सामूहिक परीक्षण का उपयोग करना चाहिए।

15.10 शाब्दिक तथा अशाब्दिक परीक्षण(Verbal Test vs Non-verbal Test)

शाब्दिक परीक्षण उसे कहते है, जिसमें सामग्री या एकांश कुछ ऐसे होते है जहाँ का व्यवहार किया जाता है और समस्या के समाधान के लिए परीक्षार्थी को कुछ पढ़ने लिखने की आवश्यकता होती है। यह वैयक्तिक भी हो सकता है तथा सामूहिक भी। बिने साइमें न परीक्षण, स्टैन्फोर्ड बिने मापनी आदि शाब्दिक वैयक्तिक परीक्षण हैं। इसी प्रकार सोहसिन सामान्य बुद्धि परीक्षण, आरमी, अल्फा परीक्षण आदि शाब्दिक सामूहिक परीक्षण के उदाहरण हैं।

गुण (Merits) –

1 शाब्दिक परीक्षण के द्वारा अमूर्त बुद्धि का मापन अधिक सही होता है।

2 सामाजिक बुद्धि का मापन भी अधिक सही होता है।

3 3 इसके द्वारा पढ़े लिखे व्यक्ति या बालको की बुद्धि मापी जाती है।

दोष (Demerits) -

1 शाब्दिक परीक्षण का क्षेत्र सीमित है। इसक द्वारा अनपढ़ या अशिक्षित व्यक्तियों या बालको की बुद्धि को मापना संभव नहीं होता है।

2 इसके द्वारा मूर्त बुद्धि अथवा व्यवहारिक बुद्धि का मापन पूरी तरह संभव नहीं होता है।

3 यह एक संस्कृतिबद्ध परीक्षण है। जिस संस्कृति की भाषा में कोई परीक्षण होता है, उसके द्वारा केवल उसी संस्कृति के लोगों अथवा उस भाषा को जानने वाले लोगों को बुद्धि को मापना ही संभव होता है। अत: इसका व्यवहार सभी शिक्षित व्यक्तियों पर करना भी संभव नहीं है।

4 इसके द्वारा बुद्धि मापन पर भाषा, योग्यता, शब्द भंडार आदि व्यक्तिगत कारकों का प्रभाव पड़ता है।

अशाब्दिक परीक्षण उसे कहते हैं जिसकी सामग्री कुछ ऐसी होती है, जिसमें परीक्षार्थी को कुछ क्रियात्मक कार्य करना पड़ता है। उसे कुछ लिखने पढने की आवश्यकता नहीं होती है। इसे क्रियात्मक परीक्षण भी कहते हैं। अशाब्दिक या क्रियात्मक परीक्षण वैयक्तिक तथा सामूहिक दोनों होता है। पास एलांग परीक्षण ब्लौक डिजाइन परीक्षण तथा क्यूब कंस्ट्रक्शन परीक्षण क्रियात्मक वैयक्तिक परीक्षण के उदाहरण क्यूब है। वेश्लर बेल्व्यू स्केल भी आंशिक रूप से क्रियात्मक या अशाब्दिक परीक्षण है।

गुण (Merits) – क्रियात्मक परीक्षण या अशाब्दिक परीक्षण के कई गुण हैं –

1. इसके द्वारा शिक्षित तथा अशिक्षित सभी व्यक्तियों या बालकों की बुद्धि को मापना संभव होता है। इस आधार पर यह शाब्दिक परीक्षण से अधिक उपयोगी है।
2. यह संस्कृति स्वतंत्र परीक्षा है। इस आधार पर भी यह परीक्षण शाब्दिक परीक्षण से बेहतर है, क्योंकि शाब्दिक परीक्षण संस्कृतिबद्ध है।
3. इस परीक्षण के द्वारा मूर्त बुद्धि मापना अधिक अधिक उपयुक्त होता है यह गुण शाब्दिक परीक्षण में नहीं है।
4. ज्ञानात्मक वाले बच्चों की बुद्धि मापना भी क्रियात्मक परीक्षण से संभव होता है, जो शाब्दिक परीक्षण से संभव नहीं है।

दोष (Defects) – कई गुणों के होते हुए भी अशाब्दिक परीक्षण या क्रियात्मक परीक्षण का एक दोष यह है कि इसके द्वारा अमूर्त बुद्धि को समुचित रूप से मापना संभव नहीं होता है। यहाँ यह बात स्मरण रखना चाहिए कि शाब्दिक परीक्षण से मूर्त बुद्धि या अमूर्त बुद्धि दोनों को मापना संभव है, किन्तु अमूर्त बुद्धि को मापना अपेक्षाकृत अधिक संभव है। इसी अशाब्दिक या क्रियात्मक परीक्षण से भी दोनों प्रकार की बुद्धि को मापना संभव होता है, किन्तु मूर्त बुद्धि को मापना अपेक्षाकृत अधिक संभव होता है।

अभ्यास प्रश्न

1. बुद्धि परीक्षण से आप क्या समझते हैं ?
2. शाब्दिक तथा अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण के मध्य अंतर स्पष्ट कीजिये |
3. बुद्धि परीक्षण के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिये |
4. व्यक्तिगत तथा सामूहिक बुद्धि परीक्षण के मध्य अंतर स्पष्ट कीजिये |

15.11 सारांश

- मनोवैज्ञानिक परीक्षण एक मानकीकृत उपकरण है जो शाब्दिक या अशाब्दिक अनुक्रियाओं या अन्य व्यवहारों के सहारे सम्पूर्ण व्यक्तित्व के एक या अधिक पहलुओं को वस्तुनिष्ठ रूप से मापता है।
- एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं-वस्तुनिष्ठता, विश्वसनीयता, वैधता एवं मानक।
- मनोवैज्ञानिक परीक्षण का निर्माण किसी खास गुण, विशेषता, व्यवहार या मानसिक प्रक्रिया को मापने के लिए किया जाता है। अतः विभिन्न कसौटियों के आधार पर इसके प्रकारों में भी भिन्नता पाई जाती है।
- परीक्षण प्रशासन की शर्तो की कसौटी के आधार पर मनोवैज्ञानिक परीक्षण को वैयक्तिक एवं सामूहिक परीक्षण के रूप में विभाजित किया गया है।
- अंकन की कसौटी के आधार पर इसके दो प्रकार होते हैं- वस्तुनिष्ठ परीक्षण एवं आत्मनिष्ठ परीक्षण।
- अनुक्रिया से सम्बद्ध समय सीमा की कसौटी के आधार पर मनोवैज्ञानिक परीक्षण को क्षमता परीक्षण एवं गति परीक्षण में विभाजित किया गया है।
- एकांशों के स्वरूप की कसौटी के आधार पर इसे शाब्दिक, अशाब्दिक, निष्पादन तथा अभाशाई परीक्षण में विभक्त किया गया है।
- मानकीकरण की कसौटी के आधार पर मनोवैज्ञानिक परीक्षण के दो भेद बताये गए हैं - शिक्षक-निर्मित परीक्षण एवं मानकीकृत परीक्षण।
- परीक्षण के उद्देश्य की कसौटी के आधार पर चार प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण होते हैं - बुद्धि परीक्षण, अभिक्षमता परीक्षण, व्यक्तित्व परीक्षण तथा उपलब्धि परीक्षण।

15.12 शब्दावली

- **मनोवैज्ञानिक परीक्षण:** एक मानकीकृत उपकरण जो शाब्दिक या अशाब्दिक अनुक्रियाओं या अन्य व्यवहारों के सहारे सम्पूर्ण व्यक्तित्व के एक या अधिक पहलुओं को वस्तुनिष्ठ रूप से मापता है।
- **विश्वसनीयता:** यदि किसी परीक्षण पर एक ही प्रतिदर्श के आज के प्राप्तांक और कुछ समय बाद के प्राप्तांक में संगति दिखाई दे तो इस 'कालिक संगति' को परीक्षण की विश्वसनीयता कहते हैं।

- **वैधता:** परीक्षण की वैधता उसकी वह क्षमता है जिसके सहारे वह उस गुण या कार्य को मापता है जिसे मापने के लिए उसे बनाया गया हैं।

15.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन से आप क्या समझते हैं? एक अच्छे मनोवैज्ञानिक परीक्षण की कौन-कौन सी विशेषताएँ होती हैं?
2. प्रक्षेपी परीक्षण विधि को कितने भागों में बांटा गया है ? विवेचना करें।
3. अन्तर स्पष्ट करें -
   (i) गति एवं क्षमता परक परीक्षण
   (ii) शाब्दिक एवं अशाब्दिक परीक्षण
   (iii) वैयक्तिक एवं सामूहिक परीक्षण
4. बुद्धि परीक्षण के विभिन्न प्रकारों का मूल्यांकन कीजिये |

15.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) मनोविज्ञान,समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल-बनारसीदास, दिल्ली।
- एच.के. कपिल (2001) अनुसंधान विधियां (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा।
- एफ.एन. करलिंगर (2002) फाउण्डेशन्स ऑफ विहैवियरल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं विंसटन, इंक, न्यूयार्क।
- राम आहूजा (2009) रिसर्च में थड्स, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर |
- स्वअनुदेशन सामग्री (एम.ए.मनोविज्ञान), उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी |

इकाई - 16

शोध अभिकल्प का अर्थ एवं उद्देश्य

Meaning and Purpose of Research Design

इकाई की रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 शोध अभिकल्प: संप्रत्यय

16.4 शोध अभिकल्प की विशेषताएं

16.5 शोध अभिकल्प की विषयवस्तु

16.6 शोध अभिकल्प के चरण

16.7 शोध अभिकल्प के उद्देश्य

16.8 सारांश

16.9 शब्दावली

16.10 निबंधात्मक प्रश्न

16.11 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची

16.1 प्रस्तावना (Introduction)

किसी भी प्रकार का सामाजिक शोध सामान्यता बिना किसी उद्देश्य का नहीं होता है | इस उद्देश्य का स्पष्टीकरण एवं विकास शोध के दौरान निश्चित नहीं होता ,बल्कि उससे पहले ही निर्धारित कर लिया जाता है | शोध के लक्ष्य के आधार पर विषय के विभिन्न पक्षों को उद्घाटित करने के लिए पहले से ही बनाई गई योजना की रुपरेखा को ही सामान्यतः शोध अभिकल्प कहा जाता है | इस प्रकार हम देखते हैं कि उद्देश्य की प्राप्ति के पूर्व ही उद्देश्य का निर्धारण करके शोध की जो रूप रेखा तैयार कर ली जाती है ,उसी को शोध अभिकल्प कहा जाता है | जब यह शोध कार्य किसी सामाजिक प्रघटना (Social Phenimenon) से सम्बंधित होता है तो उसे सामाजिक शोध अभिकल्प कहा जाता है | अतः यह स्पष्ट होता है कि सामजिक शोध के अनेक प्रकार होते हैं और शोधकर्त्ता अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सर्वाधिक उपयुक्त समझ कर इनमें से किसी एक को चुन लेता है |यह शोध की प्रकृति एवं शोधकर्त्ता के लक्ष्यों पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार की शोध अभिकल्प का प्रयोग कर रहा है | स्पष्ट है कि प्रत्येक शोध को क्रमबद्ध एवं प्रभावपूर्ण ढंग न्यूनतम प्रयासों ,समय एवं लागत के साथ संचालित करने हेतु अभिकल्प का निर्माण आवश्यक है | यद्यपि यह सत्य है कि सामजिक शोध

में किसी भी ढंग द्वारा अनिश्चतता की स्थिति को पूरी तरह समाप्त नहीं किया जा सकता,किन्तु फिर भी व्यवस्थित रूप से वैज्ञानिक ढंग का प्रयोग करते हुए अनिश्चतता के उन तत्वों को कम अवश्य किया जा सकता है जो सूचना या जानकारी की कमी के कारण पैदा होते हैं | वास्तव में हम अध्ययन की जाने वाली समस्या का प्रतिपादन करते हैं तभी हम सूचना के उन प्रकारों का विशिष्ट विवरण भी प्रस्तुत कर देतें हैं ,जो हमे यह आश्वासन देते हैं कि प्रस्तावित प्रश्नों के उत्तर प्रदान करने के लिए इच्छित एवं आवश्यक प्रमाण उपलब्ध हो जाएंगे जबकि शोध अभिकल्प का निर्माण करते हुए हम आवश्यक एवं इच्छित प्रमाणों के संग्रह में त्रुटियों से यथासंभव बचना तथा प्रयास, समय एवं धन को कम करना चाहते हैं | वस्तुतः शोध की आरंभिक स्थिति में शोध अभिकल्प का निर्माण प्रस्तावित अध्ययन की उपयुक्तता को स्पष्ट करता है तथा ढंग सम्बन्धी प्रमुख समस्याओं के समाधान में सहायता पहुंचाता है |

16.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- शोध अभिकल्प के संप्रत्यय को समझ सकेंगे |
- शोध अभिकल्प की विशेषताओं को जान सकेंगे |
- शोध अभिकल्प की विषय वस्तु के सन्दर्भ में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे |
- शोध अभिकल्प के चरण को जान पायेंगे |
- शोध अभिकल्प के उद्देश्य को जान पायेंगे |

16.3 शोध अभिकल्प : संप्रत्यय (Research Design : Connotation)

शोधकार्य में कार्य करने की योजना (Planning) या शोध प्रक्रिया (Process) की रुपरेखा को ही शोध अभिकल्प कहा जाता है ,इसका स्वरूप ,समस्या एवं प्रकल्पना के निर्धारण के अनुसार ही होता है | यह स्पष्ट है कि योजना बनाकर शोध कार्य करने से समय ,धन श्रम आदि का अनावश्यक अपव्यय बच जाता है | शोध अभिकल्प तथ्यों के संकलन एवं विश्लेषण से सम्बधित दशाओं को इस तरह आयोजित करता है कि वे कार्यविधि में बचत करती हुई शोध के प्रयोजन के साथ संगति पूर्ण हो सके |

अन्वेषण प्रारंभ करने से पूर्व हम प्रत्येक शोध समस्या के विषय में उचित रूप से सोच विचार करने के पश्चात यह निर्णय ले लेना चाहिए कि हमें किन ढंगों एवं कार्यविधियों का प्रयोग करते हुए कार्य करना है तो नियंत्रण को लागू करने की आशा बढ़ जाती है | शोध व अभिकल्प निर्णय की वह प्रक्रिया है जो उन परिस्थितियों के पूर्व किए जाते हैं जिनमें यह निर्णय कार्य रूप में लाये जाते हैं | अनेक सामजिक वैज्ञानिको ने शोध अभिकल्प को परिभाषित किया है ,जो इस प्रकार है-

सेलिज ,जहोदा ,ड्यूश एवं कुक ने अपनी पुस्तक 'रिसर्च मैथड्स इन सोशल रिलेशन्स'(Research Methods in Social Relations) में शोध अभिकल्प को परिभाषित करते हुए लिखा है कि " एक अनुसंधान अभिकल्प आकड़ों में एकत्रीकरण एवं विश्लेषण के लिए उन दशाओं का प्रबंध करती है जो शोध के उद्देश्यों की संगतता को कार्यरीतियों में आर्थिक नियंत्रण के साथ सम्मिलित करने का उद्देश्य रखती है |"

आर. एल. एकाक ने अपनी पुस्तक का नाम ही "दि गार्डन आफ सोशल रिसर्च (The Garden of Social research) रखा है | इनके अनुसार ,अभिकल्प उस परिस्थिति के उत्पन्न होने से पूर्व निर्णय लेने की प्रक्रिया है जिसमें निर्णय को लागू किया जाता है | यह एक संभावित स्थति का नियंत्रण में लाने की दिशा में एक पूर्व आशा की प्रक्रिया है |"

आल्फ्रेड जे . कान्ह (Alfred J. Kahn) ने भी इसकी विवेचना करते हुए 'दि डिजाइन आफ रिसर्च' (The design of Research) के नाम से लिखे एक लेख में लिखा है कि "शोध अभिकल्प की सर्वोत्तम परिभाषा अध्ययन की तार्किक युक्ति (Logical Technique) के रूप में की जाती है | यह एक प्रश्न का उत्तर देने ,परिस्थिति का वर्णन करने ,अथवा एक परिकल्पना का परीक्षण करने का सम्बन्धित है | दूसरे शब्दों में ,यह उस तर्कयुक्तता से सम्बन्धित है जिसके द्वारा कार्य विधियों ,जिसमें आकड़ों का संग्रह एवं विश्लेषण दोनों सम्मिलित हैं के एक विशिष्ट समूह से एक अध्ययन की विशिष्ट आवश्यकताओं की आशा की जाती है |"

सेनफोर्ड लेब्रोबिज एवं राबर्ट हैगडार्न ने भी ' इंट्रोडक्शन टू सोशल रिसर्च' (Introduction to Social Research) में इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि "एक अनुसंधान अभिकल्प उस तार्किक ढंग को प्रस्तुत करता है ,जिसमें व्यक्तियों एवं अन्य ईकाइयों की तुलना एवं विश्लेषण किया जाता है | यह आकड़ों के लिए विवेचना का आधार है | अभिकल्प का उद्देश्य ऐसी तुलना का आश्वासन दिलाना है ,जो विकल्पीय विवेचनाओं से प्रभावित ना हों |"

एफ. एन. करलिंगर ने भी फाउंडेशन्स आफ बिहेवलियर रिसर्च(Foundations of Behavioral Research) में लिखा है कि "शोध अभिकल्प अन्वेषण की योजना ,संरचना एवं एक रणनीति है जिसकी रचना इस प्रकार की जाती है कि शोध प्रश्नों के उत्तर प्राप्त हो सकें तथा विविधताओं को नियंत्रित किया जा सके| यह अभिकल्प शोध सम्पूर्ण रूपरेखा अथवा कार्यक्रम है जिसके अंतर्गत प्रत्येक चीज़ की रूपरेखा सम्मिलित रहती है | यह शोधकर्ता को परिकल्पनाओं के निर्माण एवं उनके परिचालानात्मक अभिप्रायों से लेकर आँकड़ों के अंतिम विश्लेषण तक करता है |

इस प्रकार से हम उपरोक्त पारिभाषिक विश्लेषण के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि शोध अभिकल्प एक ऐसी योजना या रूप रेखा है जो समस्या के प्रतिपादन से लेकर शोध प्रतिवेदन के अंतिम चरण तक के विअस्य में भली- भांति सोच समझकर तथा समस्त उपलब्ध विकल्पों पर ध्यान

देकर इस प्रकार के निर्णय लेती है कि न्यूनतम प्रयासों , समय एवं लागत के व्यय से अधिकतम शोध उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके |

अभ्यास प्रश्न

शोध अभिकल्प से आपका क्या अभिप्राय है ?

शोध अभिकल्प को परिभाषित करें |

16.4 शोध अभिकल्प की विशेषताएं (Characteristics of Research Design)

शोध अभिकल्प के अर्थ एवं परिभाषाओं को समझ लेने के बाद शोध अभिकल्प की कुछ अनिवार्य एवं आधार भूत विशेषताओं का उल्लेख किया जा सकता है | शोध अभिकल्प की मूलभूत विशेषताएं (Fundamental Characterstics) निम्नांकित होती है |

1. शोध अभिकल्प का सम्बन्ध सामाजिक शोध से होता है |
2. शोध अभिकल्प शोधकर्ता को शोध की एक निश्चित दिशा का बोध कराता है | इस अर्थ में शोध अभिकल्प रास्ता दिखलाने वाला है |
3. शोध अभिकल्प की मुख्य विशेषता सामाजिक घटनाओं की जटिल प्रकृति को सरल रूप में प्रस्तुत करना है |
4. शोध अभिकल्प की एक और विशेषता यह है कि यह शोध के अधिकतम उद्देश्यों प्राप्ति में सहायता करता है |
5. शोध अभिकल्प का चयन सामाजिक शोध की समस्या एवं परिकल्पना की प्रकृति के आधार पर किया जाता है |

6. शोध अभिकल्प की एक और विशेषता शोध प्रक्रिया के दौरान आगे आने वाली परिस्थितियों को नियंत्रित करना एवं शोध कार्य को सरल बनाना है |
7. शोध अभिकल्प शोध की वह रूप रेखा है जिसकी रचना शोध कार्य प्रारंभ करने से पूर्व की जाती है |
8. शोध अभिकल्प शोध के दौरान आने वाली कठिनाइयों को भी कम करने में शोधकर्त्ता की सहायता करता है |
9. शोध अभिकल्प न केवल मानवीय श्रम को कम करता है बल्कि वह समय एवं लागत को भी कम करता है |
10. शोध अभिकल्प का समस्या के प्रतिस्थापना से लेकर शोध प्रतिवेदन के अंतिम चरण तक के विषय में सभी उपलब्ध विकल्पों के बारे में व्यवस्थित रूप में श्रेष्ठ निर्णय लेने में सहायता करता है |

अभ्यास प्रश्न

1. शोध अभिकल्प की विशेषताएं बताएं |

---

2. शोध अभिकल्प का निर्माण कब किया जाता है?

---

3. शोध अभिकल्प समय की बचत में सहायक होता है | इस कथन की विवेचना करें |

16.5 शोध अभिकल्प की विषय-वस्तु (Content of Research Design)

एक सामान्य शोध अभिकल्प में निम्नलिखित विषयों का उल्लेख किया जाता है –

I. **शोध का विषय (The Subject of Research)**- ऐसा करने से अध्ययन के विषय का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है तथा इसके क्षेत्र एवं सीमाओं का पता चल पाता है | इसके स्वरुप निर्धारण ,खोज आदि के विषय में उपलब्ध साहित्य ,पत्र –पत्रिकाओं आदि आदि का अध्ययन करना पड़ता है | अध्ययन स्रोत सरकारी ,गैरसरकारी ,व्यक्तिगत ,पुस्तकालयों या परिवेश सम्बन्धी हो सकते हैं |

II. **अध्ययन की प्रकृति (The Nature of Study)**– इसमें शोध का प्रकार एवं स्वरुप निर्धारण करना पड़ता है | वह सांख्यिकीय ,व्याक्तिगत, तुलनात्मक, प्रायोगिक, विश्लेषणात्मक,अन्वेषणात्मक या मिश्रित प्रकार का हो सकता है |

III. **प्रस्ताव एवं पृष्ठभूमि (The Proposal and Background)**–इसमें उस विषय को चुनने की पृष्ठभूमि बतानी पड़ती है तथा उसकी शुरुआत करनी पड़ती है | इससे पता चल जाता है कि शोधक की उक्त विषय में रूचि किस प्रकार उत्पन्न हुई तथा समस्या का स्वरुप एवं स्थिति क्या थी | अब तक उस समस्या का किस-किसने तथा किन परिणामों को प्राप्त एवं अध्ययन किया ? उसमें क्या कमियाँ एवं त्रुटियाँ रहीं ? उसे अब दूर किया जाना किस प्रकार सम्भव एवं वांछनीय है ? आदि |

IV. **अध्ययन का सामाजिक,सांस्कृतिक ,राजनितिक एवं भौगोलिक संदर्भ (The social, cultural, political and geographical reference of study)** – इसमें शोधकर्ता स्पष्ट करता है कि वह किस प्रकार के सामाज एवं संस्कृति के पर्यावरण में रह रहा है तथा उसके प्रमुख मूल्य ,परम्पराएँ,मान्यताएँ आदि क्या हैं ? इसमें स्थानीय मानक ,रीतिरिवाज ,परिपाटियाँ आदि भी आ जाती हैं | इसके सन्दर्भ में राजनीतिक व्यवस्था ,व्यवहार एवं मूल्यों का उल्लेख कर दिया जाता है | भौगोलिक संदर्भ में मानव –व्यवहार को प्रभावित करने वाले तथ्य ,स्थिति जलवायु ,प्राकृतिक उत्पादन आदि आते है यदि सम्भव हो तो आर्थिक परिवेश का भी परिचय दे दिया जाना चाहिए | मनोवैज्ञानिक शोध को सामाजिक ,सांस्कृतिक ,आर्थिक एवं औद्योगिक आयामों में समायोजित करना चाहिए|

V. **उद्देश्य (Aim) -** शोधकर्त्ता या गवेषक अपना उद्देश्य बताता है | इसमें वह उप-उपेक्षय या लक्ष्य को प्रकट करता है, अर्थात प्रमुख एवं सहायक उद्देश्यों का उल्लेख करता है | ये प्रायः चार या पाँच वाक्यों में स्पष्ट किए जाते हैं |

VI. **काल- निर्देश (Time Reference)**– इसमें यह बताया जाता है कि शोध किस समय,काल या परिवेश से सम्बन्धित हैं |समय राजनितिक शोध में एक अतिशय महत्वपूर्ण कारक होता है|

VII. तथ्य- सामग्री के चयन के आधार पर बताए एवं निश्चित किए जाते हैं |यहाँ उनका औचित्य भी स्पष्ट किया जाना चाहिए| ये आधार प्रलेखीय,भौतिक अथवा वैचारिक प्रेक्षणीय आदि हो सकते हैं | तथ्य संकलन की प्रविधियाँ मानवीय या मशीनी हो सकती हैं | अवलोकन, प्रश्नावली ,साक्षात्कार प्रक्षेवण आदि युक्तियों के द्वारा तथ्य एकत्र किए जा सकते हैं | इनकी उपयुक्तता पर ध्यान दिया जाना आवश्यक होता है |

VIII. **अवसाधारण, चर एवं प्रकल्पना-** इस क्षेत्र में सबसे पहले यदि कोई सिद्धात या अवधारणात्मक रुपरेखा को आधार बनाया गया है, तो उसका उल्लेख किया जाना आवश्यक है | इसके संदर्भ में प्रमुख अवधारणाओं को स्पष्ट किया जाना चाहिए |उनको सुनिश्चित बनाने के लिए उनकी कार्यकारी परिभाषाएँ दी जानी चाहिए | यह बताया जा सकता है कि किन-किन चरों को केन्द्रीय विषय बनाया जा रहा है तथा उनसे सम्बन्धित कौन-कौन सी परिकल्पनाओं का निर्माण किया है | परिकल्पनाओं का निर्माण गवेषणा को सुनिश्चित बना देता है तथा उनमे शोध की दिशा ,सीमा क्षेत्र आदि निर्धारित हो जाते हैं | कोहना एवं नगेल – ने बताया है कि हम समस्या को प्रस्तावित व्याख्याओं या समाधान के बिना एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा सकते हैं | ये समस्या से सम्बन्ध विषय-सामग्री तथा शोधक के पूर्वज्ञान द्वारा सुझाए जाते हैं |जब इन सुझाओं या व्याख्याओं को प्रस्तावना की तरह रखा जाता है ,वे परिकल्पनाएँ कहलाती हैं | ये परिकल्पनाएँ तथ्यों में सुव्यवस्था लाकर शोध को निर्देशित कर देती है |

IX. **विश्लेषण एवं निर्वचन-सामग्री** के एकत्रित होने के बाद उसके सारणीयन, वर्गीकरण एवं विश्लेषण प्रणालियों का संकेत दिया जा सकता है| इसके निर्वाचन में कौन सी पद्धतियों का सहारा लिया जाएगा ? अथवा उसकी सामान्यता या प्रामाणिकता की मात्रा क्या होगी ? आदि बातों का उल्लेख न्यूनाधिक मात्रा में किया जा सकता है |

सर्वेक्षण काल ,समय एवं धन – इसमें यह भी संकेत दिया जाना चाहिए कि सर्वेक्षण कितने समय के भीतर संम्पन्न हो जाएगा | उसे लगातार एक ही बार ,या कई बार किया जाएगा ?इसी प्रकार शोध में लगने वाले समय एवं धन का अनुमान भी बताया जाना चाहिए|

एक अच्छे अन्वेषण –रूपांकन या अभिकल्प में अनेक विशेषताएं पाई जाती हैं | वह शोध प्रक्रिया के दौरान आवश्यकतानुसार संशोधित एवं परिवर्तित किए जा सकने के कारण लचीला होता है| उसकी अवधारणायें स्पष्ट ,सुनिश्चित एवं आनुभाविक होती हैं |इससे शोध में परिशुद्धता आ जाती है| दूसरे शब्दों में ,शोध को अभिनितियों तथा पूर्वाग्रहों से बचाने का पूर्व प्रबंध कर लिया जाता है| ऐसा

करने से उनमें विश्वसनीयता बढ़ जाती है | शोध -अभिकल्प सभी उपलब्ध सामग्री ,साधनों से जोड़ने का प्रयास भी किया जाता है |किन्तु ऐसा करते समय अन्य विषयों या अनुशासनों से सामग्री यथावत ग्रहण नहीं की जाती | उसमें अवधारणाओं के प्रयोग से शोधक अनुसंधान अभिकल्पः अन्वेषणत्मक, वर्णनात्मक, निदानात्मक और प्रायोगिक अपने मूल्यों को पृथक रखने में सफल हो जाता है और शोध प्रकल्प की बाध्य नहीं है | नयी स्थितियों ,दशाओं एवं विशेषताओं के दृष्टिगोचर हो जाने पर उनमें स्पष्टीकरण देते हुए परिवर्तन कर लिया जाता है | वस्तुतः मनोवैज्ञानिक –विषयक शोध –अभिकल्प में ऐसा करना आवश्यक भी हो जाता है |

अभ्यास प्रश्न

1. शोध अभिकल्प की विषयवस्तु (Content of Research Design) से आप क्या समझते हैं ?

---

2. शोध अभिकल्प की विषयवस्तु (Content of Research Design)अध्ययन की प्रकृति का क्या तात्पर्य है ?

16.6 अनुसंधान अभिकल्प के चरण(Steps of Research Design)

1. शोध समस्या का स्पष्ट एवं विस्तृत ज्ञान शोधकर्त्ता को होना चाहिए |
2. शोधकर्त्ता को अध्ययन के विशिष्ट उद्देश्यों को भी स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए |
3. शोधकर्त्ता को उन ढंगों एवं कार्यविधियों की भी स्पष्टएवं विस्तृत जानकारी होनी चाहिए| जिनका प्रयोग करते हुए शोध के लिए आवश्यक आकड़ों के संग्रह के मार्ग में आने वाली विभिन्न समस्याओं का समाधान किया जाएगा |
4. आकड़ों के विश्लेषण के लिए भी उपयुक्त योजना का होना आवश्यक है |

5. आकड़ों के संग्रहण के लिए विस्तृत एवं सुनियोजित योजना का उपलब्ध होना भी आवश्यक है |

इस प्रकार से शोध की रचना करते समय अनेक चरणों से गुजरना होता है |इस प्रकार से ये यह चरण ही शोध के अनिवार्य अंग है |इन चरणों की सहायता से ही हम एक शोध अभिकल्प का निर्माण कर सकते हैं |संक्षेप में ,शोध अभिकल्प के महत्वपूर्ण चरणों को क्रमशः इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है –

1. शोध अभिकल्प में सर्वप्रथम अध्ययन समस्या का प्रतिपादन किया जाना चाहिए |
2. वर्तमान में जो शोध कार्य किया जा रहा है उसको शोध समस्या से स्पष्ट रूप से सम्बन्धित करना अभिकल्प का दूसरा मुख्य चरण है |
3. वर्तमान में हमें जो शोध कार्य करना है उसकी सीमाओं को स्पष्ट रूप से निर्धारित करना |
4. शोध अभिकल्प का चौथा चरण शोध के विभिन्न क्षेत्रों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करने का है |
5. इसके पश्चात हमें अवलोकन ,विवरण तथा परिमापन के लिए उपयुक्त चरों (Proper Variables) का चयन करना चाहिए तथा इन्हें स्पष्ट रूप से परिभाषित करना चाहिए |
6. तदोपरांत अध्ययन क्षेत्र एवं समग्र का उचित चयन एवं इनकी परिभाषा प्रस्तुत करनी चाहिए|
7. शोध अभिकल्प के इस चरण में हम शोध परिणामों के प्रयोग के विषय में निर्णय लेते हैं |
8. इसके बाद अध्ययन के प्रकार एवं विषय –क्षेत्र के विषय में विस्तृत विवरण लेना चाहिए |
9. शोष अभिकल्प के आगामी चरणों में हमें अपने शोध के लिए उपयुक्त विधियों एवं प्रविधियों का चयन करना चाहिए |
10. इसके बाद अध्ययन में निहित मान्यताओं एवं परिकल्पनाओं का स्पष्ट उल्लेख करना चाहिए |
11. बाद में परिकल्पनाओं की परिचलनात्मक परिभाषा करते हुए उसे इस रूप में प्रस्तुत करना चाहिए कि यह परीक्षण के योग्य हो |
12. शोध अभिकल्प के आगामी चरण के रूप में हमें शोध के दौरान प्रयुक्त किए जाने वाले प्रलेखों , रिपोर्टो एवं अन्य प्रपत्रों का सिंहावलोकन करना चाहिए |
13. आकड़ों के गुणात्मक एवं संख्यात्मक विश्लेषण के लिए विस्तृत रुपरेखा तैयार करना |
14. तदुपरांत अध्ययन के प्रभावपूर्ण उपकरणों का चयन एवं इनका निर्माण करना तथा इनका व्यवस्थित पूर्ण –परीक्षण करना |

15. आकड़ों के संपादन की व्यवस्था के उल्लेख के बाद उनके वर्गीकरण हेतु उचित श्रेणियों का चयन किया जाना एवं उनकी परिभाषा करना|

16. आकड़ों के संकेतीकरण के लिए समुचित व्यवस्था का विवरण तैयार करना|

17. आकड़ों को प्रयोग योग्य बनाने हेतु संपूर्ण प्रक्रिया की समुचित व्यवस्था का विकास करना |

18. आकड़ों के एकत्रीकरण का संपादन किस प्रकार किया जाएगा इसकी विस्तृत व्यवस्था का उल्लेख करना |

19. इसके पश्चात अन्य उपलब्ध परिणामों की पृष्ठभूमि में समुचित विवेचन की कार्यविधियों का का उल्लेख करना |

20. यदि आवश्यक हो तो पूर्वगामी अध्ययनों का प्रावधान करना |

21. शोध अभिकल्प के इस चरण में हम शोध प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण के बारे में निर्णय लेते हैं|

22. शोध अभिकल्प का यह चरण संपूर्ण शोध प्रक्रिया में लगने वाला समय ,धन एवं मानवीय श्रम का अनुमान लगाने का है | इसी दौरान हम प्रशासकीय व्यवस्था की स्थापना एवं विकास का अनुमान भी लगाते हैं |

23. शोध अभिकल्प के इस चरण में हम कार्यविधियों से सम्बन्धित संपूर्ण प्रक्रिया ,नियमों उपनियमों को विस्तारपूर्वक तैयार करते हैं |

अभ्यास प्रश्न

अनुसंधान अभिकल्प के चरणों की विस्तृत व्याख्या करें |

अनुसंधान अभिकल्प अध्ययनों की रूपरेखा निर्धारित करते हैं | इस कथन की व्याख्या करें |

16.7 शोध अभिकल्प के उद्देश्य (Objectives of Research Design)

सामान्यतः किसी भी शोध में तीन प्रकार के समस्याओं का सामना करना पड़ता है | इनमें व्यावहारिक शोध समस्या ,वैज्ञानिक अथवा बौद्धिक शोध समस्या एवं सैद्धान्तिक व्यवस्थाओं को विकसित करने की शोध समस्याएँ हो सकती हैं | व्यावहारिक शोध समस्याएँ ,समस्याओं के समाधान एवं सामाजिक नीतियों के निर्धारण में सहायता प्रदान करती हैं ,जबकि वैज्ञानिक एवं बौद्धिक शोध का सम्बन्ध मौलिक वस्तुओं से होता है | इसके अलावा कुछ शोध ऐसे भी होते हैं जिनका उद्देश्य सैद्धांतिक व्यवस्थाओं का विकास करना होता है ,जिनके आधार पर विचारों का परीक्षण किया जाता हैं|

लेकिन सामान्यतःशोध अभिकल्प के दो प्रमुख उद्देश्य होते हैं |

1. शोध समस्या का उत्तर प्रदान करना ,एवं
2. विविधताओं को नियंत्रित करना|

किन्तु हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि शोध अभिकल्प स्वयं इन उद्देश्यों की पूर्ति नहीं करता वरन ये उद्देश्य शोधकर्त्ता द्वारा ही प्राप्त किए जाते हैं | शोध अभिकल्प शोधकर्त्ता की इस बात में अवश्य सहायता करता है कि वह शोध प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर ले तथा विविध त्रुटियों का पता लगा सके|यहाँ हम इन्हें थोड़ा विस्तार से समझने का प्रयास करेंगे –

1. **शोध समस्या का उत्तर प्रदान करना** – शोध अभिकल्प शोधकर्त्ता को विभिन्न शोध प्रश्नों के उत्तर प्रदान करने में मदद करता है | यह शोध अभिकल्प यथासंभव प्रामाणिकता ,विषयात्मकता ,यथार्थता ,निश्चयात्मकता एवं बचत के साथ प्राप्त करने में सहायता पहुँचाता| है ऐसा करने के लिए शोध अभिकल्प यथासंभव उन समस्त प्रमाणों को एकत्रित करने का प्रयास करता है ,जो समस्या से सम्बन्धित हो | शोध अभिकल्पनाओं के रूप में समस्या को इस तरह प्रस्तुत किया जाता है कि इसका आनुभविक परीक्षण या जाँच संभव हो सके | जितनी संभावनाएँ परीक्षण की होती हैं ,उतने ही प्रकार की शोध अभिकल्पनाएँ तैयार करते हैं | विश्वसनीय परिणाम निकालने के लिए किन ढंगों या प्रविधियों का प्रयोग किया जा रहा है | विश्वसनीय परिणाम प्राप्त करने के लिए चरों के मध्य पाए जाने वाले सम्बन्धों के उपयुक्त सन्दर्भ ढांचे की स्थापना की जाती है|
2. **विविधताओं को नियंत्रित करना** – शोध अभिकल्प विविधताओं को नियंत्रित करने में शोधकर्त्ता की सहायता करता है |शोध के समय में विविध त्रुटियों की सम्भावना बनी रहती है |शोध अभिकल्प में इन विविध त्रुटियों को कम करने के दों प्रमुख स्त्रोत हैं –

   (a)- शोध परिस्थितियों को अधिक नियंत्रित करते हुए परिमापन के कारण उत्पन्न हुई त्रुटियों को यथासंभव कम कीजिये|

(b)- मापों की विश्वसनीयता को बढ़ाइये|

वस्तुतः शोध अभिकल्प के नियंत्रण के कार्यक्रम तकनीकी है | इस अर्थ में शोध अभिकल्प एक नियंत्रणकारी व्यवस्था है | इसके पीछे पाया जाने वाला प्रमुख 'सांख्यिकी सिद्धांतयह है कि 'क्रमबद्ध विविधताओं को अधिक से अधिक बढ़ायें एवं साथ ही साथ बाध्य क्रमबद्ध विविधताओं को नियंत्रित कीजिए|'

इस प्रकार हम देखते हैं कि मूलतःशोध अभिकल्प के प्रथम उद्देश्य में शोधकर्त्ता अपने शोध के लिए चयनित समस्या से सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करता है और शोध अभिकल्प उसे एक उत्तर प्रामाणिक , वैषयिक एवं यथार्थ रूप में प्रस्तुत करता है |इसी प्रकार दूसरे उद्देश्य के द्वारा शोध के दौरान उपस्थित विविधताओं को नियंत्रित करता है |यह नियंत्रण भी उसे शोध अभिकल्प से प्राप्त होता है |

अभ्यास प्रश्न

शोध अभिकल्प के दो प्रमुख उद्देश्य बताएं |

शोध अभिकल्प विविधताओं को कैसे नियंत्रित करता है ? विस्तार से बताएं|

16.8 सारांश (Summary)

शोध के लक्ष्य के आधार पर विषय के विभिन्न पक्षों को उद्घाटित करने के लिए पहले से ही बनाई गई योजना की रुपरेखा को ही सामान्यतः शोध अभिकल्प कहा जाता है | इस प्रकार हम देखते हैं कि उद्देश्य की प्राप्ति के पूर्व ही उद्देश्य का निर्धारण करके शोध की जो रूप रेखा तैयार कर ली जाती है,उसी को शोध अभिकल्प कहा जाता है | जब यह शोध कार्य किसी सामाजिक प्रघटना से सम्बंधित होता है तो इसे सामाजिक शोध अभिकल्प कहा जाता है ,अतः यह स्पष्ट होता है कि सामजिक शोध के अनेक प्रकार होते हैं और शोधकर्त्ता अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सर्वाधिक

उपयुक्त समझ कर इनमें से किसी एक को चुन लेता है | सामान्यतःशोध अभिकल्प के दो प्रमुख उद्देश्य होते हैं |

1. शोध समस्या का उत्तर प्रदान करना ,एवं
2. विविधताओं को नियंत्रित करना |

16.9 शब्दावली (Glossary)

शोध अभिकल्प (Research Design): "शोध अभिकल्प अन्वेषण की योजना ,संरचना एवं एक रणनीति है जिसकी रचना इस प्रकार की जाती है कि शोध प्रश्नों के उत्तर प्राप्त हो सकें तथा विविधताओं को नियंत्रित किया जा सके | यह अभिकल्प शोध सम्पूर्ण रूपरेखा अथवा कार्यक्रम है जिसके अंतर्गत प्रत्येक चीज़ की रूपरेखा सम्मिलित रहती है | यह शोधकर्ता को परिकल्पनाओं के निर्माण एवं उनके परिचालानात्मक अभिप्रायों से लेकर आँकड़ों के अंतिम विश्लेषण तक करता है |

16.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. शोध अभिकल्प की विशेषताओं के बारे विस्तार से बताएं |
2. सामाजिक शोध में शोध अभिकल्प की आवश्यकता पर प्रकाश डालें |
3. शोध अभिकल्प के चरणों के विस्तार से व्याख्या करें |
4. शोध अभिकल्प के क्या – क्या उद्देश्य होते हैं ?

16.11 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची (Suggested Readings)

- Best, John W. , Kahn J James (2002)Research In Education, Allyn & Bacon; 9th Edition.
- Kerlinger, F.N. (1986) Foundation of Behavioral Research Holt, Rinehart and Winston, Inc., American Problem Series, New York, NY.
- कपिल ,डा० एच० के ० (2010): अनुसंधान विधियां – व्यवहारिक विज्ञानों में , हर प्रसाद भार्गव , पुस्तक प्रकाशक ,4/230, कचहरी घाट , आगरा |
- त्रिपाठी , जगपाल (2007): मनोविज्ञान एव शिक्षा में शोध पद्धतिया , एच० पी० भार्गव बुक हाउस , 4/230, कचहरी घाट आगरा |
- त्रिपाठी , प्रो० लाल बचन एव अन्य (2008): मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतिया, एच ० पी० भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा|

- सिह, अरुण कुमार (2009): मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधिया , मोतीलाल बनारसी दास , पटना एवं वाराणसी|
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) शिक्षा मनोविज्ञान, पटना, भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्री ब्यू.टर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, वाराणसी, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूयटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) उच्चतर मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्री ब्यूटर्स।
- Goode, W.J.&Hatt, P.K.(1981): Methods in Social Research.
- Festinger and Katz: Research method in Behavioural Sciences.
- Mc Guin, F.J.(1990): Experimental Psychology .
- Wiersma, W.,& Jurs, S.G.(2009) Research Methods in Education: An Introduction. New Delhi: Pearson Publication.

इकाई - 17

अभिकल्प के प्रकार – समूह अन्तर्गत , समूहांतर एवं कारकीय अभिकल्प

Types of research Design – Within Group, Between Group and Factorial Design

इकाई की रूपरेखा

17.1 प्रस्तावना

17.2 उद्देश्य

17.3 समूह अन्तर्गत अभिकल्प

17.4 समूहांतर अभिकल्प

17.5 कारकीय अभिकल्प

17.6 सारांश

17.7 शब्दावली

17.8 निबंधात्मक प्रश्न

17.9 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची

17.1 प्रस्तावना (Introduction)

मनोविज्ञान, शिक्षा तथा समाजशास्त्र में जितने भी शोध किए जाते हैं , उन्हें दो प्रकारों में बांटा जा सकता है – प्रयोगात्मक शोध तथा अप्रयोगात्मक शोध | प्रयोगात्मक शोध में जिन शोध अभिकल्पों का प्रयोग होता है उन्हें प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प तथा अप्रयोगात्मक शोध में जिन शोध अभिकल्पों का प्रयोग होता है उसे अप्रयोगात्मक शोधअभिकल्प कहा जाता है | इससे पूर्व की इकाई में हम शोध अभिकल्प के बारे में जान चुके हैं | प्रस्तुत इकाई में हम तीन शोध अभिकल्प- समूह अन्तर्गत , समूहांतर एवं कारकीय अभिकल्पों के बारे में पढेंगे |

17.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- शोध अभिकल्प (Research Design)के प्रकारों से परिचित हो सकेंगें।
- समूह अन्तर्गत शोध अभिकल्प की आवश्यकता को समझ सकेंगे एवं उसके उपयोगिता को जान सकेंगे |
- समूहांतर शोध अभिकल्प की आवश्यकता को समझ सकेंगे एवं उसके उपयोगिता को जान सकेंगे |
- कारकीय शोध अभिकल्प (Factorial Research Design) की आवश्यकता को समझ सकेंगे एवं उसके उपयोगिता को जान सकेंगे |

17.3 समूह अन्तर्गत शोध अभिकल्प (Within group Research Design)

जब अधिक संख्या में प्रयोज्य (Subject) उपलब्ध नहीं होते तब ऐसी परिस्थिति में समूहांतर अभिकल्पों का उपयोग करना कठिन होता है | इसके अलावा भी भिन्न- भिन्न समस्याओं के कारण समूहांतर अभिकल्पों का उपयोग उचित नहीं होता है | समूहांतर अभिकल्पों में विभिन्न समुपचारों (Treatment) के लिए अलग प्रयोज्य हो जो यादृक्छिक तरीके से चुने गये हों एवं समूह में याद्रिक्छिक तरीके (Randomized Methods) से चुने गये हों | इसके पीछे का कारण यह होता है कि प्रासंगिक विशेषताओं (Relative Characteristics) में एक दूसरे के समान हो , परन्तु वास्तविकता में नहीं हो पाता है | प्रायोगिक उपचारों (Experimental Treatment) में प्रयोज्य समूहों का सामान होना अति आवश्यक होता है | ऐसा यदि सावधानी पूर्वक किया भी जाय तब भी अनेक कारणों से प्रयोज्य समूहों में समतुल्यता (Equivalence) नहीं रहती है , जिसके कारण प्रदत्तों में त्रुटि – प्रसरण (Error Variance) की मात्रा अधिक होती है | इसीलिये इन कठिनाइयों को देखते हुए समूह अन्तर्गत अभिकल्प का प्रयोग अध्ययनों में किया जाता है | इस प्रकारके अभिकल्पों में सभी समुप्चारों में एक ही प्रयोज्य समूह का उपयोग किया जाता है | इसका तात्पर्य यह है कि सभी प्रायोगिक उपचारों (Experimental Treatment)में एक ही प्रयोज्य समूह का उपयोग करने से प्रतिदर्श चयन भी गलती होने की संभावना नहीं होती है | प्रायोगिक अध्ययन में प्रारम्भ से अन्त तक प्रयोज्य प्रासंकिक चरों में स्थिरता की संभावना बनी रहती है | समूह अन्तर्गत अभिकल्पों में मुख्य रूप से दो प्रारूपों का उपयोग ज़्यादा किया जाता है | इन अभिकल्पों में एक समूह दो स्थितियां तथा एक समूह बहुल स्थितियां प्रमुख हैं |

एक समूह दो दशाएं अभिकल्प (One group : Two Condition Design) : यह अभिकल्प दो यादृच्छिक समूह का एक बेहतरीन विकल्प है | इसमें एक समूह का प्रत्येक प्रयोज्य का उपयोग स्वतंत्र चर के दो अलग स्तरों पर या दो प्रायोगिक दशाओं में किया जाता है | इस प्रकार प्रत्येक प्रयोज्य से दो प्राप्तांक प्राप्त होते हैं | ये दोनों ही प्राप्तांक आपस में सहसम्बन्धित होते हैं | वास्तव में इस तरह के अभिकल्प स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर के बीच प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के

अस्तित्व का सत्यापन करने के लिए किया जाता है | इस अभिकल्प के अन्तर्गत उद्दीपक , सम्बन्ध एवं संकल्प सम्बन्धित चरों में से किसी एक को स्वतन्त्र चर के रूप में लेकर प्रयोज्यों के किसी अनुक्रिया , व्यवहार या उसके निष्पादन पर उसके प्रभाव का निर्धारण किया जाता है | स्वतंत्र चर के मूल्यों को लेकर दो प्रायोगिक दशाएं बनायी जाती हैं | पहली दशा में स्वतन्त्र चर का मूल्य कम एवं दूसरी दशा में उससे अधिक मूल्य रखा जाता है | कभी – कभी प्रथम दशा में स्वतंत्र चर को अनुपस्थित रख कर या शून्य मूल्य पर और दूसरी दशा में उससे अधिक मूल्य रखा जाता है | कभी कभी प्रथम दशा में स्वतंत्र चर को अनुपस्थित रख कर या शून्य मूल्य पर और दूसरी दशा में पर्याप्त मूल्य रखकर इस अभिकल्प का उपयोग करते हैं | इनको अ और या प्रायोगिक दशा प्रथम एवं द्वितीय नाम दिया जाता है | इस अभिकल्प के अन्तर्गत पहले आश्रित चर का मापन दशा अ या ब में फिर पूर्व निर्धारित अंतराल के बाद दशा ब या अ में किया जाता है | इस अभिकल्प के अन्तर्गत क्रम प्रभाव एवं संवहन प्रभाव को नियंत्रित करने के लिए समूह के आधे प्रयोज्यों से पहले अ दशा तथा बाद में ब दशा में प्राप्तांक प्राप्त किया जाता है | शेष आधे प्रयोज्यों को पहले ब दशा में रखकर प्राप्तांक प्राप्त किया जाता है | प्राप्त प्राप्तांकों को निम्न प्रकार से सारिणी रूप में रख सकते हैं |

प्रयोग (Experiment)	अ $_1$	ब $_2$
1		
2		
3		
4		
5		

प्रयोज्य (Experiment)	ब $_1$	अ $_2$
6		
7		
8		
9		
10		

एक समूह : दो से अधिक दशाएं अभिकल्प (One group : More than Two Condition Design): इस अभिकल्प में एक ही समूह के प्रयोज्यों का उपयोग करके तीन या तीन से अधिक प्रायोगिक उपचारों के अन्तर्गत आश्रित चर का मापन किया जाता है | इस अभिकल्प को दो या दो से अधिक यादृच्छिक समूह अभिकल्प (Randomized Group Design) के विकल्प के रूप में अपनाया जाता है | अन्तर केवल इतना होता है कि इस अभिकल्प के अन्तर्गत एक ही प्रयोज्य समूह तीन या तीन से अधिक प्रायोगिक उपचरों में प्रतिभाग करता है और इस प्रकार प्रत्येक प्रयोज्य की लक्षित अनुक्रिया का मापन पुनरावृत्त होता है | इसके कारण इस अभिकल्प में प्राप्त प्रदत्तों में त्रुटि प्रसारण की मात्रा अधिक होती है |

इस प्रकार के अभिकल्प में जो अध्ययन किए जाते हैं उसमें वातावरण जनित प्रासंगिक चरों के निर्णय पर विशेष ध्यान रखना आवश्यक होता है क्योंकि प्राणीगत प्रासंगिक चरों का निर्णय तो प्रत्येक दशामें उन्हीं प्रयोज्यों के प्रयोग के कारण स्वतः समाप्त हो जाता है | इस अभिकल्प में सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु या यादृच्छिक खण्ड अभिकल्प हेतु प्रयुक्त एक दिशा प्रसरण विश्लेषण का उपयोग किया जाता है | जब आश्रित चर का स्वरुप कोतिक्रमिक या नामित होता है या अंतराली प्रकार के होते हुए भी प्रसरण विश्लेषण में निहित मान्यताओं की पूर्ति नहीं होती है तो अप्राचालिक सांख्यिकी परीक्षणों का उपयोग किया जाता है |

मूल्यांकन : समूह अन्तर्गत अभिकल्पों के कई लाभ हैं | इस तरह अभिकल्पों का प्रयोग बचत पूर्ण है, क्योंकि इसमें सभी प्रयोज्यों के सभी दशाओं में प्राप्तांक उपलब्ध हो जाते हैं | जब प्रयोगात्मक परिस्थिति अस्थाई होती है जिसमें प्रयोज्यों के मापन हेतु पर्याप्त व्यवथा करनी पड़ती है, जिसमें व्याख्या के लिए समय , श्रम तथा उपकरणों आदि की अधिक व्यवस्था करनी पड़ती है तो ऐसी स्थिति में यह अभिकल्प अधिक उपयुक्त होता है | क्योंकि एक ही समूह के प्रयोज्यों पर सभी दशाओं में अध्ययन करना सरल होता है | इस अभिकल्प का उपयोग त्रुटि- प्रसारण को कम करता है,क्योंकि इस अभिकल्प में उन्हीं प्रयोज्यों के उपयोग के कारण त्रुटि- प्रसरण (Error variance) से व्यक्तिगत भिन्नता के अंश को कम कर दिया जाता है |

प्रदत्तों (Data) का सांख्यिकीय विश्लेषण सांख्यिकीय विश्लेषण के सभी प्रयोज्यों के लाब्धाकों को स्तंभ अ तथा ब में व्यवस्थित कर इसका परीक्षण किया जाता है कि स्वतंत्र चर में परिवर्तन के कारण आश्रित चर पर प्रयोज्यों के प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर प्राप्त हुआ है या नहीं | इसमें शून्य परिकल्पना यह होती है कि स्वतंत्र चर का सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है तथा दोनों दशाओं में (अ एवं ब) प्राप्त मध्यमानों (Mean) का अन्तर शून्य होता है | प्रायोगिक परिकल्पना यह होती है कि दोनों मध्यमानों का अन्तर शून्य से सार्थक स्तर पर अधिक या शून्य से कम है |

$H_o = M_a - M_b = o$ या $M_a = M_b$

$H_A = M_a - M_b = o$ या $M_a - M_b > o$ या $M_a - M_b < o$

इसमें टी- अनुपात की गणना कर देखा जाता है कि शून्य परिकल्पना को अस्वीकृत किया जा सकता है या नहीं |

$$t = \frac{\sum D}{\sqrt{[N\sum D^2 - (\sum D^2)/N - 1}}$$

D: प्रत्येक प्रयोज्य के प्राप्तांक युग्मों का अन्तर

D: प्राप्तांक युग्म के अन्तर का वर्ग

N: प्रयोज्यों की संख्या (Number of Subjects)

यदि मापे जाने वाले आश्रित चर का वितरण सामान्य नहीं है तथा अध्ययन गत समूह बहुत छोटा है तो फिर सांख्यिकीय विश्लेषण (Statistical analysis) हेतु अप्राचालिक सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है | इस स्थिति में चिन्ह परीक्षण का उपयोग करना उचित होता है |

अनेक विशेषताओं के बावजूद इस अभिकल्प की कुछ परिसीमाएं (Limitation) भी हैं : एक प्रायोगिक दशा के उपयोग का प्रभाव दूसरी प्रायोगिक दशा के आश्रित चर के मापन पर पड़ता है| इस अभिकल्प में प्रयोग समूह जब बहुत छोटा होता है तब प्रतिनिधित्व पूर्णता की कमी रहती है , इसके कारण परिणामों के सामान्यीकृत करने की सापेक्षिक रूप से कम क्षमता रहती है | इसमें एक दशा के उपयोग का अनुभव दूसरे समुपचारों के प्रभाओं को त्रुटिपूर्ण बनाता है | इस अभिकल्प में वातावरण जनित प्रासंगिक चरों का प्रभाव सापेक्षिक रूप से अधिक रहता है |

अभ्यास प्रश्न

1. समूह अन्तर्गत अभिकल्प से आप क्या समझते हैं ?

---

2. एक समूह : दो से अधिक दशाएं अभिकल्प (One group : More than Two Condition Design) से क्या अभिप्राय है ?

---

3. एक समूह दो दशाएं अभिकल्प (One group : Two Condition Design) से आप क्या समझते है ? विस्तार से बताएं |

17.4 समूहांतर अभिकल्प (Without Group Design)

समूहांतर अभिकल्प यादृच्छिक समूह अभिकल्प का ही रूप (Form) है | इस अभिकल्प को द्विसमूह या दो स्वतंत्र समूह अभिकल्प भी कहते हैं | इसमें प्रायोगिक उपचार के लिए एक अलग प्रयोज्य समूह का प्रयोग किया जाता है | दो यादृक्छीकृत समूह अभिकल्प में दो प्रयोज्य समूहों की आवश्यकता पड़ती है | दो से अधिक यादृक्छीकृत समूह अभिकल्प में कम से कण तीन या चार या पाँच या इससे अधिक प्रयोज्य समूहों का उपयोग किया जाता है | इन अभिकल्पों का उपयोग करने के पूर्व अध्ययन की समस्या के अनुसार लक्षित समष्टि (Population) से वांछित संख्या में यादृच्छिक रीति से प्रयोज्यों को चयन कर पुनः यादृच्छिक ढंग से समूहों में विभक्त कर दिया जाता है| प्रत्येक उप समूह में अध्ययन की जाने वाली अनुक्रिया या उसके व्यवहार का मापन पूर्व निर्धारित प्रायोगिक उपचार करने के बाद किया जाता है | प्रायोगिक उपचारों में भिन्नता के आधार पर इसका परीक्षण किया जाता है कि मापी गई अनुक्रियाओं में सार्थक भिन्नता उत्पन्न हुई या नहीं |

दो यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प :

इस अभिकल्प में शोध के इस आधारभूत प्रश्न का उत्तर देने के लिए किया जाता है कि कोई निश्चित पूर्ववर्ती घटना या दशा पश्च की घटना या दशा को उत्पन्न करती है या नहीं | इसमें पूर्ववर्ती घटना या दशा , स्वतंत्र चर एवं परिवर्ती घटना या दशा को आश्रित चर कहा जाता है | इसमें स्वतंत्र चर के दो मूल्यों का प्रयोग किया जाता है | प्रत्येक मूल्य के उपयोग को प्रायोगिक उपचार कहा जाता है | सामन्यतः स्वतन्त्र चर के दो मूल्यों में एक का मूल्य का स्तर श्होंय या दूसरे की एक निश्चित मात्रा होती है | जिस समूह पर शून्य मूल्य के स्वतंत्र चर को दिया जाता है उसे नियंत्रित समूह एवं जिस समूह पर स्वतन्त्र चर का एक निश्चित मूल्य दिया जाता है उसे प्रायोगिक समूह कहा जाता है | कभी –

कभी स्वतंत्र चर की एक छोटी मात्रा तथा दूसरे समूह के लिए उसकी बड़ी मात्रा रक्खी जाती है |ऐसी दशा में प्रत्येक प्रयोज्य समूह एक दूसरे के लिए नियंत्रित समूह का कार्य करती है | वैसे इन्हें प्रायोगिक समूह प्रथम एवं प्रायोगिक समूह द्वितीय कहा जाता है | अक्सर ऐसा किया जाता है कि प्रायोगिक समूह में दोनों अन्तर सामान रहे | वैसे दोनों समूह में थोड़ी कम एवं अधिक संख्या भी रह सकती है | स्वतंत्र चर के विभिन्न मूल्यों का परीक्षण प्रयोग स्थिति से अन्य प्रासंगिक चरों को नियंत्रित या स्थिर रख कर प्रेक्षण या मापन किया जाता है |इस अभिकल्प से प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण उपयुक्त सांख्यिकीय विधियों द्वारा किया जाता है | इस अभिकल्प में प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए उपयुक्त सांख्यिकीय विधियों के चयन के लिए तीन मुख्य आधार होते हैं | प्रथम यह कि आशित चर का मापन का अंतरान या नामित स्तर पर किया जाय दूसरा प्रत्येक समूह्में लिए जाने वाले प्रयोज्यों की संख्या चोटी है या बड़ी | क्योंकि छोटी संख्या होने पर एक प्रकार की सांख्यिकी तथा बड़ी होने पर दूसरे प्रकार की सांख्यिकी विधियों का उपयोग किया जाता है | तीसरा यह है कि स्वतंत्र चर के प्रभावशाली होने पर दोनों समूहों के प्रदत्तों में सार्थक भिन्नता अवश्य होगी जिसके आधार पर प्रायोगिक परिकल्पना की पुष्टि हो जाती है | किन्तु सांख्यिकी विशेष का उपयोग करते समय शोध कर्ता शून्य परिकल्पना को आधार बना कर विश्लेषण की प्रक्रिया को आगे बढाता है |

इसमें दोनों मध्यमानों के अन्तर को ही सार्थकता की जाँच के लिए विशेष रूप से टी – अनुपात के गणना की जाती है

टी अनुपात की गणना के बाद उसकी सार्थकता की जाँच के लिए स्वायत्तता अंशों का निर्धारण किया जाता है | स्वायत्तता अंश $(df)=(n_1-1)+(n_2-1)$ (Degree of Freedom) पुनः सारणी से प्राप्त स्वायत्तता अंश पर टी-मूल्य को .05 या .01पर देखते हैं कि यह मूल्य जो प्राप्त हुआ है वह अधिक है या कम |अधिक होने पर वह टी –मूल्य सार्थक होगा और कम होने पर प्राप्त टी –मूल्य सार्थक नहीं होंगे इसी के आधार पर प्रयोगात्मक या शून्य परिकल्पना को स्वीकृत या अस्वीकृत करते हैं |

मूल्यांकन :-

इस अभिकल्प में किए गए अध्ययन से यह जानकारी प्राप्त होती है कि कोई स्वतंत्र चर किसी आश्रित चर को प्रभावित करता है या नहीं | परन्तु इस अभिकल्प के माध्यम से किसी स्वतंत्र चर और आश्रित चर विशेष के बीच प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के स्वरुप का स्पष्ट निरूपण नहीं किया जा सकता है| अनेक स्थितियों में दो यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प में किए गए प्रायोगिक अध्ययनों से चरों के प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के बारे में भ्रामक प्रदत्त भी प्राप्त होते हैं | इसमें स्वतंत्र चर के एक मूल्य या अधिक से अधिक दो मूल्यों का ही प्रयोग किया जा सकता है |प्रयोज्य समूहों की संख्या के कम होने पर दोनों में प्रारंभिक समतुल्यता भी संदिग्ध हो जाती है |

दो से अधिक यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प

इस अभिकल्प के अन्तर्गत यादृच्छिक रीति से गठित तीन या चार या इससे अधिक समूहों का उपयोग होता है | इसके अन्तर्गत लक्षित समष्टि से यथेष्ट संख्या में प्रयोज्यों का चयन करके यादृच्छिक ढंग से 3,4,5 या समूहों में बाँट लिया जाता है |प्रथम समूहों को स्वतंत्र चर या का शून्य मूल्य, दूसरों को अल्प मात्रा में और इसी प्रकार बढ़ाते हुए अन्तिम समूहों को अधिकतम मूल्यों को उपचार हेतु दिया जाता है | उपचार के बाद प्रत्येक समूह में आश्रित चर का मापन किया जाता है|अनेक दृष्टिकोणों से यह अभिकल्प महत्वपूर्ण है | इस अभिकल्प में एक ही साथ स्वतंत्र चर के कई मूल्यों के सापेक्षिक प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है |दो से अधिक समूहों वाले अभिकल्प के माध्यम से स्वतंत्र चर और आश्रित चर के प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के सही स्वरुप का निरूपण सम्भव होता है | यह अभिकल्प इस दृष्टिकोण से भी अधिक उपयोगी है कि स्वतंत्र चर के दो से अधिक मूल्यों को लिया जा सकता है और देखा जा सकता है कि स्वतंत्र चर में कितनी वृद्धि पर किस तरह का परिवर्तन आश्रित चर पर होता है |

दो से अधिक यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प के अन्तर्गत किए गए प्रायोगिक अध्ययन से प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर स्वतन्त्र चर एवं आश्रित चर के बीच प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के विषय में अनेकों प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किए जाते है | प्रत्येक प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के लिए अलग –अलग प्रकार की सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है |प्रमुख रूप से एक दिशा प्रसरण विश्लेषण , कोटि परीक्षण ,चिन्ह परीक्षण आदि सांखिकीय विधियों का उपयोग इस अभिकल्प में प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु किया जाता है |जब प्राप्त प्रदत्तों के वितरण प्रकृत होते हैं तो एकदिश प्रसरण विश्लेषण ही किया जाता है |

अभ्यास प्रश्न

1 समूहांतर अभिकल्प से क्या अभिप्राय है? स्पष्ट करें |

2 दो यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प से आप क्या समझते हैं ?

3 दो से अधिक यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प से आप क्या समझते हैं ?

17.5 कारक गुणित शोध अभिकल्प (Factorial Research Design)

सभी प्रयोगात्मक अभिकल्प (experimental designs) में कारक गुणित अभिकल्प (factorial design)अधिक जटिल माना गया है | कारक गुणित अभिकल्प (factorial design) का प्रयोग उस परिस्थिति में किया जाता है जहाँ प्रयोगकर्त्ता एक साथ ही दो या दो से अधिक IV के प्रभावों का अध्ययन करना चाहता है (क्योंकि इन चरों के प्रभाव का अलग –अलग अध्ययन करने का समय उसके पास नहीं होता है या वह लम्बे समय तक किसी कारण से इन्तजार नहीं कर सकता है) तथा साथ ही साथ वह इन चरों के अन्तः क्रिया (interaction) द्वारा पड़ने वाले प्रभावों का भी अध्ययन करना चाहता है |जब किसी डिजाइन में दो IVs का एक साथ अध्ययन किया जाता है , तो इसे द्वि -कारक कारक गुणित अभिकल्प (two-factor factorial design) कहा जाता है | परन्तु

जब डिजाइन में तीन IVs का एक साथ अध्ययन किया जाता है तो उसे त्रिकारक अभिकल्प (three-factor factorial design)कहा जाता है | कारक गुणित अभिकल्प (factorial design) दो विमाओं (dimensions) के आधार पर परिवर्तित होते पाए जाते है –IV की संख्या (number of IV) तथा प्रत्येक IV के स्तर की संख्या (number of levels of IV). यदि किसी प्रयोग में दो IV है और दोनों के दो स्तर (levels) है ,तो उसे 2x2 कारक गुणित अभिकल्प (factorial design)कहा जाता है | उसी तरह यदि दोनों IV के तीन-तीन स्तर है ,तो उसे 3x3 कारक गुणित अभिकल्प (factorial design) कहा जाता है | परन्तु यदि एक IV का स्तर 3 तथा दूसरे का 2 है ,उसे 3x2 कारक गुणित अभिकल्प (factorial design) कहा जाता है | कारक गुणित अभिकल्प (factorial design)का प्रकार चाहे जो भी हो , इसके द्वारा वहिरंग चर (extraneous variable)का नियंत्रण उस चर को एक स्वतंत्र चर (independent variable)के रूप में बदल कर किया जाता है |

यादृच्छिक कारक गुणित अभिकल्प (Randomized factorial design) वह अभिकल्प है जिसमें प्रयोगकर्त्ता कम-से-कम दो IV के प्रभावों का एक साथ अध्ययन करता है | इस तरह के अभिकल्प में प्रत्येक ऐसे IV के कम-से-कम दो-दो स्तर होते हैं |इस तरह से सबसे छोटा यादृच्छिक कारक गुणित अभिकल्प (Randomized factorial design) 2x2का होता है | इसमें प्रयोगकर्त्ता प्रयोज्यों का प्रारंभिक चरण जीव संख्या (population)से यादृच्छिक ढंग से (randomly)करता है |इसके बाद प्रयोज्यों को विभिन्न प्रयोगात्मक समूहों में बाँटकर प्रत्येक समूह में विवेचन (treatment)यानी X देती है और उसका मापन DV पर कर लेता है | नीचे एक ऐसे ही कारक गुणित अभिकल्प का संकेतन किया जा रहा है जिसमें दो स्वतंत्र चर (IV) हैं-Aतथा B. A स्वतंत्र चर के तीन स्तर हैं– A1,A2 तथा A3 एवं Bस्वतंत्र चर के दो स्तर हैं–B1तथा B2.

IV (A)

A_1	A_2	A_3
A_1B_1	A_2B_1	A_3B_1
A_1B_2	A_2B_2	A_3B_2

उपर्युक्त कारक गुणित अभिकल्प 3x2 का है | स्पष्ट है कि इसमें 6प्रयोगात्मक अवस्थाएँ हैं और प्रत्येक प्रयोगात्मक अवस्था में एक-एक समूह कार्यरत होगा |

एक उदाहरण-मान लिया जाए कि कोई प्रयोगकर्त्ता यह अध्ययन करना चाहता है कि फैक्ट्री में काम करने वाले मजदूरों की कार्यक्षमता (work efficiency) पर कमरे के ताप (temperature) तथा आवाज (voice) का क्या प्रभाव पड़ता है | स्पष्ट है कि इस अध्ययन में ताप तथा आवाज दो IV हैं|

मान लिया जाए कि ताप (temperature) यहाँ A एवं आवाज (voice) B है | कार्यक्षमता यहाँ DV है जिसे प्रयोगकर्त्ता एक प्रश्नावली (questionnaire) के माध्यम से मापने का निश्चय करता है | थोड़े देर के लिए मान लिया जाए कि वह ताप के तीन स्तर –उच्चतम ताप (A1),मध्यम ताप (A2)तथा निम्न ताप (A3) को चुनता है और उसी तरह आवाज (voice) के भी वह दो स्तर को अथार्त अधिक आवाज (voice)एवं कम आवाज (voice) चुनता है | यहाँ अधिक आवाज को B1 तथा कम आवाज की अवस्था को B2 कहा जा सकता है |वह एक ही यौन (sex) के 100 मजदूरों को यादृच्छिक रूप से मान लिया जाए चयन करता है | अब वह 60 मजदूरों को यादृच्छिक 6 समूहों में यदेइच्चिक ढंग से आवंटित (randomly assigned) कर देगा और पुनः यादृच्छिक ढंग से ही जैसे सिक्का-उछाल (coin tossing)करके यह निर्णय करगा कि कौन समूह A1B1अवस्था (अथार्थ उच्च ताप एवं अधिक आवाज की अवस्था) में कार्य करेगा ,कौन समूह A1B1अर्थात उच्च ताप एवं कम आवाज की अवस्था) में कार्य करेगा और इसी तरह बाकी 4 समूहों को बाकी चार प्रयोगात्मक अवस्थाओं में बाँट दिया जाएगा | प्रत्येक समूह सम्बन्धित अवस्था में एक खास समय जैसे 2घंटा के लिए समान ढंग का कार्य करेगा | उसके1घंटा बीतने के बाद प्रत्येक समूह के कार्य क्षमता की माप प्रश्नावली विधि से की जायेगी |इस तरह से प्रत्येक अवस्था में 10-10 प्राप्तांक (क्योंकि प्रत्येक अवस्था में 10-10प्रयोज्य थे)प्राप्त होंगे और इन प्राप्तांकों के आधार पर F परीक्षण ज्ञात करके प्रयोगकर्त्ता निम्नांकित निष्कर्षों पर पहुँच सकता है -

1. ताप का प्रभाव कार्य क्षमता पर सार्थक पड़ता है या नहीं |
2. आवाज का प्रभाव कार्य क्षमता पर सार्थक पड़ता है या नहीं |
3. ताप एवं आवाज (ताप Xआवाज)एक साथ मिल कर कार्यक्षमता पर कोई सार्थक प्रभाव डाल पाते है या नहीं |

इस तीसरे तरह के प्रभाव को अन्तः क्रिया प्रभाव (interaction effect)की संज्ञा दी जाती है |

इस अभिकल्प में दोनों प्रयोज्य समूहों को आश्रित चर का लब्धांक अलग अलग प्राप्त होता है। इन लब्धांकों के मध्यमानों की गणना कर ली जाती है। जब दोनों मध्यमानों के मूल्यों में अंतर पाया जाता है तब इसकी सार्थकता की जांच की जाती है। इसमें

t- अनुपात $\dfrac{m_1 - m_2}{\sqrt{\left(\dfrac{SS_1 + SS_2}{(n-1)(n_2-1)}\right)\left(\dfrac{1}{n_1}+\dfrac{1}{n_2}\right)}}$

$M_1 - M_2$ दो प्रयोज्य समूहों के मध्यमानों का अंतर

SS_1 = प्रथम समूह के मध्यमान से लब्धांकों के विचलन के वर्गों का योग

n_1 तथा n_2 प्रथम समूह एवं द्वितीय समूह में प्रयोज्यों की संख्या

$$ss = \sum x^2 - \frac{\left(\sum x\right)^2}{n}$$

$\sum x^2$ समूह के लब्धांक वर्गों का योग

$\left(\sum x\right)^2$ समूह के लब्धांक के योग का वर्ग

अभ्यास प्रश्न

1 अन्तः क्रिया प्रभाव (interaction effect) से आप क्या समझते हैं ?

2 कारक गुणित शोध अभिकल्प से आप क्या समझते हैं ? अपने शब्दों में स्पष्ट करें |

17.6 सारांश (Summary)

मनोविज्ञान, शिक्षा तथा समाजशास्त्र में जितने भी शोध किए जाते हैं , उन्हें दो प्रकारों में बांटा जा सकता है – प्रयोगात्मक शोध तथा अप्रयोगात्मक शोध | प्रयोगात्मक शोध में जिन शोध अभिकल्पों का प्रयोग होता है उन्हें प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प तथा अप्रयोगात्मक शोध में जिन शोध अभिकल्पों का प्रयोग होता है उसे अप्रयोगात्मक शोधअभिकल्प कहा जाता है |

17.7 शब्दावली: (Glossary)

- **समूहांतर अभिकल्प (Between groups) :** समूहांतर अभिकल्पों में विभिन्न समुपचारों (Treatment) के लिए अलग प्रयोज्य हो जो यादृक्छिक तरीके से चुने गये हों एवं समूह में याद्रिक्छिक तरीके (Randomized Methods) से चुने गये हों |
- **कारक गुणित अभिकल्प (Factorial research design):** सभी प्रयोगात्मक अभिकल्प (experimental designs) में कारक गुणित अभिकल्प (factorial design)अधिक जटिल माना गया है | कारक गुणित अभिकल्प (factorial design) का प्रयोग उस परिस्थिति में किया जाता है जहाँ प्रयोगकर्त्ता एक साथ ही दो या दो से अधिक IV के प्रभावों का अध्ययन करना चाहता है (क्योंकि इन चरों के प्रभाव का अलग –अलग अध्ययन करने का समय उसके पास नहीं होता है या वह लम्बे समय तक किसी कारण से इन्तजार नहीं कर सकता है) तथा साथ ही साथ वह इन चरों के अन्तः क्रिया (interaction)द्वारा पड़ने वाले प्रभावों का भी अध्ययन करना चाहता है |

17.8 निबंधात्मक प्रश्न

- शोध अभिकल्प (Research Design)के विभिन्न प्रकारों के बारे में बताएं।
- समूह अन्तर्गत शोध अभिकल्प की आवश्यकता एवं उसके उपयोगिता को स्पष्ट करें |
- समूहांतर शोध अभिकल्प की आवश्यकता एवं उसकी उपयोगिता को स्पष्ट करें |
- कारकीय शोध अभिकल्प (Factorial Research Design) की आवश्यकता एवं उसकी उपयोगिता को स्पष्ट करें |

17.9 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची(Suggested Readings)

- Best, John W. , Kahn J James Research In Education, Allyn & Bacon; 9th Edition.
- Kerlinger, F.N. (1986) Foundation of Behavioral Research Holt, Rinehart and Winston, Inc., American Problem Series, New York, NY
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) शिक्षा मनोविज्ञान, पटना, भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, वाराणसी, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) उच्चतर मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- Wiersma, W.,& Jurs, S.G.(2009) Research Methods in Education: An Introduction. New Delhi: Pearson Publication.

इकाई - 18

आंकड़ा संग्रहण की तकनीक

Technique of Data-collection

अवलोकन , प्रश्नावली , साक्षात्कार , निर्धारण मापनी , समाजमिति

Observation, Questionnaire, Interview, Rating scale, Checklist, Sociometry

इकाई की रूपरेखा

18.1 प्रस्तावना

18.2 उद्देश्य

18.3 परीक्षण सूची (Check List)

18.4 निर्धारण मापनी (Rating Scale)

18.5 अवलोकन (Observation)

18.6 साक्षात्कार (Interview)

18.7 समाजमीति (Sociometry)

18.8 सारांश

18.9 शब्दावली

18.10 निबंधात्मक प्रश्न

18.11 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची

18.1 प्रस्तावना:

वर्तमान युग में मनोविज्ञान तथा शिक्षा की प्रगति को भी मापन ने बहुत हद तक प्रभावित किया है | मनोविज्ञान तथा शिक्षा के अंतर्गत मानव के विभिन्न व्यवहारों का अध्ययन किया जता है | इस कार्य के लिए मानव व्यवहार का मापन करना अत्यंत आवश्यक हो जाता है | मापन के लिए विभिन्न प्रकार के उपकरणों की सहायता ली जाते है | इस इकाई में परीक्षण सूची (Check List),निर्धारण मापनी (Rating Scale),अवलोकन(Observation),साक्षात्कार (Interview), समाजमीति (Sociometry) जैसे उपकरणों पर विस्तार में चर्चा की जायेगी |

18.2 उद्देश्य:

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- परीक्षण सूची के गुण दोषों एवं आवश्यकता के बारे में जान सकेंगे।
- निर्धारण मापनी के गुण दोषों एवं आवश्यकता के बारे में जान सकेंगे।
- अवलोकन के गुण दोषों एवं आवश्यकता के बारे में जान सकेंगे।
- साक्षात्कार के गुण दोषों एवं आवश्यकता के बारे में जान सकेंगे।
- समाजमीति के गुण दोषों एवं आवश्यकता के बारे में जान सकेंगे।

18.3 परीक्षण सूची (Check List):

परीक्षण सूची (Check List) ऐसी सरल युक्ति (Simple method) है जिसमें अध्ययन के अन्तर्गत समस्या के सम्बन्ध में शोध द्वारा आवश्यक समझे जाने वाले मदों की सूची बनाई जाती है | प्रत्येक मद के सामने कुछ स्थान रखा जाता है जिसमें वह उसकी उपस्थिति या अनुपस्थिति जाँच कर के 'हां' या 'नहीं'में अंकित कर दी जाती है या उ़सकी प्रकार या संख्या उपयुक्त शब्द या संख्या लिख कर दर्शाई जाती है | इस सूची से प्रेक्षक का ध्यान सभी प्रासंगिक घटकों के तरफ आकृष्ट हो जाता है और वह आकड़ों (Data)को शीघ्रता व सुव्यवस्थित रूप में संलेख कर लेता है |

इस प्रकार परीक्षण सूची के उत्तर यथार्थ से सम्बन्धित होते हैं ,किसी निर्णय से नहीं | परीक्षण सूची शैक्षिक सर्वेक्षणों में तथ्यों के एकत्र करने का महत्वपूर्ण उपकरण होती है , अर्थात पुस्तकालय , खेल – कूद सुविधाएँ ,स्कूल के भवन ,पाठ्यपुस्तकें ,शिक्षण विधियाँ, आदि की जाँच के लिए | परीक्षण सूची कभी –कभी प्रश्नावली के रूप में भी प्रयोग की जाती है जिसमें शोधकर्ता के स्थान पर प्रतिवादी ही उत्तर भर कर देता है |

परीक्षण सूची का निर्माण (Construction of a checklist) मनोविज्ञान शोध के विभिन्न क्षेत्रों में अन्य शोधकर्ताओं द्वारा पूर्व निर्मित व प्रयोग की हुई परीक्षण सूचियों को शोधकर्ता द्वारा सावधानीपूर्वक जाँच लेना चाहिए | तब उसे यह निर्णय करना चाहिए कि उसे अपनी जाँच के लिए ,किन मदों पर सूचना की आवश्यकता होगी | इस प्रकार निर्धारित मदों को तर्कसंगत व मनोवैज्ञानिक क्रम में व्यवस्थित कर लेना चाहिए | परीक्षण सूची में मदों को लिखने व व्यवस्थित करने की कई रीतियाँ हैं |

कैम्फर(1960) ने चार रीतियाँ (Four Methods) बताई हैं और शोधक उन चारों या उनमें से कुछ का अपने उद्देश्य के लिए सर्वोत्तम उपयोग कर सकता है |

1. वह रूप जिसमें प्रेक्षण या प्रतिवादी को एक स्थिति में सभी मदों की जाँच करने को कहा जाता है | उदाहरण के लिए ,आप के स्कूल में खेले जाने वाली खेलों के पहले (✓)चिन्ह लगाइए |
2. वह रूप जिसमें प्रश्नों के 'हाँ' या 'नहीं' के उत्तर के रूप में या तो गोला बना दिए जाते हैं या रेखांकित कर दिए जाते हैं |

3. क्या आप के विश्वविद्यालय में शिक्षक संघ है? हाँ /नहीं |
4. वह रूप जिसमें प्रश्न केवल धनात्मक प्रकथन (Positive Statement) के रूप में लिखे जाते हैं और प्रतिवादी को उनके सम्मुख दायीं ओर (✓) चिन्ह लगाना होता है,जैसे हमारे स्कूल में छात्र संघ है |
5. वह रूप जिसमें मदों को सर्वोत्तम रूप से वाक्यों में लिखा जाता है और प्रतिवादी से उपयुक्त शब्दों पर जाँच चिन्ह ,रेखांकन या गोला ,बनाने को कहा जाता है | जैसे स्कूल में वाद – विवाद प्रतियोगिताएँ, अनियमित रूप से ,साप्ताहिक ,दो सप्ताह में ,मासिक ,वार्षिक आयोजन होती हैं |

   परीक्षण सूची के प्रश्नों में शब्दों का चयन ऐसा होना चाहिए जिससे गुणात्मकता के अन्तर का स्पष्ट आभास हो | इससे परीक्षण सूची की वैधता (Validity) बढ़ती है | परीक्षण सूची का प्रारंभिक प्रयोग भी इस उपकरण को अधिक उद्देश्यपूर्ण बना सकता है |

   परीक्षण सूची के उत्तरों का विश्लेषण व व्याख्या (Analysis and Interpretation of Check-list Responses)

   परीक्षण सूची के उत्तरों की सारणी बनाना , प्रमात्रीकरण करना और व्याख्या ठीक उसी प्रकार की जाती है जैसे प्रश्नावली के उत्तरों की |

अभ्यास प्रश्न

1 परीक्षण सूची से आप क्या समझते हैं ?

2 परीक्षण सूची के निर्माण की विधि लिखें |

3 परीक्षण सूची में मदों को लिखने व व्यवस्थित करने की रीतियों का विस्तार से उल्लेख करें |

18.4 निर्धारण मापनी (Rating Scale)

निर्धारण मापनी (Rating Scale) मूल्यांकन के क्षेत्र में व्यवहार में आने वाले उपकरणों में सबसे अधिक प्रचलित हैं | यह अनेक रूपों में पायी जाती है |

गुड तथा स्कैट्स के अनुसार–'यह मूल्यांकन की जाने वाली वस्तु के विभिन्न अंगों की ओर ध्यान आकर्षित करती हैं | किन्तु इसमें उतने प्रश्न अथवा खण्ड नहीं होते जितने चेकलिस्ट अथवा स्कोर कार्ड में होते हैं |'

वानहैलेन के अनुसार - निर्धारण मापनी (Rating Scale) किसी चर की श्रेणी ,उसकी गहनता अथवा महत्व अथवा बारम्बारता को निश्चित करती है |'

जॉन डब्ल्यू वेस्ट के अनुसार– 'निर्धारण मापनी (Rating Scale) किसी व्यक्ति के गुणों अथवा वस्तु के सीमित पक्षों का गुणात्मक विवरण प्रस्तुत करती है |'

निर्धारण मापनी (Rating Scale) दो मूल अवधारणाओं पर निर्धारित होती है :-(1) सातत्य की स्थिति और (2) उस सातत्य का प्रतीनिधित्व |

पहले की जाँच अन्तिम वितरण अध्ययन से तथा दूसरे की जाँच परीक्षण की वैधता से होती है |

निर्धारण मापनी (Rating Scale) का वर्गीकरण –

- **सामाजिक अन्तर मापनी (Social Distance Scale)-** सामाजिक अन्तर की धारणा एक सत्यता को सूचित करती है | जिस समूह का सामाजिक अन्तर मापनी हो उसे एक सातत्य पर रखते हैं | इसके प्रणेता बोगार्डस थे |
- **प्रत्यय भिन्नता मापनी (The Semantic Differential Scale)-** इसके अन्तर्गत अनेक सप्त इकाई ,दो ध्रुवीय ग्राफ सम्बन्धी मापनी होती है | वास्तव में इसका प्रयोग किसी प्रत्यय के अर्थ क्षेत्रों में भी इसका प्रयोग हो सकता हैं |
- **क्यू विधि (Q-Techniques)-**इस विधि कि खोज स्टीफन्सन ने 1953 में की थी | Q से तात्पर्य प्राप्तांको के सह सम्बन्ध से नहीं हैं ,अपितु आतंरिक एवं पारस्परिक सह सम्बन्ध से है| इस विधि में 50 से 100 कथन तक संग्रहीत किए जाते हैं , तथा इन्हें अलग –अलग कार्डों पर छाप देते हैं | विषयी कार्डों को 7,9,11के क्रम में एक सातत्य पर छांटना है जिसके एक सिरे पर पूर्णत व्यवहार्य एवं दूसरे सिरे पर पूर्णत अनव्यवहार्य होता है | प्रत्येक ढेर में कार्डों की संख्या ही उस सातत्य पर अंको को सूचित करती है |

  आत्म निर्धारण विधि (Self-anchoring Techniques)- यह एक आशाब्दिक निर्धारण मापनी है जिसका निर्माण किलपैट्रिक ने 1960 में किया | इसमें विषयी से पूछा जाता है कि उसके लिए कौन सी जीवन शैली सर्वोत्तम होगी ,तथा कौन सी सबसे खराब होगी | शब्दशः उत्तर लिखा जाता है इसके बाद उसके सामने एक चित्र रूप में मापनी प्रस्तुत की जाती है |जिसमें एक सीढ़ी के दोनों किनारे होते हैं | एक सबसे अच्छा और दूसरा बुरे का प्रतीक होता है | विषयी से यह प्रदर्शित करने के लिए कहा जाता है कि वह इस समय अपने को किस खण्ड में स्थित समझता है |

- **आन्तरिक संगत मापनी (Internal Consistency Scale)-** यह थर्सटन की एटीट्यूड स्केलिंग में सुधार का फल है | इसके अन्तर्गत संगत प्रश्नों को उसी मूल्य के अन्य प्रश्नों के साथ रखते हैं |
- **गुप्त संरचना मापनी (Latent Structure Scale)-** यह गुणात्मक आँकड़ों के तत्व विश्लेषण की एक प्रमुख विधि है | यह मापने में उपयोगी है , परन्तु जटिल है |
- **स्थिति मापनी (Ranking Scale)-** निर्धारकों के ऊपर निर्भर होने के कारण यह भी निर्धारण मापनी के ही समान है |एक निरपेक्ष मापनी पर निर्भर किए जाते हैं | उत्तेजना की पूरी श्रृंखला में तुलना की जाती है | इसे युग्मित तुलना विधि या समान अन्तर प्रदर्शिका द्वारा करते हैं |
- **निर्धारण मापनी (Rating Scale)-** यह बहुत प्रचलित मापनी है | निर्धारण मापनी के सम्बन्ध में अपने सर्वे पर विचार व्यक्त करते हुए गुड ने लिखा है कि एक व्यवस्थित पद्धति के अनुसार

किसी वस्तु अथवा व्यक्ति में निहित विशेषताओं की सीमाओं का आंकलन है , जिसे गुणात्मक अथवा परिमाणात्मक विधि द्वारा प्रदर्शित करते हैं |

निर्धारण मापनी के प्रकार (Types of Rating Scale)-निर्धारण मापनी का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया जाता है यहाँ पर गिलफोर्ड का वर्गीकरण जो अधिकांश लोगों द्वारा स्वीकृत किया जा रहा है ,जो इस प्रकार है |

- सांख्यिक मापनी (Numerical Scale)
- ग्राफ मापनी (Graphic Scale)
- स्तर मापनी (Standards Scale)
- संचित बिन्दु मापनी (Cumulative Point Scale)
- बाध्य विकल्प मापनी (Forced Choice Scale)

1. **सांख्यिक मापनी (Numerical Scale):-** इसके अन्तर्गत पूर्व विश्लेषित अंको की एक तालिका मापन करने वाले के समक्ष प्रस्तुत की जाती है | वह अपने निर्णयानुसार प्रत्येक वस्तु अथवा व्यक्ति को एक उचित अंक प्रदान करता हैं इसमे अंक 1से 11,1 से 7 अथवा 1 से 5 तक होते हैं जिसके दोनों अन्तिम अंक (पहला तथा आखिरी) अत्यंत एवं अनुकूल एवं अत्यंत प्रतिकूल को तथा बीच के अंक अनिश्चय को सूचित करते हैं |
2. **ग्राफ मापनी (Graphical Scale):-** इसमे बड़ी भिन्नता है तथा यह बहुत प्रचलित है | इसके अन्तर्गत किसी गुण से सम्बन्धित दोनों अति सूचक शब्द सातत्य के दोनों किनारों पर होते हैं| इसकी पंक्तियाँ खड़ी या पड़ी दोनों प्रकार की हो सकती हैं | इसमें निम्नलिखित बातें विचारणीय हैं –

    1. प्रत्येक गुण के लिए एक पृष्ठ हो |
    2. रेखा 5 इंच लम्बी हो |
    3. संकेत एक बिन्दु पर केन्द्रित हो |
    4. कम प्रयोग में आने वाले संकेतों से बचाना चाहिये |
    5. अंक देने के लिए स्टेन्सिल का प्रयोग करना चाहियें |

3. **संचित बिन्दु मापनी(Cumulative Point Scale) :**

    क. **चिन्हांकन –सूची विधि (Check list Method)-**इसके अन्तर्गत अनुकूल तथा प्रतिकूल गुणों की एक सूची प्रदान की जाती है | मापनकर्ता प्रत्येक प्रश्न की जाँच करता है ,जिसे वह मापन के लिए उचित समझता है | चिन्हांकन सूची -1 सत्य –असत्य | बहुत विकल्प प्रकार की तथा मापनी प्रकार की हो सकती है | यह विधि मापन करने तथा अंक देने में सरल होती है|

ख. बुझों कौन विधि (Guess who method)- इसे हार्टशार्न तथा मोके द्वारा बच्चों के लिए बनाया गया था किन्तु युवकों पर भी इसका प्रयोग कर सकते है | इसमें संक्षिप्त शाब्दिक चित्र निर्मित होते है | बच्चों से कहा जाता है कि वह अपने समूह के उन सभी बच्चों की सूची बनाए जो उस विवरण के अनुकूल हो श्रेणी प्रदान करने वालों को उनके समूह के सदस्यों के नाम की एक सूची कर दी जाती |चयन अथवा मूल से दोष आ जाता है |

4. **बाध्य विकल्प मापनी-** इसे हॉस्ट द्वारा स्तर मापनी के दोषों को दूर करने हेतु बनाया गया था | बेरी ने इसका उपयोग व्यक्तित्व तालिका के रूप में किया था |

निर्धारण मापनी का निर्माण (Rating Scale)-निर्धारण मापनी में 3 महत्वपूर्ण तत्व होते हैं-

1. **निर्णायक (Judge or Rater):-** एक की अपेक्षा लोगों द्वारा किया गया निर्णय सदैव उत्तम रहता है | गिलफोर्ड ने निर्णयको की 33 विशेषताएँ बतायी हैं जिनका प्रभाव निर्णय पर पड़ता है उनमें से कुछ प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार है–

   1 निर्णय क्षमता में लोगों में व्यक्तिगत भिन्नता होती है |
   2 एक ही परिस्थिति में विषयी को ना जानने के कारण उनमें भिन्नता हो सकती है |
   3 निर्णय पर सतत त्रुटियों का प्रभाव पड़ता है |
   4 निर्णय पर प्रेरणा तथा रूचि का प्रभाव भी पड़ता है |
   5 जो स्वंय के लिए निर्णय कर सकता है वह दूसरों का भी कर सकता है |
   6 प्रशिक्षण से निर्णायक अच्छा कार्य करते हैं |
   7 निकट संबंधोंके बारे में उच्च निर्णय दे दिया जाता है |
   8 माँ –बाप अपने बच्चों को उच्च निर्धारित करते हैं |
   9 निर्णय का उद्देश्य ज्ञात होना भी निर्णय को प्रभावित करता है |

2. विषयी – दूसरा महत्वपूर्ण भाग विषयी अथवा गुण है ,जिसके बारे में निर्धारण करना है जिस विषयी अथवा गुण का निर्धारण करना है उसे स्पष्ट रूप से परिभाषित होना चाहिए तथा उसके लिए वस्तुनिष्ठ संकेत मिलने चाहिए | गिलफोर्ड ने इसके लिए निम्न विशेषताओं का होना आवश्यक माना है-

1. इसका वस्तुनिष्ठ तथा विशिष्ट वर्णन हो |
2. -प्रत्येक गुण की अलग –अलग सत्ता हो |
3. उनका वर्गीकरण निर्धारण की शुद्धता एवं सहूलियत पर आधारित हो |
4. सामान्य पदों का प्रयोग न किया जाए |
5. विषय का निर्णय उसकी मूलभूत अथवा वर्तमान स्थिति से किया जाए |
6. जहाँ पर और भी वस्तुनिष्ठ उपकरण हो वहाँ निर्धारण मापनी का प्रयोग न किया जाए |

3. सातत्य – सातत्य का निर्धारण अत्यंत सावधानी से करना चाहिए तथा इसके लिए समुचित संकेत देने चाहिए | समुचित निर्णय देने के लिए इनका 5 से 7 श्रेणियों में विभाजन किया जा सकता है–

1. प्रतिभा सम्पन्न- बहुत अच्छा –सदैव |
2. सामान्य से ऊपर –अच्छा –बहुधा |
3. सामान्य –सामान्य कभी –सामान्य |
4. सामान्य से कम –सामान्य से कम –बहुत कम |
5. हीन- बुरा –कभी नहीं |

इसके अन्तर्गत गुण प्रगट करने वाले शब्दों को बाएं से दायें आरोही अथवा अवरोही क्रम में रख सकतें हैं | जो भी पद दिए जायें उनकी वस्तुनिष्ठ व्याख्या से निर्णय भी वस्तुनिष्ठ होगा |

निर्धारण मापनी के गुण (Merits of Rating Scale)-

1. इसमें छात्रों की आवश्यकताओं को जानने में सरलता रहती है |
2. यह छात्रों के सम्बन्ध में अन्य साधनों द्वारा प्राप्त ज्ञान की पूर्ति करती है |
3. इसके आधार पर अभिलेखों की रिपोर्ट देना सरल होता है |
4. छात्र प्रवेश में सहायता मिलती है |
5. नौकरी के लिए संस्तुति करना सरल होता है |
6. विषयी के लिए प्रेरणा का साधन होता है |
7. इसमे कम समय लगता है तथा प्रयोग आसान होता है |
8. शैक्षिक परखो ज्ञात करने में शिक्षक निर्धारण मापनी का प्रयोग किया जाता है |

निर्धारण मापनी के दोष (Demerits of Rating Scale)-

1. उदाहरण सम्बन्धी त्रुटियाँ |
2. पूर्व प्रभाव सम्बन्धी त्रुटि |
3. केन्द्रीय प्रवृत्ति सम्बन्धी त्रुटि |
4. तार्किक त्रुटि |

अभ्यास प्रश्न

1 निर्धारण से आप क्या समझते हैं ?

2 निर्धारण मापनी के गुणों का उल्लेख करें |

3 निर्धारण मापनी के दोषों का उल्लेख करें |

18.5 अवलोकन (Observation)

अवलोकन (Observation)- हम सदैव अपने चारों ओर होने वाली क्रियाओं एवं घटनाओं का अवलोकन करते रहतें हैं | प्रातः सो कर उठने से लेकर रात्रि के सोने तक प्रकृति जगत की छटा से लेकर भौतिक जगत के सभी क्रिया कलापों का अवलोकन करते हैं | यह संसार के बारे में सुचनायें प्राप्त का मूल साधन है | यह हमारे दैनिक जीवन की एक महत्वपूर्ण क्रिया ही नहीं है, बल्कि वैज्ञानिक जानकारी का एक प्रमुख साधन भी है | यह एक वैज्ञानिक विधि बन जाती है ,यदि –

1. यदि अनुसंधान की समस्या के निर्धारण में सहायक होते हैं |
2. इसका नियोजन व्यवस्थित हो |
3. यह वैधता एवं विश्वसनीयता की जाँच का साधन हो |
4. वास्तव में अनुसंधान में एक उपकरण के रूप में इसका सम्बन्ध व्यक्ति के ब्राह्य व्यवहार से है |इसका सम्बन्ध न तो लिखित अभिव्यक्ति से ,न साक्षात्कार में उसके द्वारा दिए गए उत्तर से ,अपितु स्वाभाविक परिस्थिति में उसके निरीक्षण से है |

गुड तथा हैट (Good & Hatt) के अनुसार –'विज्ञान का प्रारम्भ अवलोकन से होता है |तथा इसकी पुष्टि के लिए अवलोकन में ही लौटना पड़ता है |

अवलोकन की कुछ विशेषताएं इस प्रकार है–

1. कुशलता से किया गया अवलोकन |
2. उद्देश्य पूर्ण अवलोकन |
3. व्यवस्थित अवलोकन |
4. सावधानी से किया गया अवलोकन |
5. सावधानी से किया गया शुद्ध ,वैध तथा विश्वसनीय अवलोकन |

उपर्युक्त विशेषतायें होने पर ही अवलोकन वैज्ञानिक अनुसंधान का आधार बनता है |

विशेषताएं (Characteristics)-

1. यह वर्णनात्मक अनुसंधान का प्रमुख साधन है |
2. व्यक्तित्व के विशेष गुणों की अच्छाई के साथ इस प्रत्यक्ष प्रणाली के द्वारा जाना जा सकता है अन्य से नहीं |
3. पाठ्यक्रम सहभागी क्रियाओं के निरीक्षण के द्वारा अनेक तथ्य प्राप्त किए जा सकते है |
4. कक्षा में छात्रों के व्यवहार समूह में उनकी स्थिति तथा उत्तेजना की प्रतिक्रिया को स्वाभाविक रूप में जान सकतें है |
5. अन्य भाषा – भाषी तथा जो लिख –पढ़ और बोल सकतें उन व्यक्तियों के अध्ययन का प्रमुख साधन है |

अवलोकन आँकड़ों का लेखन (Writing of Observed Data)- अवलोकित सामग्री के व्यवस्थित लेखन के लिए निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग करते हैं -

अवलोकित सामग्री के व्यवस्थित लेखन के लिए निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग करते हैं –

1. चिन्हांकन सूची
2. निर्धारण मापनी
3. रिक्त स्थान पूर्ति –पत्र
4. प्राप्तांक कार्ड

अनुसंधानकर्ता समस्या के स्वरूप तथा उद्देश्य के अनुसार इनमें से किसी का उपयोग कर सकता है |

अवलोकन के आवश्यक तत्व (Important Elements of Observation)- अच्छे अवलोकन के ४ महत्वपूर्ण तत्व हैं –

1. **समुचित नियोजन (Proper Planning)-** समुचित नियोजन (Proper Planning) की मूलभूत आवश्यकताएं निम्नांकित हैं :-
   (a) अवलोकन सम्बन्धी व्यवहार का विश्लेषण (कौन सा व्यवहार ?)
   (b) न्यादर्श का निर्धारण (किनका अवलोकन ?)
   (c) अवलोकन क्षेत्र (व्यक्ति का अथवा समूह का ?)
   (d) अवलोकन के लिए समय का निश्चय
   (e) अवलोकन के लिए उपकरणों का निश्चय |
   (f) विशेष परिथितियों का निश्चय जिनकी व्यवस्था करनी है |
   (g) अवलोकन के लिए आवश्यक प्रशिक्षण की व्यवस्था |

2. इसके लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान देना आवश्यक है |
   (a) समुचित परिस्थितियों का निर्माण |
   (b) विशेष क्रिया के विशेष पक्ष पर ध्यान का केन्द्रीयकरण |
   (c) प्रत्येक निरीक्षण तथा अनेक बार निरीक्षण |
   (d) लेखन उपकरण का उचित उपयोग |
   (e) बाधारहित वातावरण में सजग अवलोकन उत्तम रहेगा |

3. समुचित लेखन (Proper Writing)- यह अवलोकन के साथ –साथ भी हो सकता है तथा बाद में भी | साथ –साथ अवलोकन करना अच्छा रहता है | क्योंकि बाद में अनेक बातें भूल जाती हैं| इसलिए अवलोकन के साथ-साथ समुचित लेखन भी किया जाना चाहिए |

4. वैज्ञानिक विश्लेषण (Scientific Analysis)-अवलोकित सामग्री का सारणीकरण व्यवस्थापन तथा विश्लेषण वैज्ञानिक रूप में करके ही उचित फल प्राप्त कर सकतें है |

अवलोकन के प्रकार (Types of Observation)- अवलोकन दो प्रकार के होते है :

1. प्रत्यक्ष अवलोकन (Direct Observation)-यह दों प्रकार का होता है –

(a). सहभागिक अवलोकन (b). असहभागिक अवलोकन

(a). सहभागिक अवलोकन (Cooperation observation)-विस्तृत सूचनाओं की प्राप्ति इस विधि से सम्भव है | इससे सामुदायिक व्यवहार का प्रत्यक्ष एवं स्वभाविक ज्ञान होता है तथा यह विधि अल्प व्यय से बाध्य है |इसके द्वारा उन गहन सूचनाओं को भी प्राप्त किया जा सकता है, जो अन्य विधि से सम्भव नहीं है |

(b). असहभागिक अवलोकन(Non Cooperation observation)- इसमें अवलोकनकर्त्ता अध्ययन किए जाने वाले समूह के मध्य केवल उपस्थित रहता है किन्तु समुदाय के क्रिया कलाप में भाग नहीं लेता है | इसका प्रयोग बच्चों शिशुओं तथा असामान्य व्यक्तियों के अध्ययन में किया जाता है | अवलोकन कर्त्ता ऐसे स्थान के निरीक्षण करता है जिससे समूह प्रभावित ना हो सके |

अवलोकनकर्त्ता का वर्गीकरण I-नियमित तथा अनियमित अवलोकन के रूप में भी करते हैं | परिस्थितियों का निर्माण कर वस्तुनिष्ठ वैज्ञानिक उपकरण कि सहायता से अवलोकन एवं लेखन करते जाते है |

अभ्यास प्रश्न

1 अवलोकन से आप क्या समझते हैं ?

2 अवलोकन की किन्हीं तीन विशेषताओं को लिखिए |

3 अवलोकन के आवश्यक तत्वों (Important Elements of Observation) का उल्लेख करें |

4 सहभागिक अवलोकन का अर्थ स्पष्ट करें |

5 असहभागिक अवलोकन से आप क्या समझते हैं ?

18.6 साक्षात्कार (Interview)

साक्षात्कार शैक्षिक अथवा मनोवैज्ञानिक स्तर पर सम्पन्न की गई वह प्रक्रिया है ,जिसमें दो अपरिचित एक दोसरें के सम्पर्क में आते हैं | **गुड तथा हैट** ने इसे स्पष्ट करते हुए लिखा है कि विश्वसनीयता तथा विस्तार को तब तक नहीं पाया जा सकता है जब तक कि यह मष्तिष्क में स्पष्ट नहीं है | साक्षात्कार आँकड़े प्राप्त करने का एक प्रमुख पूर्ण उपकरण है ,जो अन्य उपकरणों का पूरक है |

जॉन डब्ल्यू बेस्ट के अनुसार –"साक्षात्कार एक प्रकार से एक मौखिक प्रकार की प्रश्नावली है|इसके अन्तर्गत उत्तर लिखने के बजाय आमने –सामने की स्थिति में विषयी मौखिक उत्तर देता है |"

साक्षात्कार की श्रेष्ठता के कारण (Reasons of Superiority of Interview)-

1. लोग लिखने की अपेक्षा बात करना अधिक पसंद करते है |
2. साक्षात्कार में मित्रवत व्यवहार कर गोपनीय सूचना भी प्राप्त की जा सकती है |
3. यदि विषयी ने किसी प्रकार का गलत अर्थ लगा लिया है तो साक्षात्कारकर्ता पूरक प्रश्न द्वारा स्पष्टीकरण कर सकता है |
4. साक्षात्कार के द्वारा बच्चों ,अशिक्षितों ,भाषा की कम क्षमता रखने वाले तथा कम बुद्धि वालों से भी सूचना प्राप्त कर सकते हैं |
5. साक्षात्कार से प्राप्त सूचना विश्वसनीय ,वैध ,वस्तुनिष्ठ तथा अनुसंधान के लिए उपयोगी है |

साक्षात्कार की सीमाएं (Limitations of Interview)- साक्षात्कार की निम्नलिखित सीमाएं है–

1. साक्षात्कार में अनुसंधानकर्त्ता को विषयी की मौखिक रिपोर्ट पर बहुत अधिक आश्रित रहना पड़ता है |
2. बोलने में कठिनाई आदि होने पर सूचनायें प्राप्त करने में कठिनाई हो सकती है |
3. विषयी जानबूझ कर कुछ सूचनाएं छिपा सकता है |
4. विषयी के पक्षपात पूर्ण विचार से भी सही सूचना नहीं मिलेगी |
5. साक्षात्कार में विषयी की स्मरण शक्ति पर निर्भर रहना पड़ता है |वह तुरन्त स्मरण करने में असमर्थ हो सकता है |
6. साक्षात्कारकर्ता का व्यवहार उसकी अभिवृत्ति तथा उपस्थिति भी उत्तर देने में बाधा डालती है |

साक्षात्कार के प्रकार (Types of Interview)-साक्षात्कार अनेक प्रकार का हो सकता है |इसका वर्गीकरण निम्नलिखित है :-

1. **उपयोगानुसार(According to funtions)-**इसके तीन भाग है –

   (a)- निदानात्मक (Diagonostic)

   (b)-उपचारात्मक (Treatment)

   (c)- अनुसंधानात्मक (Research)
2. **भाग लेने वाले के अनुसार (According to participant)**-इसको दो भागों में विभक्त कर सकते हैं –

   (a)- व्यक्तिगत (Individual)

   (b)- सामूहिक (Group)
3. **सम्पर्क की अवधि के अनुसार (According to length of contact)-**इसको दो भागों में विभक्त कर सकते हैं –

   (a) अल्पकालीन सम्पर्क (Short Contact)

   (b) दीर्घकालीन सम्पर्क (Plonlonged Contact)
4. **साक्षात्कारकर्ता और विषयी के सम्बन्ध तथा अन्तः क्रिया के अनुसार :** इसको निम्न बिंदुओं में स्पष्ट कर सकते हैं : -

   (a) अनिर्देशित साक्षात्कार (Non Directional Interview)- इसमें प्राय: प्रत्यक्ष एवं पूर्ण निर्धारित प्रश्नों का उपयोग नहीं किया जाता है | सामान्य वार्तालाप के माध्यम से सूचनादाता को अपनी सूक्ष्म अनुमति को प्रकट करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है |

   (b) केंद्रित साक्षात्कार (Centralized Interview)- इसको गहन साक्षात्कार भी कहते हैं | इसका प्रधान उद्देश्य परिकल्पना के उस औचित्य का परीक्षण करना होता है जिसका प्रतिस्थापन मानव व्यवहार की पूर्ण विश्लेषित व्यवस्था के आधार पर हुआ हो| इसके अन्तर्गत प्रेरणा के स्त्रोत तथा अन्य गहन बातों पर ध्यान केन्द्रित होता है |

(c) पुनरावृत्ति साक्षात्कार (Recapulatory Interview)- इसका प्रयोग उन प्रगतिशील कार्य तथा दृष्टिकोणों के अध्ययन हेतु किया जाता है जो किसी मनुष्य के किसी व्यवहार विशेष को निर्धारित करता है | इसकी सहायता से प्रगतिशील क्रियाओं तथा घटनाओं का अध्ययन सरलता से किया जाता है तथा विश्वसनीयता निश्चित किया जाता है |

साक्षात्कार के विभिन्न स्तर पर महत्वपूर्ण बातें (Important things of different levels of Interview)-

1. **साक्षात्कार के पूर्व तैयारी (Preparation Before Interview)-** साक्षात्कार से पूर्व साक्षात्कार का क्षेत्र , उद्देश्य का निर्धारण सूचनाएं जो प्राप्त करनी है ,साक्षात्कार का प्रकार तथा साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं की लेखन विधि आदि को पूर्व में ही निश्चित कर लेना चाहिए |
2. **अनुकूल तथा उपयुक्त स्थान**– साक्षात्कार के लिए उपयुक्त स्थान (Proper Place) एवं अनुकूल अवसर का सटीक चुनाव साक्षात्कार की सफलता की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक होता है |
3. **पारस्परिक परिचय (Mutual Introduction)-**साक्षात्कार के लिए आने के बाद सबसे सुदृढ़ कार्य आत्मीय सम्बन्ध स्थापित करने के लिए पारस्परिक परिचय कर लेना चाहिए |
4. **साक्षात्कार का संचालन (Conduction of Interview)-**सारी व्यवस्था हो जाने पर आत्मीय सम्बन्ध हो जाने के बाद साक्षात्कार प्रारम्भ होगा |साक्षात्कार के लिए प्रश्न करने में निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक हैं-
   1. प्रश्नक्रम वृहद न हों |
   2. प्रश्न सरल तथा स्पष्ट हों |
   3. भावात्मक प्रश्नों से बचाना चाहिए |
   4. यदि उत्तरदाता मूल विषय से हटकर साक्षात्कारकर्ता को दूर ले जाए तो ऐसी स्थिति में उसे सावधान रहकर उद्देश्य पर ही ध्यान केन्द्रित करना होगा |
   5. **उत्तर लेखन तथा विश्लेषण (Answer Writing and Analysis)-**उत्तर लेखन भी सबसे महवपूर्ण विधि टेपरिकॉर्डर में संपूर्ण वार्तालाप को रिकार्ड कर लेना है किन्तु यदि टेपरिकार्डर उपलब्ध ना हो तो इसे दो प्रकार से लिख देते हैं |

      (a)-साक्षात्कार के साथ लिखते जाए |

      (b)-साक्षात्कार की समाप्ति के बाद लिख लें |

साक्षात्कार की समाप्ति (End of Interview)- अन्त में धन्यवाद के दो शब्दों के साथ प्रसन्नतापूर्ण वातावरण में साक्षात्कार समाप्त कर देना चाहिए |

अभ्यास प्रश्न

1 साक्षात्कार से आप क्या समझते हैं ?

2 साक्षात्कार के प्रकार (Types of Interview) के बारे में विस्तार से चर्चा कीजिये |

3 साक्षात्कार की श्रेष्ठता के कारणों को स्पष्ट करें ?

4 साक्षात्कार के विभिन्न स्तर पर कौन सी महत्वपूर्ण बातें ध्यान में रखनी चाहिए ?

18.7 समाजमिति (Sociometry)

समाजमितीय विधि (Sociometric Method):- समाजमितीय विधि (Sociometric technique) एक तरह की नामजदगी विधि (nominating technique) है | इस विधि का विकास जे० एल० मोरेनों ने 1934 में सामूहिक मनोबल के मापन के लिए किया | सामाजिक अनुसन्धानों में अक्सर इस विधि इस विधि का उपयोग सामूहिक संगठन ,समूह संरचना, सामाजिक स्थिति , सामाजिक अंतःक्रियाओं, आकर्षण-विकर्षण पसंदगी –नापसंदगी के अध्ययन हेतु किया जाता हैं| इस विधि में एक समूह के सदस्यों से गोपनीय ढंग से पूछा जाता है कि वे समूह के किन सदस्यों के साथ किसी विशिष्ट क्रिया को करना पसंद करेंगे या नापसंद करेंगे |किनका व्यक्तित्व आपको आकर्षित करता है या अपने समूह के किस सदस्य के प्रति विकर्षण की प्रतिक्रिया करते हैं |इस प्रकार समाजमिति केवल समूह सदस्यों में विद्यमान पसंदगी –नापसंदगी या आकर्षण –विकर्षण के मूल्यांकन का माप है |

जेनिंग्स ने समाजमिति को परिभाषित करते हुए कहा है कि "-समाजमिति को एक ऐसा यंत्र माना जा सकता है जिसके माध्यम से एक विशेष समाज, एक विशेष समूह में प्रचलित सम्पूर्ण संरचना को स्पष्ट रूप से तथा आलेखीय आधार पर प्रस्तुत किया जा सकता है |"

करलिंगर के अनुसार –" समाजमिति एक विस्तृत पद है जिससे अनेक विधियों का संकेत मिलता है| इन विधियों के द्वारा व्यक्तियों का चयन , सम्प्रेषण और अन्तः क्रिया प्रतिमानों से सम्बन्धित आकड़ों का संकलन और विश्लेषण किया जाता है |"

अतः वैयक्तिक सम्बन्धों को ज्ञात करने के लिए समाजमितीय को परिष्कृत किया जाता है |इस विधि में सर्वप्रथम समाजमितीक मापदंड का कथन निश्चित सांकृत्यों के रूप किया जाता है |

मान लीजिए कि किसी समूह में अंतःव्यक्तिक आकषर्ण का अध्ययन करना है | समूह के प्रत्येक सदस्य से यह पूछा जायेगा कि वह किसी व्यक्ति विशेष को किसी विशेष क्षेत्र में पसंद करता है या नापसंद करता है | चूँकि इस प्रकार का प्रश्न पूछना बहुत उचित नहीं होता है इस लिए इतना ही पूछा जाता है कि आप अमुक कार्य के लिए किस व्यक्ति को अधिक पसंद करेंगे | समूह के सदस्यों से प्राप्त स्वीकृति या अस्वीकृति के आधार पर समाजमिति प्रदत्तों की व्याख्या की जा सकती है इन प्रदत्तों के

आधार पर समाज आलेख की भी रचना की जा सकती है | वैसे समाजमिति विधि द्वारा प्राप्त आकड़ों का निरूपण कई विधियों द्वारा किया जा सकता है |

समाजमितिय विश्लेषण की विधियाँ(Methods of Sociometric Analysis)-

समाजमितिय विश्लेषण की प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं –

1. आलेखीय विश्लेषण
2. समाज आलेख
3. समाज मितीय मैट्रिसेज
4. समाजमिति सूचनाएँ

समाज आलेख

समाजमितीय विश्लेषण की उपयुक्त विधियों में से समाजमिति विधि द्वारा प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण करने हेतु प्रमुख रूप से समाज आलेख प्रविधि का उपयोग किया जाता है | इस विधि में समूह के प्रत्येक सदस्य से यह प्रश्न पूछा जाता है कि आपके समूह का नेता कौन है या आप सबसे अधिक किसे पसंद या नापसंद करते हैं या किसका व्यक्तित्व आपको आकर्षित या विकर्षित करता है | प्राप्त पसंद – नापसंद, स्वीकृति-अस्वीकृति , आकर्षण या विकर्षण के आधार पर रेखा चित्र बनाया जाता है |

अभ्यास प्रश्न

1 समाजमिति विधि से आप क्या समझते हैं ?

2 समाजमितिय विश्लेषण की विधियाँ(Methods of Sociometric Analysis) बताए |

3 समाज आलेख से आप क्या समझते हैं ?

18.8 सारांश

वर्तमान युग में मनोविज्ञान तथा शिक्षा की प्रगति को भी मापन ने बहुत हद तक प्रभावित किया है | मनोविज्ञान तथा शिक्षा के अंतर्गत मानव के विभिन्न व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है | इस कार्य के लिए मानव व्यवहार का मापन करना अत्यंत आवश्यक हो जाता है | मापन के लिए विभिन्न प्रकार के उपकरणों की सहायता ली जाते है | इस इकाई में परीक्षण सूची (Check List), निर्धारण मापनी (Rating Scale),अवलोकन (Observation), साक्षात्कार (Interview), समाजमीति (Sociometry) उपकरणों पर इस इकाई में विस्तार से चर्चा के गयी है |

18.9 शब्दावली

- **परीक्षण सूची (Check List)**: ऐसी सरल युक्ति (Simple method)है जिसमें अध्ययन के अन्तर्गत समस्या के सम्बन्ध में शोध द्वारा आवश्यक समझे जाने वाले मदों की सूची बनाई जाती है |
- **निर्धारण मापनी (Rating Scale) :** किसी व्यक्ति के गुणों अथवा वस्तु के सीमित पक्षों का गुणात्मक विवरण प्रस्तुत करती है |
- **अवलोकन (Observation)-** हम सदैव अपने चारों ओर होने वाली क्रियाओं एवं घटनाओं का अवलोकन करते रहते हैं | प्रातः सो कर उठने से लेकर रात्रि के सोने तक प्रकृति की छटा से लेकर भौतिक जगत के सभी क्रिया कलापों का अवलोकन करते हैं |
- **साक्षात्कार:** साक्षात्कार शैक्षिक अथवा मनोवैज्ञानिक स्तर पर सम्पन्न की गई वह प्रक्रिया है ,जिसमें दो अपरिचित एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं |
- **समाजमिति:** यह एक विस्तृत पद है जिससे अनेक विधियों का संकेत मिलता है | इन विधियों के द्वारा व्यक्तियों का चयन , सम्प्रेषण और अन्तः क्रिया प्रतिमानों से सम्बन्धित आकड़ों का संकलन और विश्लेषण किया जाता है |

18.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. आकंडा संग्रहण की तकनीक का विस्तार से विवेचना करें |
2. समाजमितीय विश्लेषण की विधियाँ(Methods of Sociometric Analysis) बताएं |
3. साक्षात्कार के प्रकार (Types of Interview) के बारे में विस्तार से चर्चा कीजिये |
4. परीक्षण सूची में मदों को लिखने व व्यवस्थित करने की रीतियों का विस्तार से उल्लेख करें |
5. निर्धारण मापनी के गुणों एवं दोषों का विस्तार से उल्लेख करें |

18.11 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची

- Best, John W. , Kahn J James Research In Education, Allyn & Bacon; 9th Edition.
- Kerlinger, F.N. (1986) Foundation of Behavioral Research Holt, Rinehart and Winston, Inc., American Problem Series, New York, NY

- सिंह, अरूण कुमार, (2001) शिक्षा मनोविज्ञान, पटना, भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, वाराणसी, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) उच्चतर मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- Wiersma, W.,& Jurs, S.G.(2009) Research Methods in Education: An Introduction. New Delhi: Pearson Publication.

इकाई - 19

शोध प्रस्ताव तैयार करना

Preparation of a Research Proposal

इकाई की रूपरेखा

19.1 प्रस्तावना

19.2 उद्देश्य

19.3 प्रस्तावना : शोध प्रस्ताव

19.4 सारांश

19.5 शब्दावली

19.6 निबंधात्मक प्रश्न

19.7 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची

19.1 प्रस्तावना (Introduction)

शोध प्रस्ताव का निर्माण करना वास्तव में एक कठिन कार्य माना जाता है | सामान्यतः शोध प्रस्ताव से तात्पर्य एक ऐसे प्रस्ताव से होता है जिसमें शोधकर्ता किसी समस्या समाधान के लिए विशेष कार्यविधि, सम्भावित समय एवं संभावित धन व्यय आदि का उल्लेख करता है | बहुत सारे संस्थान यह चाहते हैं कि शोध कार्य प्रारम्भ करने के पहले शोधकर्ता एक शोध प्रस्ताव दे ताकि प्रोजेक्ट का मूल्यांकन किया जा सके और उसकी अंतिम मंजूरी दी जा सके | चूँकि विभिन्न संस्थाओं द्वारा सामान्यतः अलग- अलग ढंग से शोध प्रस्ताव मांगे जाते हैं, अतः शोध प्रस्ताव का कोई सार्वत्रिक रूपरेखा (Universal Outline) तो नहीं है परन्तु कोई भी शोध प्रस्ताव में कुछ विशेष चरणों का उल्लेख अवश्य ही होना चाहिए | प्रस्तुत इकाई में हम शोध प्रस्ताव के निर्माण के बारे में एवं उसकी आवश्यकता आदि के बारे में अध्ययन करेंगे |

19.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- शोध प्रस्ताव के बारे में जान सकेंगे |
- शोध प्रस्ताव तैयार करने में कौन –कौन सी सावधानियां बरतनी चाहिए इसको समझ सकेंगे |
- शोध प्रस्ताव तैयार करने के विभिन्न चरणों को समझ सकेंगे |

19.3 प्रस्तावना : शोध प्रस्ताव (Introduction : Research Proposal)

प्रस्तावना के इस भाग में निम्लिखित सूचना होनी चाहिए :

1 - शीर्षक (Title):- अनुसंधान प्रस्तावना के शीर्षक में केवल विषय का नाम होना चाहिए और कुछ नहीं | उसमें ऐसे शब्द होने चाहिए जो अध्ययन के प्रकरण को दर्शाये | शीर्षक के चयन में अनुसंधान कर्ता को दो बातों का ध्यान रखना चाहिए |

A :- शीर्षक में आडम्बरी शब्द नहीं होने चाहिए और उसमे अवैज्ञानिक , अलंकार , तार्किक , भावुक या पक्षपातपूर्ण शब्दावली नहीं मिली होनी चाहिए | शीर्षक में भाषा व्यवसायिक होनी चाहिए किन्तु पांडित्य बोधक नहीं |

B :- शीर्षक ना तो बहुत लंबा होना चाहिए और ना ही लिपटा हुआ | वह अध्ययन के क्षेत्र से विशिष्ट रूप से जुड़ा हो |किसी अध्ययन के लिए पर्याप्त शीर्षक वह है जो उचित नियंत्रण व वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण दर्शाये | यह भी ध्यान रहे कि प्रस्तावित अध्ययन पूर्ण रूप से शीर्षक में नहीं समा सकता , परन्तु उसमें शब्दों को ऐसे रखा जाये कि अध्ययन की प्रकृति की काफी सूचना मिल जाये |

2- समस्या का प्रकथन (Statement of the problem) :-समस्या का प्रकथन बिल्कुल वही होना चाहिए जो अध्ययन का शीर्षक |परिचयात्मक अध्याय में उसका निश्चित स्थान है और स्पष्ट लक्ष्य को दर्शाना उसका प्रयास है | समस्या का प्रकथन मुख्यतः शीर्षक का विस्तार होना चाहिए | उसे या तो प्रश्न रूप में या घोषणात्मक रूप में होना चाहिए |प्रधान प्रश्न या प्रकथन के बाद अनेक छोटे प्रश्न या प्रकथन व व्याख्या होनी चाहिए | शोध की समस्या का उल्लेख घोषणात्मक कथन के रूप में होना चाहिए , परन्तु उसे प्रश्नवाचक कथन में भी अभ्व्यक्त किया जा सकता है | सामन्यतः शोध कर्ता शोध की समस्या का उल्लेख इस तरीके से करता है कि उससे शोध के विशिष्ट लक्ष्य का स्पष्ट रूप से अनुमान लगाया जा सके | शोध प्रस्ताव में शोधकर्ता ण केवल शोध समस्या का ही उल्लेख नहीं करता है बल्कि उसके महत्व पर भी बल डालता है | दूसरे शब्दों में वह यह भी बतलाने की कोशिश करता है कि इस समस्या का समाधान किस तरह से मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों को प्रभावित करेगा और उसका विशेष लाभ मनोवैज्ञानिकों को होगा |

3- सम्बंधित साहित्य कि समीक्षा (Review of Related Literature):- सैद्धांतिक व आनुभविक आधार का, जिससे समस्या उत्पन्न हुई , संक्षिप्त विवरण होना चाहिए | इस कार्य के लिए दोनों वैचारिक व अनुसंधान साहित्य की समीक्षा होनी चाहिए, अनुसंधान को यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि विद्यमान साहित्य में उसकी समस्या की जड़े हैं , बस उन पर और अनुसंधान करने व पता लगाने की आवश्यकता है | ग्रंथो , पत्रिकाओ , सारांशो व रिपोर्टो में मिले सम्बंधित अध्ययनों का संक्षिप्त वर्णन भी किया जाना चाहिए | इससे यह साक्ष्य प्रस्तुत होता है कि अनुसन्धायक अब तक ज्ञात बातों का पता लगा पाता है और वह यह भी जानता है कि अब तक क्या अज्ञात व असिद्ध है | पूर्व में किये गए अनुसंधान के विश्लेषण से पहले से ही किये जा चुके कार्य के दोहराने का जोखिम नहीं रहता है और इससे परिकल्पना के संरूपण का आधार मिलता है | इसलिए शोधकर्ता वैसे सभी अध्ययन जो संगत होते है तथा जिन्हें स्पष्ट एवं विस्तृत ढंग से उल्लेख किया जा चुका है , को प्रस्ताव में सम्मिलित करता है | इस तरह की समीक्षा के निम्नांकित लाभ होते हैं

अ. समीक्षा से पहले किए गये अध्ययनों की पुनरावृति होने की संभावना नहीं होती है

आ. समीक्षा से उत्तम परिकल्पना बनाने तथा उत्तम अनुसंधान के लिए महत्वपूर्ण सुझाव प्राप्त होते हैं |

इ. समीक्षा से शोध कर्ता को यह भी पता चल जाता है कि अब तक क्या अज्ञात रहा है और किसे अब तक जांचा नहीं गया है |

4- परिकल्पनाएँ (Hypothesis):-वह प्रश्न जिनके उत्तर पाने के लिए अनुसंधान किया जाता है , परिकल्पना के रूप में बनाए जाते हैं और उनका साक्ष्य के आधार पर परीक्षण किया जाता है | इस कदम से समस्या व अनुसंधान अध्ययन के अधःशायी तर्क की स्थापना हो जाती है | इससे आंकड़े संग्रहण को दिशा मिलती है | परिकल्पनाओं के प्रकाश में ही आंकड़े संग्रहण की प्रासंगिकता जाँची जाती है | अध्ययन की समस्या के निगमानिक तर्क व सम्बंधित साहित्य से आतंरिक सम्बन्ध ही अनुसंधान परिकल्पना के संरूपण में निर्णायक होते है | हालांकि शोध परिकल्पना शोध समस्या या प्रश्न का एक अस्थायी उत्तर होता है , यह एक ऐसा अनुमान होता है जो गत शोध या सिद्धांत पर आधारित होता है | आंकड़े एकत्रित कर लेने से पहले परिकल्पना का निम्न प्रकार से होना आवश्यक होता है |

परिकल्पना को उत्तम बनाने के लिए अन्य बातों के अलावा निम्नांकित चार विशेषताओं का होना आवश्यक है |

1. इसे विवेकी होना चाहिए |
2. इसे ज्ञात तथ्यों एवं सिद्धांतों के अनुकूल होना चाहिए |
3. इसका स्वरुप जाचने योग्य होना चाहिए |
4. इसे संभावित सरल शब्दों में लिखना चाहिए |

5- अध्ययन की सार्थकता (Significance of the study) :-अनुसंधान प्रस्तावना में अध्ययन के गुण व उसकी तुरंत आवश्कता को प्रकट करना चाहिए | उसे यह स्पष्ट करना चाहिए कि अनुसंधान के परिणाम शिक्षा के सिद्धांत या पद्धत्ति को किस प्रकार से प्रभावित करेंगे | अनुसंधान अध्ययन पर कार्य करने की आवश्यकता को कई प्रकार से दिखाया जा सकता है | अनुसंधान अध्ययन की आवश्कता दिखाने का एक तरीका यह भी है कि पिछले किये गए अध्ययन और अब के अध्ययन के बीच अंतराल दिखाया जाये जिससे नया ज्ञान , तकनीकी या स्थितिय अध्ययन में संशोधन कि आवश्कता का आभास कराये | इसका दूसरा तरीका यह है कि यह दिखाया जाये कि पिछले अध्ययन द्वारा प्रदान कियें गए ज्ञान में कमियाँ है और यह नया अध्ययन किस प्रकार इन कमियों को पूरा करके विद्यामान ज्ञान में वृद्धि करेगा | तीसरा तरीका यह है कि किसी समस्या में सम्बंधित सूचना का अभाव दिखाया जाये और उसके समर्थन में अन्य, अनुसंधान अध्ययनों से प्रकथन प्रस्तुत किये जाए | अध्ययन की आवश्कता को न्यायसंगत बताने का अंतिम तरीका यह है कि वर्तमान सामाजिक प्रश्नों को राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा विकास के सन्दर्भ में प्राथमिकता के क्षेत्रो से जोड़े |

6- पदों व संकल्पनाओ की परिभाषा (Definition of terms and Concepts) :-सभी असामान्य पदों व संकल्पनाओ की परिभाषा देना अत्यंत आवश्यक है, जिससे उनकी गलत व्याख्या ना हो सके | विशेष अर्थ वाले तकनीकी पदों की संक्रियात्मक परिभाषा देना आवश्यक है| कुछ

संकल्पनाओ व पदों के लिए सर्वमान्य परिभाषा या माप की विधाएं देखने को नहीं मिलती जैसे बुद्धि , अभिप्रेरणा , उपलब्धि आदि | ऐसी स्थितियों में अनुसंधान इस बात के लिए बाध्य हो जाता है कि इन संकल्पनाओ या शब्दावलीयों की संक्रियात्मक परिभाषा देते हुऐ यह भी बताए कि चारो को कैसे मापा जायेगा और व्याख्या की जायेगी | ऐसे तकनिकी शब्दों की परिभाषा के लिए 'दि डिक्शनरी आफ एजुकेशन ',कार्टन वी. गुड , कम्प्रेहंसिव डिक्शनरी आफ एजुकेशन आफ सायकलोजिकल एंड साइको एननैलिटीक टर्म्स संपादक , होटेस बी . इग्लिश व इवा सी . इग्लिश , तथा दि डिक्शनरी आफ सोशोलोजी ,संपादक एच. पी. फेयरचाइल्ड , मूल्यवान स्रोत हैं |

7- अध्ययन की सीमाओं का परिसीमन (Delimitation of the study) :-अध्ययन की सीमाएं इन संदर्भो में स्पष्ट कर देनी चाहिए : (अ) अध्ययन का परिक्षेत्र :- उन क्षेत्रों को विनिर्दिष्ट करते हुए जहाँ तक परिणामों को सीमित रखना है | (ब):- प्रक्रियात्मक उपचार :- जिसमें प्रतिचयन विधि , आकंडे संग्रहण व विश्लेषण कि तकनीकी मापन यंत्रो का विकास व अध्ययन में प्रयोग सम्मिलित हो |

8- आधारभूत कल्पनायें (Basic Assumption) :-कल्पनायें उन विचारों का वर्णन है जिन्हें सत्य माना जाता है | यह नींव होती है जिस पर अनुसंधान अध्ययन आधारित है | टर्नी व रोब्ब (1971 पी . 29) के अनुसार :

"अनुसंधान कर्ता व अन्य जिसे सिद्धांत रूप में सत्य माना जाता है , उसे अध्ययन द्वारा प्रकट करने हेतु लिखा जाता है ; इनके लिखने से उन कारणों का उल्लेख भी हो जाता है जो अध्ययन पर प्रभाव डालते हैं और परिवर्तनीय नहीं हैं "

अनुसंधान का प्रस्ताव लिखते समय अपनी प्रारंभिक कल्पनाओं को बड़ी सावधानी पूर्वक चुनना चाहिए और सामान्यतः होने वाली गलतियों से सचेत रहना चाहिए | टर्नी व रोब्ब (1971) ने ऐसी गलतियों को निम्नानुसार प्रस्तुत किया है :

1- सब से पहले गलती , अध्ययन में आवश्यक सभी प्रारम्भिक कल्पनाओं का उल्लेख न करना है| ऐसी स्थिति अधिकतर प्रश्नावली अध्ययन में होती है जिसमें कल्पनाओं को अध्ययन कि प्रारम्भिक कल्पना न मानकर सत्य रूप में स्वीकार कर लिया जाता है

2- दूसरी गलती अप्रासंगिक कल्पनाओं की होती है | ऐसी कल्पनाये ना तो अनुप्रयोज्य होती है और ना अध्ययन के लिए आवश्यक |

3- तीसरी गलती बिना सत्य पर आधारित साक्ष्य (वस्तुनिष्ठ आंकड़े) या प्राधिकारी स्त्रोतों द्वारा नहीं कहे जा सकते हैं |

आँकड़े संग्रहण की प्रक्रियाएं (Procedures for collecting data)

इस भाग में प्रतिचयन प्रक्रिया व आँकड़े संग्रहण औजारों के विस्तृत वर्णन दिए गए हैं | यह ध्यान रहे कि ऐतिहासिक व दार्शनिक अनुसंधानों में आँकड़े की प्रकृति व उपचार अन्य अनुसंधानों से भिन्न होते हैं |

प्रतिचयन(Sampling) :-

अनुसंधान की स्थितियों में अनुसन्धायक को अधिकतर अप्रबंधनीय समष्टि का सामना करना पड़ता है जहाँ संख्या बहुत बड़ी होती है | ऐसी स्थिति में प्रतिचयन मे भिन्न –भिन्न विधियों आवश्यकता अनुसार अपनाया जा सकता है जैसे यादृच्छिक, क्रमबद्ध , बहुस्तरीय , बहुतलीय , सामूहिक निर्णय या नियत मात्रात्मक , अनुसंधायक को अपनी विधि निश्चित करने से पहले सभी विधियों के परिक्षेत्र व सीमाओं से पूर्णत: परिचित होना चाहिए | अनुसंधान प्रस्ताव में समष्टि का उल्लेख होना चाहिए जिसमें से अनुसंधायक परिदर्श लेगा और उसे उस विधि का भी वर्णन करना चाहिए जिसके द्वारा वह परिचयन करेगा |

उपकरण (Tools) :-

अध्ययन के लिए साक्ष्य या आंकड़ो के संग्रहण के लिए अनुसन्धायक को कुछ परीक्षण यन्त्र व कुछ अन्य उपकरण जैसे बुद्धिपरीक्षण , अभिक्षमता परीक्षण , उपलब्धि परीक्षण , व्यक्तित्व की तालिका, प्रेक्षण , साक्षात्कार , प्रश्नावली , अनुमतांक स्केल का प्रयोग करना होता है | उसे इन सभी उपकरणों के विकास व प्रयोग में निपुण होना चाहिए और प्रत्येक उपकरण के गुण एवं अवगुण का ज्ञान होना चाहिए |

अनुसंधान प्रस्ताव में आँकड़े एकत्रित करने हेतु किसी उपकरण विशेष को चुनने के कारणों का विवरण भी होना चाहिए | उसमें मानकीकृत उपकरणों की विश्वसनीयता व वैधता पर भी उपलब्ध साक्ष्य का उल्लेख आवश्यक है | उपयुक्त मानकीकृत यंत्रो को चुनने में अनुसन्धायक को परीक्षण विकास पर मानसिक माप वार्षिक पुस्तिकाएं (ब्यूरोज) , भारतीय मानसिक माप वार्षिक पुस्तक (NCERT) और अन्य ऐसे ही साहित्य की सहायता लेनी चाहिए | अगर वह अपने उपकरणों का स्वयं निर्माण कर रहा हो तो उनके विकास की विधि का भी विवरण देना चाहिए |

आँकड़े उपचार की प्रक्रियाएं (Procedure for treating data) :-

इस भाग में अनुसंधायक आकड़ो की व्यवस्था , विश्लेषण व व्याख्या का वर्णन करता है | अनुसंधान प्रस्ताव में, गुणात्मक व परिमाणात्मक (सांख्यकीय) तकनीकों व उन तकनीकों को प्रयोग करने के पीछे विवेक का विवरण देना चाहिए | ऐतिहासिक अनुसंधान में यह भी आवश्यक है कि उन आतंरिक व बाहरी आलोचनाओं की विधि पर भी प्रकाश डाला जाए जो आंकड़ो के विश्लेषण से जुड़े होंगे | अभिलेखों के अध्ययनो में अंतर्वस्तु के विश्लेषण का तरीका भी अनुसंधान प्रस्ताव में अंकित होना चाहिए |

सन्दर्भ पुस्तकें (Bibliography):-

प्रत्येक अनुसंधान प्रस्ताव में , अनुसंधायक को पुस्तकों , जर्नलों व अन्य प्रलेखों की सूची देनी चाहिए जिन्हें उसने समस्या के चयन में प्रयोग किया है और अध्ययन में प्रयोग करेगा |

अवधि अनुसूची (Time Schedule):-

अनुसंधायक को अध्ययन निर्धारित समय में पूरा करने के लिए यथार्थ समयावधि निश्चित कर देनी चाहिए | सम्पूर्ण अध्ययन को कई भागों में विभाजित कर , प्रत्येक भाग के पूरा होने की तिथियाँ निर्धारित कर देने से अनुसंधायक को अपना समय व्यवस्थित रूप से प्रयोग करने में सुविधा होती है |

बजट अनुसूची (Budget Schedule):-

सरकार, निजी या स्वायत्त संघठनों को वित्तीय सहायता हेतु प्रेषित किये जाने वाले अनुसंधान प्रस्ताव भी सम्मिलित होना चाहिए जिसमें यात्रा, टाईप ,छपाई , प्रतिलिपिया करने , साज समान, यन्त्र , पुस्तकें व अन्य सामग्रियों पर होने वाले व्यय का अनुमान दिया गया हो |

परिशिष्ट (Appendix) : शोध प्रस्ताव में परिशिष्ट का होना आवश्यक है, इसमें उन सभी सामग्रियों की सूची होती है जिसे शोध में उपयोग किया जाना है इसमें उपयोग में लाये जाने वाले परीक्षण तथा मापनी का एक एक कापी , उद्दीपन सामग्रियों तथा उपकरणों की सूची तथा मानक निर्देश की सूची आदि होती है | स्पष्ट हुआ कि किसी शोध प्रस्ताव के बहुत से चरण होते हैं | इन चरणों को ध्यान में रखकर यदि शोध प्रस्तावकर्ता शोध प्रस्ताव तैयार करता है, तो वह निश्चित रूप से एक उत्तम शोध प्रस्ताव कहलायेगा |

अभ्यास प्रश्न

1 शोध प्रस्ताव से आप क्या समझते हैं ?

2 शोध प्रस्ताव की आवश्यकता क्यों होती है ?

3 शोध प्रस्ताव के आधारभूत तत्वों की व्याख्या करें |

4 शोध प्रस्ताव के महत्व पर प्रकाश डालें |

19.4 सारांश (Summary)

सामान्यतः शोध प्रस्ताव से तात्पर्य एक ऐसे प्रस्ताव से होता है जिसमें शोधकर्ता किसी समस्या समाधान के लिए विशेष कार्यविधि, सम्भावित समय एवं संभावित धन व्यय आदि का उल्लेख करता है | बहुत सारे संस्थान यह चाहते हैं कि शोध कार्य प्रारम्भ करने के पहले शोधकर्ता एक शोध प्रस्ताव दे ताकि प्रोजेक्ट का मूल्यांकन किया जा सके और उसकी अंतिम मंजूरी दी जा सके | शोध प्रस्ताव को सामान्यतया निम्न चरणों के आधार पर तैयार किया जाता है -

1:- शीर्षक (Title), 2:- समस्या का प्रकथन (Statement of the problem) , 3:- सम्बंधित साहित्य कि समीक्षा (Review of Related Literature) 4:- परिकल्पनाएँ (Hypothesis)5:- अध्ययन की सार्थकता (Significance of the study) 6:- पदों व संकल्पनाओं की परिभाषा (Definition of terms and Concepts) 7:- अध्ययन की सीमाओं का परिसीमन (Delimitation of the study) 8:- आधारभूत कल्पनायें (Basic Assumption) 9. उपकरण (Tools)10. आँकड़े संग्रहण की प्रक्रियाएं (Procedures for collecting data)11. आँकड़े उपचार की प्रक्रियाएं (Procedure for treating data)12. सन्दर्भ पुस्तकें (Bibliography) 13.अवधि अनुसूची (Time Schedule) 14 परिशिष्ट (Appendix)

19.5 शब्दावली (Glossary)

- **शोध प्रस्ताव :** शोध कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व शोधकर्ता एक शोध प्रस्ताव तैयार करता है जिसमें किसी शोध समस्या के समाधान के लिए विशेष कार्यविधि , संभावित समय एवं संभावित धन का व्यय आदि का उल्लेख रहता है | इसी के आधार पर शोध प्रस्ताव का

मूल्यांकन आदि होता है तथा उसको मंजूरी मिलती है | शोध प्रस्ताव का कोई सार्वत्रिक रूपरेखा (Universal Outline) तो नहीं है परन्तु कोई भी शोध प्रस्ताव में कुछ विशेष चरणों का उल्लेख अवश्य ही होना चाहिए |

- **शोध समस्या** : शोध समस्या दो या दो से अधिक चरों के बीच एक प्रश्नात्मक वाक्य या कथन (interrogative sentence or statement) होता है |
- **परिकल्पना :** दो या दो से अधिक चरों के बीच संभावित संबंधों के बारे में बनाए गए जांचे जाने योग्य कथन को परिकल्पना कहते हैं |
- **सीमांकन :** सीमांकन से तात्पर्य आध्यायण के चारों तरफ घेरा लगाने से है | अध्ययन से प्राप्त तथ्य किन व्यक्तियों पर लागू होगा तथा उस विशिष्ट प्रतिदर्श के बाद निष्कर्ष को दूसरों के ऊपर सही नहीं माना जाएगा | इसी प्रक्रिया को सीमांकन कहा जाता है |

19.6 निबंधात्मक प्रश्न

1. अनुसंधान प्रस्ताव क्या होता है , विस्तार से समझाएं |
2. अपनी पसंद के किसी मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में एक अनुसंधान प्रस्ताव बनाए | उसमें अपने विषय का महत्व भी बताएं |
3. शोध प्रस्ताव तैयार करने में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया का विवरण दीजिए |
4. शोध प्रस्ताव तैयार करने के समस्त चरणों की व्याख्या करें |

19.7 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची(Suggested Readings)

- Best, John W. , Kahn J James (2002)Research In Education, Allyn & Bacon; 9th Edition.
- Kerlinger, F.N. (1986) Foundation of Behavioral Research Holt, Rinehart and Winston, Inc., American Problem Series, New York, NY
- कपिल ,डा० एच० के ० (2010): अनुसंधान विधिया – व्यवहारिक विग्रानो में , हर प्रसाद भार्गव , पुस्तक प्रकाशक ,4/230, कचहरी घाट , आगरा |
- त्रिपाठी , जगपाल (2007): मनोविज्ञान एव शिक्षा में शोध पद्धतिया , एच० पी० भार्गव बुक हाउस , 4/230, कचहरी घाट आगरा |
- त्रिपाठी , प्रो० लाल बचन एव अन्य (2008): मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतिया, एच ० पी० भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा|
- सिह, अरुण कुमार (2009): मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ , मोतीलाल बनारसी दास , पटना एवं वाराणसी |

- सिंह, अरूण कुमार, (2001) शिक्षा मनोविज्ञान, पटना, भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, वाराणसी, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) उच्चतर मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- Goode, W.J.&Hatt, P.K.(1981): Methods in Scoial Research.
- Festinger and Katz: Research method in Behavioural Sciences .
- Mc Guin, F.J.(1990): Experimental Psychology .
- Wiersma, W.,& Jurs, S.G.(2009) Research Methods in Education: An Introduction. New Delhi: Pearson Publication

इकाई - 20

शोध प्रतिवेदन लेखन

(Writing a Research Report)

इकाई की रूपरेखा

20.1 प्रस्तावना
20.2 उद्देश्य
20.3 शोध प्रतिवेदन का प्रारूप
20.4 प्रारंभिक खंड
20.5 प्रतिवेदन का मुख्य भाग
20.6 लेखन शैली
20.7 शोध रिपोर्ट लिखने की शैली के कुछ सामान्य नियम
20.8 सारांश
20.9 शब्दावली
20.10 निबंधात्मक प्रश्न
20.11 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची

20.1 प्रस्तावना (Introduction)

इससे पूर्व की इकाई में आपने शोध प्रतिवेदन के प्रारूप के बारे में जानकारी प्राप्त की | साथ में अपने यह भी जानकारी प्राप्त की कि इसकी रचना के लिए हम किन चरणों से होकर गुजरते हैं | प्रस्तुत इकाई में हम शोध प्रतिवेदन कैसे लिखा जाता है, के बारे में पढेंगे | किसी भी समस्या पर शोध (Research) करके उसका निष्कर्ष निकाल लेना ही महत्वपूर्ण नहीं होता है ,बल्कि उसे एक वैज्ञानिक तरीके से प्रतिवेदित करना भी उसका मुख्य उद्देश्य होता है | प्रतिवेदन तैयार करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक होता है कि उसके प्रस्तुति करण का स्वरूप इतना विस्तृत न हो कि उसमें अनावश्यक सूचनाएं भर जाऐ और यह भी ध्यान रखना चाहिये कि इतना संक्षिप्त भी न हो कि उसमें आवश्यक सूचनाएं आने से रह जाये | इसलिए यह आवश्यक है कि प्रतिवेदन इस प्रकार का हो कि उसमें संघटित रूप से शोध से सम्बंधित सभी आवश्यक सुचनाये अवश्य आ जाये | किसी शोध के प्रतिवेदन में अन्य बातो के अलावा स्पष्टता ,यथार्थता तथा संक्षिप्तता तीन प्रमुख होते हैं | किसी भी मनोवैज्ञानिक शोध वैज्ञानिक ढंग प्रतिवेदित करने के लिए अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ ने जो प्रारूप तैयार किया है वह ठीक है | भारतीय मनोवैज्ञानिक भी इसी प्रारूप का उपयोग शोध प्रतिवेदन लिखने में कर रहे है |

20.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- शोध प्रतिवेदन कैसे लिखा जाता है ,इसके बारे में जान सकेंगें |
- शोध प्रतिवेदन लिखने के बारीकियों को समझ सकेंगे |
- शोध प्रतिवेदन लिखने में भाषा के महत्व को समझ पायेंगे |
- शोध प्रतिवेदन लिखने में कौन –कौन सी सावाधानियाँ रखनी चाहिए इसको जान पायेंगे |

20.3 शोध प्रतिवेदन का प्रारूप (Format of Research Proposal)

मनोवैज्ञानिक संघ ने शोध प्रतिवेदन लिखने हेतु एक प्रारूप दिया है जिसका अनुपालन भारतीय मनोवैज्ञानिक भी अपने शोध को उसी ढंग से प्रकाशित कर रहे है |इस प्रारूप को ध्यान में रखते हुए मनोवैज्ञानिक शोध को हम निम्नलिखित भागों में बांटकर प्रस्तुत कर सकते हैं –

प्रारंभिक खंड(Preliminary Section)

1. आवरण पृष्ठ (Cover Page)
2. प्रस्तावना
3. सारणियों की सूची
4. आरेखों की सूची

प्रतिवेदन का मुख्य भाग (Main Body of the Text)

प्रस्तावना

1. समस्या का कथन
2. सम्बंधित साहित्य का सर्वेक्षण
3. समस्या की सार्थकता
4. अध्ययन का परिसीमन
5. परिकल्पनाओं का कथन
6. महत्वपूर्ण पदों की परिभाषा

अध्ययन की अभिकल्पना

1. प्रयुक्त प्रक्रियाएं
2. आँकड़ों के स्रोत
3. आंकड़ें संग्रहण के यन्त्र
4. प्रतिचयन एवं आंकड़ें संग्रहण की विधियाँ

आँकड़ों का विश्लेषण व व्याख्या

सारांश व निष्कर्ष

1. समस्या व प्रक्रियाएं
2. प्रमुख परिणाम व निष्कर्ष

3. शोध के लिए सुझाव

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ग्रन्थ सूची
2. परिशिष्ट

अभ्यास प्रश्न

1 शोध प्रतिवेदन का प्रारूप लिखें |

2 शोध प्रतिवेदन लिखने के महत्वपूर्ण चरणों के बारे में बताएं |

20.4 प्रारंभिक खंड (Preliminary section)

1. **आवरण पृष्ठ (Title Page)**: इसमें सामान्यत: निम्न सूचना रहती है –
   1. **अध्ययन का शीर्षक** : मनोवैज्ञानिक शोध का शीर्षक एक पृष्ठ पर अलग से लिखा जाना चाहिए | शीर्षक के नीचे शोधकर्ता का नाम था उसके संस्थान जिससे वे सम्बंधित हैं का उल्लेख होना चाहिए |
   2. **प्रस्तावना या आमुख** : प्रस्तावना को एक अलग पृष्ठ पर लिखना चाहिए इसका कोई अलग से शीर्षक नहीं होता है | इसमें मुख्य रूप से शोधकर्ता शोध समस्या की पृष्ठ भूमि तैयार करने की दृष्टि से शोध कर्ता सम्बंधित अध्ययनों का समीक्षात्मक रूप में वर्णन करता है | शोध के उद्देश्य को परिकल्पना के रूप में उल्लेख किया जाता है | शोध में एक या एक से अधिक परिकल्पना हो सकती है |
   3. **सारणियों की सूची** : सारणियों की सूची प्रदान की जाती है |
   4. **आरेखों की सूची :** : आरेखों की सूची प्रदान की जाती है |

अभ्यास प्रश्न

1 प्रस्तावना से आपका क्या तात्पर्य है ? स्पष्ट करें |

2 आवरण पृष्ठ पर कौन –कौन से सूचनाएं रहनी चाहिए ?

20.5 प्रतिवेदन का मुख्य भाग (Main Body of the Report):

प्रस्तावना या आमुख (Introduction) : प्रस्तावना को एक अलग पृष्ठ पर लिखना चाहिए इसका कोई अलग से शीर्षक नहीं होता है | इसमें मुख्य रूप से शोधकर्ता शोध समस्या की पृष्ठ भूमि तैयार करने के लिए शोध कर्ता सम्बंधित अध्ययनों का समीक्षात्मक रूप में वर्णन करता है | शोध के उद्देश्य को परिकल्पना के रूप में उल्लेख किया जाता है | शोध में एक या एक से अधिक परिकल्पना हो सकती है |

अध्ययन की अभिकल्पना (Design of the Study) : इस खंड में अध्ययन की अभिकल्पना को विस्तार से समझाया जाता है | इसमे अध्ययन के लिए आवश्यक प्रकार के आँकड़ों की प्रकृति ,

उनके संग्रहण में प्रयुक्त औजार व युक्तियां और उनके एकत्र करने की विधि के विषय में लिए गए निर्णयों का व्यापक वर्णन होता है | अनुसंधान समष्टि की परिभाषा , प्रतिदर्श के साइज की युक्ति संगति , प्रतिचयन की विधि , उन व्यक्तियों की संख्या जो भागीदारी के लिए तैयार ना होने के करण , अलग कर दिए गए या जिन्होंने अध्ययन के विभिन्न चरणों में भाग नहीं लिया और क्यों, कहाँ ,कब और किस प्रकार के आकडें संग्रहित किये गए ;आँकड़ों के एकत्र करने में प्रयुक्त औजार व युक्तियां और उनकी विश्वसनीयता व वैधता ;प्रयोग की विधि व साथ में कल्पनाओं का विवरण, वर्गीकरण ,चरों का वर्गीकरण व हेरफेर ,उपचरों की प्रकृति , परीक्षार्थियों को दिए गए निर्देश , साक्षात्कार कर्ताओं व प्रेक्षकों की विशेषताए और उन्हें दिए गए प्रशिक्षण के प्रकार , आँकड़ों के किन –किन प्रकार के विश्लेषण किये गए , अपनाई गयी सांख्यकीय विधियाँ और उनको चुनने के कारण , और आँकड़ों को किस प्रकार व्यवस्थित कर विश्लेषण व व्याख्या के लिए प्रस्तुत किया जायेगा , आदि का उल्लेख करता है |

आँकड़ों का विश्लेषण व व्याख्या (Analysis and interpretation of the data):- इस भाग में शोध कर्ता समस्या ,परिणाम तथा प्राप्त निष्कर्षों का उल्लेख करता है | इसमें शोध कर्ता शोध से प्राप्त आंकडों की व्याख्या करता है | वर्तमान शोध के परिणाम पहले के परिणामों से मेल खाते हैं कि नहीं या उनसे भिन्न है | शोध परिकल्पनाओं की पुष्टि हो रही है कि नहीं | यदि शोध में परिकल्पनाओं की पुष्टि नहीं हो रही है तो उन कारणों पर भी प्रकाश डाला जाता है कि जिससे ऐसा हुआ हो | विवेचन वाले इस भाग में प्राप्त परिणामों का सामान्यीकरण किन –किन के ऊपर किया जा सकता है ,इसमें जो परिसीमाएं होती हैंउनका भी वर्णन किया जाता है | उन चरों का भी उल्लेख किया जाता है जिनका नियंत्रण नहीं किया जा सकता है | यदि शोध प्रारूप या कार्य विधि में कोई परिवर्तन किया गया है तो उसका भी उल्लेख इस भाग में किया जाता है | इस भाग में शोध किस विषय से सम्बंधित है तथा उसके प्राप्त परिणाम या निष्कर्ष क्या है का भी वर्णन किया जाता है | यह खंड अनुसंधान प्रतिवेदन का ह्रदय है | आँकड़ों का विश्लेषण व व्याख्या या तो पृथक अध्यायों में प्रस्तुत किये जा सकते हैं या समाकलित करके एक ही अध्याय में | आँकड़ों विषयक चर्चा के साथ सारणियो व आरेखों में प्रस्तुत किये जाते है | सारणियों व आरेखों का निर्माण व सूची इस प्रकार होनी चाहिए कि वह सार्थक संबंध स्पष्ट करे और स्वतः स्पष्ट हो |जटिल व लंबी सारणियों को परिशिष्ट में देना चाहिए अन्यथा विषय का चर्चा का क्रम टूट जाता है | आँकड़ों के विषयक चर्चा में , सारणियो व आरेखों में दी हुई विस्तृत सूचना को प्रतिवेदन में दोहराना नहीं चाहिए | उसमें केवल महत्वपूर्ण तथ्यों व संबंधो कोइंगित करना चाहिए जिससे आँकड़ों को अर्थ मिल सके और उनके सम्बन्ध में कुछ व्यापकीकरण बन सके |

सूत्र व सांख्यकीय प्रक्रियायें जिनका आँकड़ों के विश्लेषण में प्रयोग किया गया हो , स्पष्ट निर्दिष्ट और व्याख्यायित होनी चाहिए | सांख्यकीय सूचना योग , अनुपात , समानुपात या प्रतिशत , आवृत्ति वितरण , मध्य प्रसरण या मानक विचलन , सहसंबंधगुणांक व प्रयुक्ति के रूप में प्रस्तुत की जा सकती है | किसी विशेष सार्थकता परीक्षण के चयन के कारण , उनके प्रयोग की परिकल्पनायें और परिणामों पर पहुँचने के लिए चुने हुए विश्वास्यता स्तर सावधानी से प्रस्तुत किये जाने चाहिए| अप्रत्याशित संबंधो या अप्रत्याशित प्रवृतियों के रूप में अकस्मात उत्पत्तियों को पूर्ण रूप में प्रतिवेदित करना चाहिए | अनुसंधान अभिकल्पना ; औजार , तकनीकों या समष्टि की कमियों , जो

अध्ययन की अवधि में प्रगट हुई हो , स्पष्ट चर्चा होनी चाहिए , और साथ ही वह रीति जिसमें घटकों ने अध्ययन के परिणामों पर प्रभाव डाला हो |

सारांश एवं परिणाम (Summary and Conclusion) – इस भाग में शोध कर्ता यह लिखता है प्रयोग या शोध में किस प्रकार के प्रदत्त (तथ्य) प्राप्त हुए | आंकड़ों के विश्लेषण में किस प्रकार की सांख्यकीय विधियों का उपयोग किया जाता है | लिखते समय यह ध्यान देना आवश्यक होता है कि प्राप्त आंकड़ों के आधार पर किसी भी आधार पर किसी भी प्रकार के अनुमान तथा निष्कर्ष का उल्लेख नहीं होना चाहिए | निष्कर्षों को संक्षिप्त रूप में परीक्षित परिकल्पनाओं से सीधा सम्बंधित करते हुए प्रस्तुत किया जाता है | वह यह घोषणा करते हैं कि अध्ययन के परिणाम परिकल्पनाओं को स्वीकार करते है या अस्वीकार | यह निष्कर्ष वर्तमान सिद्धांत में उठाये गए प्रश्नों के उत्तर प्रदान करते हैं और उसमें संशोधन के सुझाव देते हैं | इसके अतिरिक्त अनुसंधायक उन अनुत्तिरक प्रश्नों की सूची बना सकता है जो अध्ययन की अवधि में उठे और जिनके लिए वर्तमान समस्या की जाँच के विस्तार से बाहर आगे अनुसंधान की आवश्यकता है | यदि परीक्षण के अधीन क्षेत्र में आगे अनुसंधान लाभदायक प्रतीत नहीं होता है और समस्या के लिए नए उपगमन की आवश्यकता है तो अनुसंधान को सुझाव देने चाहिए | सारांश यह है कि निष्कर्षों की चर्चा व प्रस्तुति से पाठक को पूर्णता व निश्चित लाभ का आभास होना चाहिए |

सन्दर्भ खंड (Reference Section)– इस खंड में ग्रन्थ सूची व परिशिष्ट होते हैं | इस भाग में उन अध्ययनो या लेखकों को आकारादि क्रम से लिखा जाता है जिन्हें अध्ययनो में शामिल किया गया था | सन्दर्भ को विशेषकर इस प्रकार लिखते हैं –

Anderson , R.L.and Baneroft ,T.A.(1952). Statistical Theory in Research .New York :Mc Graw Hill .

Cohen, L.(1955) . Statistical Methods for Social Scientists . An Introducation , N.J. Prentice Hall Inc.

D'Amato M.R.(1970) Experimental Psychology , New York :Mc Graw Hill.

ग्रन्थ सूची के बाद परिशिष्ट दिया जाता है | इसमें शोध कर्ता शोध में प्रयुक्त परीक्षणों,विस्तृत सांख्यकीय गणना आदि को रखता है |

अभ्यास प्रश्न

1 अध्ययन की अभिकल्पना पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें |

2 आँकड़ों का विश्लेषण व व्याख्या (Analysis and interpretation of the data) का शोध प्रतिवेदन में क्या स्थान होता है ? स्पष्ट करें |

3 सारांश एवं परिणाम (Summary and Conclusion) का शोध प्रतिवेदन में क्या स्थान होता है? स्पष्ट करें |

20.6 लेखन शैली (Style of Writing)

भाषा :- (Language):- यदि किसी उत्कृष्ट वैज्ञानिक जाँच के प्रकरण और परिणाम दूसरों को प्रभावी ढंग से संचरित नहीं होते तो वह निरर्थक है | कामवेल (1969) दुदैल (1976)तथा

तुराबियन (1976) अनेक शैली मैनुअल प्रदान किये हैं | उनमें से किसी एक को अपना कर अनुसंधायक सम्पूर्ण प्रतिवेदन में उसी का अनुसरण कर सकता है | वैज्ञानिक प्रतिवेदन में परिकल्पनाओं का स्पष्ट प्रकथन , प्रक्रिया का भावुक वर्णन न होकर संगत व वस्तुनिष्ठ प्रस्तुति की आवश्कता होती है | अनुसंधान प्रतिवेदन प्रायः ज्ञानी व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाती है जो सदा तर्क प्रक्रिया में दोष खोजते हैं | यह भी संभव है कि पाठक प्रयोग या अभिकलन दोहरा कर परिणामों को जाँचना चाहे | इस स्थिति से निपटने के लिए अनुसंधान प्रतिवेदन इतनी सावधानी से प्रस्तुत किया जाना चाहिए कि वह अन्य पाठकों की क्रांतिक विद्वता के परीक्षण में खरा उतरे | अनुसंधान प्रतिवेदन का प्रस्तुतीकरण रचनात्मक , तर्क संगत व संक्षिप्त होना चाहिए , जिसमें यथासंभव सरल सामान्य शब्दों व वाक्यों का प्रयोग होना चाहिए | उसकी भाषा नियमनिष्ठ व स्पष्टवादी होनी चाहिए | अशिष्ट कहावत या अविनीत शब्दावली न हो | व्यक्तिवाचक सर्वनामों जैसे मैं , आप , मेरा , हमारा , और हमे का प्रयोग नहीं होना चाहिए | उदाहरण के लिए यह कहने के स्थान पर 'मैंने सामान्य विज्ञान का उपलब्धि परीक्षण विद्यार्थियों के दोनों वर्गों पर संचालित किया' निष्क्रिय वाक्य, "विद्यार्थियों के दोनों वर्गों पर सामान्य विज्ञान का उपलब्धि परीक्षण संचालित किया गया" का प्रयोग वर्णनात्मक होगा | 'अनुसंधान कर्ता ' या 'जाँचकर्ता ' जैसे शब्दों के प्रयोग कर , व्यक्ति वाचक सर्वनाम के प्रयोग से बचाना चाहिए |

अभ्यास प्रश्न

1 शोध प्रतिवेदन की लेखन शैली कैसी होनी चाहिए ?

2 शोध प्रतिवेदन की भाषा कैसी होनी चाहिए ?

20.7 शोध रिपोर्ट लिखने की शैली के कुछ सामान्य नियम (Some fundamental rule of style of writing a research report)

किसी भी वैज्ञानिक शोध के रिपोर्ट लिखने का उद्देश्य मूलतः यह होता है कि पाठक किये गए अध्ययन को ठीक से समझे , उसका मूल्यांकन करें तथा उस अध्ययन का यदि चाहे तो वह उसका वार्णिक प्रतिकृति (Literal Replication) कर सके | इसके लिए यह आवश्यक है कि वह शोध रिपोर्ट लिखने के कुछ आधार भूत नियमों का पालन करे | इन नियमों में निम्नांकित प्रमुख हैं –

1. शोध रिपोर्ट में वैसा शोध का वर्णन किया जाता है जो पूरा हो चुका होता है | अतः इसे भूतकाल में लिखा जाता है | इसके अपवाद के रूप में मात्र वैसा निष्कर्ष जो वर्तमान या भविष्य की परिस्थिति के लिए लागू होता है , को ही वर्तमान काल में लिखा जाता है |
2. उन सभी स्रोतों का उल्लेख करें जिनसे आपने समस्याओं या तथ्यों को लिया है | इसमें लेखक का अंतिम नाम तथा वर्ष का उल्लेख होना चाहिए | जब दो या दो से अधिक लेखकों द्वारा प्रकाशित किसी शोध पात्र से तथ्यों या सूचनाओं को लिया जाता है तो उसमें प्रथम बार तो सभी नामों का उल्लेख किया जाता है औएर उसके बाद सिर्फ प्रथम लेखक तथा लैटिन सूक्ति का उपयोग किया जाता है |
3. जहाँ तक संभव हो रिपोर्ट में किसी अन्य स्रोत से प्रत्यक्ष कुछ उद्धृत नहीं करना चाहिए बल्कि उसमें उद्धृत विचारों को अपनी भाषा शैली में लिखनी चाहिए | शोध रिपोर्ट में

लेखक को किसी दूसरे अध्ययन न कि उसके लेखक को संबोधित करते हुए तथ्यों को लिखना चाहिए |

4. अपने अध्ययन को अन्य अध्ययनों से भिन्न करने के लिए " This Study" या "The Present Study" का उपयोग किया जाना चाहिए | परन्तु "This Study" या "The Present Study" का प्रयोग मानव क्रिया के रूप में नहीं होना चाहिए यथा "This Study Attempted to show……." नहीं लिखा जाना चाहिए |
5. संकेताक्षरों के प्रयोग को कम से कम करना चाहिए | शोध रिपोर्ट में संकेताक्षरों का प्रयोग मात्र तीन परिस्थितियों में युक्तिसंगत माना गया है |

   अ. अगर पद ऐसा है जिसमें कई शब्द समिलित हुए हो या उसमें बहुत सारे अक्षर सम्मिलित हुए हों या उसमें बहुत सारे अक्षर सम्मिलित हों |

   ब . अगर पद का उपयोग रिपोर्ट में बहुत बार हुआ हो |

   स. अगर शोध में बहुत सारे संकेताक्षरों का प्रयोग आवश्यक हो , तो प्रत्येक सहशब्द के प्रथम अक्षर को मिलाकर इसे तैयार किया जा सकता है | पूरे पद को प्रथम बार परिभाषित करके फिर उसके बाद उसका संकेताक्षर का उपयोग किया जा सकता है |

6. जहाँ तक संभव हो स्वीकृत मनोवैज्ञानिक पदों का ही उपयोग किया जाना चाहिए | इसके अतिरिक्त संक्षिप्त संकेत तथा अपभाषी पदों का उपयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि इसका अर्थ दूसरे देशों के लोगों द्वारा संभवतः नहीं समझा जा सकता |

7. शोध रिपोर्ट में शून्य से नौ तक की संख्याओं के लिए शब्दों का प्रयोग किया जाना चाहिए तथा उससे अधिक की संख्याओं के लिए अंकों का प्रयोग किया जाना चाहिए | परन्तु अंक का प्रयोग किसी भी आकार संख्या के लिए हो सकता है यदि–

   अ. शोधकर्ताओं को संख्या का एक क्रम लिखना हो और उसमें कम से कम 10 या उससे अधिक हो |

   ब . संख्या में दशमलव हो या सांख्यकीय परिणाम का वर्णन हो या कोई यथार्थ मापन के सन्दर्भ में लिखा जाना हो | जैसे यह लिखा जा सकता है कि – "The five conditions with 3 individuals per condition ...."

   शोध रिपोर्ट में लिखी किसी बात की शुरुआत अंक में लिखे संख्या के साथ नहीं होती है |

   8. शोध रिपोर्ट में स्पष्ट शब्दों का प्रयोग किया जाना चाहिए | पूर्वाग्रहित भाषा का उपयोग नहीं किया जाना चाहिए | जहाँ संभव हो तटस्थ पदों जिसका ही प्रयोग करना चाहिए |

अभ्यास प्रश्न

1 शोध प्रतिवेदन लिखने के सामान्य नियमों की व्याख्या करें |

2 शोध प्रतिवेदन लिखने में संकेताक्षरों का प्रयोग कैसे करेंगे ?

20.8 सारांश (Summary)

किसी भी समस्या पर शोध (Research) करके उसका निष्कर्ष निकाल लेना ही महत्वपूर्ण नहीं होता है ,बल्कि उसे एक वैज्ञानिक तरीके से प्रतिवेदित करना भी उसका मुख्य उद्देश्य होता है | प्रतिवेदन तैयार करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक होता है कि उसके प्रस्तुति करण का स्वरूप इतना विस्तृत न हो कि उसमें अनावश्यक सूचनाएं भर जाऐ और यह भी ध्यान रखना चाहिये कि इतना संक्षिप्त भी न हो कि उसमें आवश्यक सूचनाएं आने से रह जाये | मनोवैज्ञानिक संघ ने शोध प्रतिवेदन लिखने हेतु एक प्रारूप दिया है जिसका अनुपालन भारतीय मनोवैज्ञानिक भी अपने शोध को उसी ढंग से प्रकाशित कर रहे है | इस प्रारूप को ध्यान में रखते हुए मनोवैज्ञानिक शोध को हम निम्नलिखित भागो में बांटकर प्रस्तुत कर सकते है –

प्रारंभिक खंड(Preliminary Section)

1. आवरण पृष्ठ (Cover Page)
2. प्रस्तावना
3. सारणियों की सूची
4. आरेखों की सूची

प्रतिवेदन का मुख्य भाग (Main Body of the Text)

प्रस्तावना

1. समस्या का कथन
2. सम्बंधित साहित्य का सर्वेक्षण
3. समस्या की सार्थकता
4. अध्ययन का परिसीमन
5. परिकल्पनाओं का कथन
6. महत्वपूर्ण पदों की परिभाषा

अध्ययन की अभिकल्पना

1. प्रयुक्त प्रक्रियाएं
2. आँकड़ों के स्रोत
3. आंकड़ें संग्रहण के यन्त्र
4. प्रतिचयन एवं आंकड़ें संग्रहण की विधियां

आँकड़ों का विश्लेषण व व्याख्या

सारांश व निष्कर्ष

1. समस्या व प्रक्रियाएं
2. प्रमुख परिणाम व निष्कर्ष
3. शोध के लिए सुझाव

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ग्रन्थ सूची
2. परिशिष्ट

20.9 शब्दावली: (Glossary)

- **शोध प्रतिवेदन :** किसी समस्या का शोध करके उसके निष्कर्ष क्रियाविधि ,उद्देश्य आदि का वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करना ही शोध प्रतिवेदन कहलाता है |
- **सारांश** – शोध के उद्देश्यों , निष्कर्ष, कार्यविधि ,परिणाम आदि को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करना |

20.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. मनोवैज्ञानिक शोध रिपोर्ट तैयार करने के प्रमुख चरणों की व्याख्या करें |
2. शोध प्रतिवेदन क्या होता है ? विस्तार से बताएं |
3. शोध प्रतिवेदन की लेखन शैली कैसी होनी चाहिए ?
4. शोध प्रतिवेदन लिखने में ध्यान देनी वाली कौन –कौन सी बातें होती हैं ? प्रकाश डाले |
5. शोध प्रतिवेदन लिखने के सामान्य नियमों की व्याख्या करें |

20.11 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची(Suggested Readings)

- कपिल ,डा० एच० के ० (2010): अनुसंधान विधिया – व्यवहारिक विग्रानो में , हर प्रसाद भार्गव , पुस्तक प्रकाशक ,4/230, कचहरी घाट , आगरा |
- त्रिपाठी , जगपाल (2007): मनोविज्ञान एव शिक्षा में शोध पद्धतिया , एच० पी० भार्गव बुक हाउस , 4/230, कचहरी घाट आगरा |
- त्रिपाठी , प्रो० लाल बचन एव अन्य (2008): मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतिया, एच ० पी० भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा |
- सिह, अरुण कुमार (2009): मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधिया , मोतीलाल बनारसी दास , पटना एव वाराणसी |
- Goode, W.J.&Hatt, P.K.(1981): Methods in Scoial Research
- Festinger and Katz: Research method in Behavioural Sciences .
- Mc Guin, F.J.(1990): Experimental Psychology .
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) शिक्षा मनोविज्ञान, पटना, भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, वाराणसी, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) उच्चतर मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।